आगम के लाल छोटेलाल

समाधिस्थ आचार्य भरत सागर जी का जीवन-वृत

आशीर्वाद

प .पू . क्षमामूर्ति 108 आचार्य विशद सागर जी महाराज

लेखक

सुरेश जैन 'सरल'

-: प्रकाशक :-

विशद साहित्य केन्द्र

ग्रन्थ : **आगम के लाल छोटे लाल**
समाधिस्थ आचार्य भरत सागर जी का जीवन वृत

लेखक : **सुरेश जैन 'सरल'**

शुभआशीर्वाद : पं. पू. आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज

संपादन : **मुनि श्री विशाल सागर जी महाराज**

संयोजन : **क्षुल्लक, श्री विसोम सागर जी महाराज,**
भक्ति भारती - वात्सल्य भारती माताजी

सहयोगी : **ब्र. ज्योति दीदी, ब्र. आस्था दीदी, ब्र. सपना दीदी,**
सोनू दीदी, आरती दीदी

संस्करण : **13 फरवरी, 2016 (आचार्य श्री विशद सागर जी के 12वे आचार्य पदारोहण दिवस के अपलक्ष्य में।)**

मूल्य : 70/- रुपये (पुनः प्रकाशन हेतु)

प्राप्ति स्थल : (1) **विशद साहित्य केन्द्र**
श्री दिगम्बर जैन मन्दिर कुआँ वाल जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा), मो. 9812502062
(2) **विशद साहित्य केन्द्र, हरीश जैन**
जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561 नेहरु पाली
नियर लाल बत्ती चौक, गांधी नगर, दिल्ली
मो. 098181157971, 09136248971

प्रकाशक : विशद साहित्य केन्द्र

मुद्रक : **पिक्सल 2 प्रिंट, जयपुर**
हेमन्त जैन (बड़ागाँव धसान) - 9509529502, 9785001833

पुण्यार्जक

श्री महेन्द्र कुमार जैन-माया देवी जैन
4/106 मालवीय नगर, जयपुर, मो. - 9314606153

सुभाषचंद जैन - श्रीमती ऊषा जैन
बी-78, मॉडल टाउन, जयपुर, मो. 9414442091

डॉ. सुनील जैन-श्रीमती अनीता जैन
2/565, मालवीय नगर, जयपुर, मो. - 9414276325

रामचंद जैन-ममता जैन
15, गायत्री नगर प्रथम, एयरपोर्ट सर्किल, सांगानेर, जयपुर,
मो. 9024114288

श्री अशोक जैन - श्रीमती स्नेहलता जैन
कुमारी ईना जैन, ईतिका जैन, अभि जैन
म. नं. 72/228 विनायक पथ, पटेल मार्ग, मानसरोवर, जयपुर, फोन -
0141-2780158, 3206967, मो. 9680995125

श्री पदमचंद जैन, धीरज कुमार, नीरज पाटनी
134ए, शिवपुरी कॉलोनी, झोटवाड़ा, जयपुर, मो. 9828064835

मुक्तेर्भिन्नं भवं ज्ञात्त्वा, त्यक्तो येन महात्मना।
उद्योतितं जगत्सर्वं, तेनैव, निजतेजसा।।

– आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी

जिन महापुरुषों ने परलोक समझ लेने के साथ इहलोक की तुलना कर लेने के पश्चात, इहलोक को त्याग दिया है, उनकी पावन महिमा से यह जगतीतल जगमगा रहा है।

स्वर्गक्षेत्रस्य बीजानि, संयमेन तपोधनाः।
इन्द्रियाणि वशे येषामंकुशेन गजो यथा।।

– आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी

जो महापुरुष अपनी सुदृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा पाँचों इन्द्रियों को इस तरह बस में रखता है जिस तरह अंकुश से गजराज वशीभूत किया जाता है, यथार्थ में वही (भव्यात्मा) स्वर्ग के खेतों मे बोने योग्य बीज है।

जो तीर्थ – तीर्थ चलकर तपे और स्वतः तीर्थ हो गये उन आचार्य शिरोमणी **प . पू . 108 भरत सागर जी** एवं उनके अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, मनीषी शिष्य **प. पू. आचार्यवर्य 108 श्री विशद सागर जी मुनिराज** एवं भक्त समूह के कर कमलों में सादर–सस्नेह समर्पित।

प्राक्कथन

-सुरेश जैन 'सरल'

पुष्प में परिमल/ सुगंध की तरह संत में वात्सल्य समाया रहता है। दोनों - सुगंध और वात्सल्य - वस्तु की तरह हाथ में लेकर देखे नहीं जा सकते; किन्तु वे अनुभव में स्वयं आ जाते हैं। जिस तरह सुगंध का लाभ उद्यान में टहलने वाला व्यक्ति स्वमेव प्राप्त कर लेता है, उसी तरह संत-संगति में रहने वाले व्यक्तित्व उनका वात्सल्य पाते रहते हैं। पुष्पसुवास देकर बदले में कुछ माँगता नहीं, संत भी वात्सल्य के बदले कुछ नहीं चाहते। कई बार सुवास के कारण सुमनों को परेशानी उठाते देखा गया है, टहलने वाले उसे डाली से पृथक कर, साथ ले जाते हैं, संतों को भी ऐसी परेशानी जीवन भर झेलनी पड़ती है। जब संत से प्रभावित होकर भक्तगण उन्हें अपने नगर की ओर विहार करने को कहते हैं, तब विश्वास होता है कि उद्यान में प्रसून और आध्यात्म-क्षेत्र में 'संत ' की ये कैसी गति है, एक-सी स्थिति है।

मेरे साथ जो स्थिति बनती है, वह कुछ पृथक है, जब किसी पूजनीय-दिगम्बर-देवता से प्रभावित होता हूँ तो उन्हें अपने नगर चलने को नहीं कहता, उनका 'जीवन- चरित्र' लिखने का सद्-प्रयास करता हूँ। ले लेता हूँ कुछ महिनों के लिए 'शब्द समाधि ' और अपने दस फुट के कक्ष में बैठ जाता हूँ। पू. आचार्य 108 श्री भरत सागर जी महाराज की पावन संगति मुझे क्रमशः सोनागिर जी, सम्मेदशिखर जी कोडरमा, लोहारिया और कुचामन सिटी में, एक से तीन दिन तक मिली है, उनके दर्शन करने पर जो आत्म -तुष्टि हुई, वह अद्भुत है। वे, वर्ष क्रमशः सन् 1988,1993, 2002, 2003 और 2004 हैं। उनकी वात्सल्यमयी -छवि मेरे भीतर बहुत गहराई तक प्रवेश कर सकी है।

परम पूज्य आचार्य 108 श्री भरत सागर जी के परिचय- बिन्दु प्रज्ञालोक में, दो कतारों में स्थापित मिलतें हैं - प्रथम, पक्ष में, उन बिन्दुओं को समाहित किया गया है जिनमें उनका व्यक्त्वि ध्वनित होता है, द्वितीय पक्ष में- कृतित्व ।

व्यक्तित्व के सोपानों पर- जन्म, चौक, शिशु अवस्था, शिक्षा, वाल्यकाल, रुचियाँ, खेलकूद- आदतें, मानसिक स्तर, गुण और स्वभाव,

युवावस्था, अनुशासन, स्वात्मनुशासन, करुणा के भाव, प्रेरणा प्राप्ति के क्षण, वैराग्य की राह, वैराग्य भावोदय,गुरुदर्शन, गृह त्याग की भावना, ब्रह्मचर्य व्रत, गुरु का पावन सानिध्य, उपसर्ग पर विजय, परिषह में अविचलित, साधना का आत्मस्थ-सफर, दैनिक चर्या, गुरु की छत्र छाया में देशाटन, मुनि दीक्षा, उपाध्याय पद, आचार्य पदारोहण के क्षण और अंत में समाधि।

कृतित्व के राजपथ पर - उनका चिंतन, सर्जना, प्रभावना, प्रवचन,परामर्श, आदि सजाये गये हैं। इस खण्ड में सन्त का अनोखापन, समकालीन संतों के मध्य उनकी छवि की निस्पृहता, गुरु- भाईयों, गुरु भक्तों के प्रति वात्सल्य वर्षण और दिशा बोधी- आयाम, प्रवचन शैली का केनवास, रचना-संसार, प्रेरणा, सानिध्य से उद्भूत कार्य, गुरु के प्रति समर्पण, गुरुकुल और गुरु परम्परा का निर्वाह, शिष्यादि के प्रति पालक वृत्ति का प्रकाश देखने -पढ़ने मिलेगा।

मूलकथा में वह दृश्य- कि जब - प. पू. गुरुदेव आचार्य 108 श्री विमल सागरजी की वरदछाया उन पर से उठ गई, तब वे सब के साथ होते हुए भी 'अकेला' अनुभव कर रहे थे। गुरु-भाईयों के प्रति आस्था, समय पर उन्हें दीक्षा-व्रत और आचार्य-पद प्रदान करना, राह में आये- उपसर्गों-परिषहों को सहना और साधनारत रहना, श्रमण - संस्कृति के संरक्षक, समकालीन-समाज को उनकी देन, जो धर्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक जागृति की प्रतीक बनी, का वर्णन पठनीय है, मननीय है।

आभार के क्रम में सबसे पहले -ध्यान योगी, साहित्य मनीषी, चर्या शिरोमणी **आचार्यवर्य 108 श्री विशद सागर जी** का आभार मानता हूँ जिनके प्रेरणा-सूत्रों पर यह लेखन सम्पन्न हुआ। देश के महत्वपूर्ण कर्मठ समाजसेवियों को धन्यवाद जो प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से सहयोगी बने। संघस्थ ब्र. आस्था दीदी को भी साधुवाद जिन्होंने कथा के एक महत्त्वपूर्ण दृश्य का वर्णन किया, इस कथानक के लिए।

दि. 13 फरवरी 2014

-सुरेश जैन सरल

405 गढाफाटकए, मो.- 942541237

आ. विशदसागर जी के जबलपुर (म.प्र.) दसवें आचार्य-पदारोहण दिवस पर

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृ.क्र.
	प्राक्कथन	
	अध्याय एक :	
	व्यक्तित्व के धरातल पर आचार्य भरतसागर जी महाराज	
1.	अवतरण प्रसिद्ध पुरुष का	11
2.	शिशु कलरव	17
3.	शिक्षा	18
4.	पहला झुकाव देश -सेवा की ओर	19
5.	युवावस्था	20
6.	लोहारिया: ब्रह्मचर्य व्रत	22
7.	क्षुल्लक दीक्षा	26
8.	रास्ते का उपसर्ग	28
9.	सुजानगड़ : 1968	31
10.	टावर महाराज	33
11.	शिखर जी चातुर्मास -1972	35
12.	मुनि दीक्षा	36
13.	शिखर जी चातुर्मास -1974	39
14.	राजगृही चातुर्मास-1975	40
15.	पुन: शिखर जी -1976	41
16.	टिकैत नगर - 1977	42
17.	सोनागिर जी -1978	43
18.	मुनि भरत सागर जी का स्पष्टीकरण	44

19. विहार बुदेलखण्ड की ओर 46
20. पुनः सोनागिर - चातुर्मास 47
21. उपाध्याय-पद 48
22. चरण श्रवण बेलगोला की ओर 48
23. पोदनपुर चातुर्मास -1982 53
24. औरंगाबाद वर्षायोग -1983 55
25. गिरनार- वंदना 58
26. लोहारिया चातुर्मास - 1985 60
27. इन्दौर की ओर 62
28. फिरोजाबाद चातुर्मास -1986 64
29. प्रशांतमूर्ति - अलंकरण 65
30. जयपुर चातुर्मास - 1987 66
30. सोनागिर वर्षायोग-1990 68
31. उपाध्याय श्री में आचार्यत्व का बीज -वपन 68
32. शिखर जी वर्षायोग - 1992 71
33. विमल वियोग - 29 दिसम्बर1994 72
34. उपाध्याय श्री का आचार्य पदारोहण 75
35. झुमरी तिलैया - प्रवास 78
36. गुणावा जी, विहार 80
37. सिद्ध क्षेत्र कोल्हुआ पहाड़ 81
38. प्रथम चातुर्मास : शिखर जी 1995 82
39. सराकोद्धार 83
40. गिरीडीह - प्रवास 84
41. मंदारगिरि 85

42. प्रवास : सिद्ध क्षेत्र चम्पापुर 86
43. गया की यात्रा 90
44. हजारीबाग 91
45. कोडरमा प्रवास 91
46 शिखर जी : यात्रा और महायात्रा 91
47. चरण धनवाद की ओर 96
48. पुन: शिखर जी 97
49. धनबाद : पंचकल्याणक समारोह- 2000 100
50. गिरीडीह प्रवास -2000 101
51. शिखर जी -2000 105
52. सरिया की ओर 105
53. कोडरमा - 2001 107
54. बनारस की ओर 111
55. बाराबंकी का गौरव - 2002 113
56. लखनऊ - प्रवास 120
57. करगुवाँ जी - 2003 123
58. इंदौर की प्रभावना 124
59. लोहारिया - वर्षायोग - 2003 125
60. महामुनि श्री विशद सागर जी का संयोग : बना एक संदेशा 134
61. किशनगढ़- प्रवास - 20004 135
62. कुचामन - चातुर्मास - 2004 136
63. जयपुर - प्रवास - 2004 138
64. समाधि- दिवस समारोह बना मुनि विशद सागर जी का उत्कर्ष 138

65. मुनिवर विशद सागर जी आचार्य - पद पर प्रतिष्ठित 140
66. आचार्य श्री विशद सागर जी : परिचय के गवाक्ष से 142
67. पुनः लोहारिया प्रवास 2002 147
68. बाँसवाड़ा- प्रवास - 2005 148
69. उदयपुर - प्रवास 149
70. अणिन्दा जी - 2006 चातुर्मास से समाधि तक 150
71. श्रद्धांजलि सभा : प.पू. भरत सागर जी की 156

अध्याय- दो : कृतित्त्व

72. जैन धर्म के आलोक में मुनि परम्परा 162
73. आचार्य भरत सागर जी का कृतित्त्व 163
74. दिगम्बर परम्परा में विशिष्ट-आचार्य भरत सागरजी 164
75. समकालीन सुनीतियों के आयोजक- आचार्य भरतसागरजी 165
76. संसार से सार के यात्री - आचार्य भरत सागर जी 166
77. साहित्य की दिशा में उनका चिन्तन 167
78. पदवियों की उत्कृष्ट - चर्चा 169
79. उपसर्गों के क्रम 171
80. निमित्तश्री की अवधारणा 00
81. संस्कृति के संरक्षक की मंदिरों के प्रति दृष्टि 174
82. समकालीन साधुओं और शिष्यों के प्रति अगाढ़ श्रद्धा 175
83. समाधि साधक 176
84. शिष्य परिकर 176
85. परिचय के गवाक्ष से 186
86. संदर्भ ग्रन्थ 187

अध्याय - एक

व्यक्तित्व के धरातल पर

आचार्य भरतसागर जी महाराज

विमल सिन्धु के शिष्य का, भरत सिन्धु है नाम।
जिन के चरणों में विशद, बारम्बार प्रणाम।।

अवतरण प्रसिद्ध पुरुष का -

प्रकृति ने यह तय नहीं किया है कि महान-व्यक्तित्व का जन्म देश के किसी महानगर में हो और सामान्य व्यक्ति का साधरण बस्ती में। किसी लघु नगर का व्यक्ति कब महापुरुष बनेगा - यह भी प्रकृति के दरबार में सुनिश्चित नहीं है। तब विश्वास हुआ कि व्यक्ति किसी भी अंचल में जन्में, वह अपनी लगन, साधना, आत्मशक्ति और अपने कर्मोदय से ही 'कुछ' बनता है। ऐसी ही भावभूमि पर यह कथा जन्मी है। उन्नीसवीं सदी के पाँचवें दशक का प्रसंग है, तब लोहारिया मात्र एक ग्राम था। गाँव! राजस्थान के बाँसवाड़ा जिले का ग्राम। वहाँ कृषकगण अपने बलिष्ठ हाथों से खेतों को आलिंगन में लेकर उनसे फसलों की भेंट प्राप्त करते थे । उनकी गृहणियाँ पाषाण की चक्की का दण्ड घुमाकर अनाज से आटा पाती थीं। उनकी मनोहर चूड़ियाँ घर-आँगन-चौके, औसारे से लेकर पनघट तक, मंद-मंद ध्वनि से प्रभाती के बोलों की तरह संगीत प्रदान करती थीं। कुँआ हो या तालाब या नदी का घाट, उनकी पवित्र-मुस्कानों से सारी बस्ती महकती रहती थी। गाँव के एक हिस्से में कतिपय दुकानें थीं जहाँ व्यापारीगण अपने न्यायोचित साहस से व्यापार करते थे।

बस्ती के कतिपय घरों में सेठ-व्यापारी रहते थे तो उनसे अधिक

घरों में मजदूर और किसान। घर-घर गायों की आवाज गोकुल का वातावरण बना देती थीं। बैलों से खेतों का कार्य लिया जाता था । तब ट्रेक्टर, ट्राली और जीप आदि के दर्शन सहज नहीं थे फिर भी उनकी आवाजें दिन हो या रात ग्राम में प्रवेश कर जाती थी, कारण था गाँव से लगे हुए भू-भाग पर अनवरत खनन कार्य । वहाँ अन्य-अन्य शहरों के उद्योगपति नगर के व्यापारियों और मजदूरों के सहयोग से खदानों की प्रचुरता के कारण ही शायद, उस नगर का नाम 'लोहारिया' पड़ गया था। यों कुछ खदानों से पत्थर और मुरम भी प्राप्त की जाती थी जहाँ जैसा तल, वहाँ वैसा फल। माने -कहीं जमीन में लोहा था तो कहीं पत्थर और कहीं मुरम। उद्योग की गति बनी रहती थी। लोहारिया में दिनरात उद्यम और कृषि का बाहुल्य रहा था। बस्ती में कोई परिवार अभावग्रस्त न था। वे लोग सुखी और संतोषी। श्रम उनका शृंगार था।

देश के ऐसे , प्रिय लगने वाले ग्राम में, सैकड़ों लोग रहते थे। वहाँ ही रहते थे श्री किशन लाल जैन। वे एक कृषक भी थे तो एक लघु व्यापारी भी, दशा नरसिंहपुरा समाज के एक सीधे-सादे- भोले और ईमानदार श्रावक। उनकी धर्मपत्नि का नाम था - श्रीमति गुलाबी बाई जैन, सिर को चुनरी या साड़ी से सदा अभिमंडित रख घूँघट के भीतर से संसार को समझने - देखने की कला में वे पारंगत थीं । कभी किसी ने उनकी केशराशी नहीं देख पाई। मर्यादा की देवी कही जाने वाली गुलाबी बाई संस्कारों की खान थीं।

उनकी गृहस्थी श्रम और समर्पण के धरातल पर चलती थी, वहाँ छल, कपट, क्रोध, कषाय को स्थान नहीं था । उनके घर में जो कुछ था वह स्वयं अर्जित था असीमित था, पर खरा था। सन् 1948 की वर्षाऋतु ने गुलाबी बाई के चेहरे का गुलाबीपन बढ़ा दिया था। आस-पड़ौस की महिलाओं में कानाफूसी के साथ मुस्कानों के आदान

प्रदान हो रहे थे, वे एक दूसरे को समाचार देना चाहती थीं कि गुलाबी फिर पेट से है।

रिश्ते की वृद्धि - महिलाएँ बतलातीं - देखो तो, गुलाबी का घर गुलाबों से भरा जा रहा है । बातें चलती रहतीं । कुछ ही माह बीते होंगे कि गाँव वालों को आभास हुआ कि इस वर्ष अच्छी वर्षा हुई है। गाय-बैल मस्त हो पड़े हैं। खेतों की फसलें पूर्व से अधिक समृद्ध दिख रही हैं। मजदूरों को सहज ही बनी - मजदूरी मिल रही है। कृषकगण खेतों से चलते मुस्काते हुए खलियानों को देख रहे हैं। व्यापारी गण अपने वनज- व्यापार में सामान्य से अधिक धंधा कर प्रसन्नता बिखेर रहे हैं। शुभ संकेतों पर विचार करते हुए बुजुर्ग लोगों ने स्पष्ट किया कि अवश्य ही किसी भव्य-आत्मा का जन्म होने वाला है। भव्य-आत्मा के नाम पर औरतों को पता लगाने में बिलम्व नहीं हुआ, वे बतियाने लगीं कि गुलाबी के पैर भारी हैं, उसी के घर आयेगी भव्य आत्मा।

शुभ चर्चाओं के दौर चलते रहे। तभी अप्रैल 1949 को श्री किशनलाल जी के गृहधाम में एक पुत्र रत्न का जन्म हुआ। हिन्दी पंचागानुसार वह वि. संवत् 2002 का चैत्र माह था तिथि थी-चैत्र शुक्ल नवमी। पुष्य नक्षत्र। जैन दर्शन के प्रसिद्ध पुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी, जो जैन धर्म में बलभद्र (बलदेव) के रूप में आगमस्थ हैं, का जन्म दिवस भी यही नवमी है, जो हिन्दु धर्म के ग्रन्थों में रामनवमी से अभिहित की जाती है। संयोग देखिए कि किशनलाल के घर नवमी को जन्म लेने वाला शिशु, उस परिवार की नवमी संतान था। शिशु को मिलाकर किशनलाल और गुलाबीबाई की कुल नौ संतान हो गई थीं जिनमें से बाद में एक पुत्र शिशु अवस्था में शांत हो गया था। 8 जीवित रहे थे 6 पुत्र और 2 पुत्रियाँ। सबसे बाद में जन्में शिशु को परिवार के सदस्यगण प्रेमालाप के समय 'छोटे' कहकर सम्बोधते थे। बाद में वही नाम 'छोटेलाल' हो गया।

ब्र. करुणा जैन (शोधर्थी) का शोध-पत्र पढ़ने पर ज्ञात होता है कि लोहारिया में रहने वाले श्री किशनलाल जी अपनी धर्मपत्नि श्रीमति गुलाबी बाई सहित जीविकोपार्जन हेतु कुछ समय के लिए समीप में बसे ग्राम 'ओडा ' चले गये थे । वहाँ उन्होंने राशन की दुकान का संचालन शुरु किया था। वहाँ ही गुलाबी जी ने ठीक रामनवमी के दिन पुत्र 'छोटे ' को जन्म दिया था। यदि यह प्राप्त चर्चा, सही सिद्ध होती है तो पू. भरतसागर जी की जन्म भूमि बनने का गौरव ग्राम ओडा, जिसे स्थानीय लोग भेरजी का 'ओडा' कहते हैं को प्राप्त होता है। भौगोलिक दृष्टि से ग्राम ओडा मोटागाँव के पास है।

श्री किशन लाल की वंश-परम्परा का गौरव वर्धन इसी शिशु के माध्यम से बोना होना था। यहाँ वंश की संक्षिप्त जानकारी देना उचित मान रहा हूँ , जो इस प्रकार है- किशनलाल जी के पिता श्री का नाम श्री दीप चंद्र था। वे चार भाई थे- मोती चंद्र, दीप चंद्र, प्रेम चंद्र और सौख्य चंद्र। द्वितीय भाई दीप चंद्र के दो पुत्र हुए थे- उनमें एक किशन चंद्र थे । अन्य भाईयों के घर पुत्रियों ने जन्म लिया था।

प्रथम भाई मोती लाल जी को गाँव में विशेष आदर दिया जाता था, अत: दीप चंद्र ने अपने एक पुत्र - किशन लाल - को उन्हें गोद दे दिया। किशन उन्हीं के घर पले, पढ़े और बढ़े। चारों भाईयों का वंश- पवित्र जैन समाज और इतर समाज में स- सम्मान चर्चित था। उनका कुल था- दशानरसिंहपुरा। उनका परिवार 'कोठारी परिवार' कहलाता था। दशानरसिंहपुरा वंश इसलिए अधिक चर्चित था; क्योंकि उस वंश से अनेक श्रावक जैन संत बने थे । उनमें - मुनि बुद्धि सागर जी, आचार्य स्याद्वाद सागर जी, मुनि सूर्य सागर जी, मुनि अलेप सागर जी, मुनि नित्यानंद सागर जी, मुनि हेमंत सागर जी, मुनि अनुकम्पा सागर जी, मुनि वैराग्य सागर जी, मुनि विराग सागर एवं आर्यिका चंद्रमति जी, आर्यिका समोशरणमति जी, आर्यिका सिद्धान्तमति जी,

आर्यिका सम्मेदमति जी, आर्यिका कैलाशमति जी, आर्यिका विज्ञानमति जी (भींडर) एवं क्षुल्लक (वर्णी) धर्म भूषण महाराज के नाम प्रेरणास्पद हैं ।

यह हुई वंश वैभव की चर्चा। अब जरा लाठेहारिया के भाग्यफल पर भी दृष्टिपात करें, जिस पावनभूमि पर अनेक संतों ने जन्म लेकर इतिहास बनाया है- आचार्य भरत सागर जी, मुनि पार्श्व सागर जी, मुनि सौम्य सागर जी, मुनि देव सागर जी, मुनि अनेकान्त सागर जी, मुनि चम्पा सागर जी के नाम दृष्टव्य हैं। महिला रत्नों में आर्यिका अक्षय मतिजी (पू. भरतसागर जी के पारिवारिक जीवन की मौसी थीं), आर्यिका धवलमति जी, आर्यिका भरतेश्वरमति जी, आर्यिका नंदीश्वरमति जी (गृहस्थ जीवन में बड़ी बहिन), आर्यिका पंचमेरुमति जी, क्षु. करुण सागर जी, क्षुल्लिका भारतमति जी के शुभ नाम हैं। इसी धरती से भट्टारक यशकीर्ति जी हुए हैं जो नगर में धर्म प्रभावना के प्रथम प्रकाशक बने थे। बाल ब्रह्मचारणी संगीता जी एवं बाल ब्रह्मचारणी करुणा जी का सम्बध भी उसी नगर से जाना जाता है। ये सब लोहारिया के 'नगर गौरव' ब्र. करुणा दीदी तो योग्य लेखिका भी हैं। उन्होनें पू. भरतसागर जी के जीवन पर शोध करने का महान संकल्प धारण किया है।

हमें यह कहने में हर्ष होता है कि श्री किशन लाल के घर में जिस शिशु ने जन्म लिया है, वह, महान वंशपरम्परा का गौरववर्धन करेगा और उत्तम ग्राम लोहारिया का नाम जैन इतिहास में प्रसिद्ध करने आया है। लोहारिया का 'छोटे' देश का 'विराट' व्यक्तित्व बनेगा । अब हमें शिशु के मातृ-पक्ष की जानकारी भी समझना चाहिए। शिशु की माता जी - आदरणीय गुलाब बाई का जन्म मेवाड़ धरा के एक ग्राम में हुआ था, बाद में उनके माता पिता धरियाबाद में निवास करने लगे । गुलाब बाई की कुल तीन बहनें एवं तीन भाई थे। भाईयों में श्री

अमृतलाल, श्री पन्नालाल एवं श्री छगनलाल के नाम प्रकाश में आये तो बहिनों में श्री मति रुपारी बाई एवं श्री मति गुलाब बाई नाम की जानकारी मिलती है, मझली बहिन का नाम नहीं प्राप्त हो सका, पर इतना अवश्य जान सके कि वे परियोल ग्राम में रहती रहीं हैं।

चलें कथा की ओर। बालक की शुभ - चर्चा करें ।करें छविपान।

'छोटे' का शिशु रूप दर्शनीय था।छोटे कलेवर में, छोटे- छोटे हाथ-पाँव ।छोटे-छोटे हाथों की छोटी-छोटी अंगुलियाँ।हर अंगुली दूध मिश्री से घुली -घुली सी। यही कारण था कि 'छोटे ' अपनी अंगुलियाँ चूसता रहता था।उसे पहले मुहल्ले की महिलाएँ खिलाने - दुलराने आ जाया करती थीं, किन्तु धीरे-धीरे पड़ौसियों के बाल बच्चे भी दौड़े-दौड़े आने लगे, खिलाने और खुद खेलने लगे।

माँ के आंचल का दुग्ध छोटे को नित नई शक्ति प्रदान कर रहा था अत: धीरे-धीरे उसकी किलकारियों की गूँज बाहर तक सुनाने लगी। जल भरने जा रहीं पड़ौसनें किलकारी सुनकर वहीं खड़ी रह जातीं , सोचतीं- हाथ में घड़ा न होता तो अभी जाकर छोटे को उठा लाती आंचल से लगा लेती।

स्वर्ण सा रंग काली-काली झालर। गोल गोल जंघाएँ । छोटी-छोटी अंगुलियाँ छोटे की लघु काया को अत्यंत आकर्षक बना रहीं थी उस पर नीले रंग का झबला शिशु को अद्वितीय झलक प्रदान करता था ।माता-पिता और भाई-बहिनों के नैनों का तारा, सारे गाँव का 'नयन-तारा' बन गया था ।(झबले को बण्डी भी कहा जाता।)

चौक पर्व :- एक माह पूरा हुआ। 'चौक पर्व' का आयोजन किया गया। रिश्तेदारों की भीड़ लग गई। किशनलाल और गुलाबी बाई के पक्ष के लोग आ गये। अनेक वृद्ध महिलाएँ पृथक ।राजस्थानी परम्पराए जागृत हो उठीं ।पुरुष और महिलाओं के रंगीन कपड़े सारे

वातावरण को रंगीन बना रहे थे। घर में पिछली संतानों के लिए जो पालना आया था, उसे ठीक-ठाक किया गया, फिर उस पर मुलायम गद्दे बिछाकर 'छोटे' को लिटाया गया । सजा-धजा छोटे चुकर-चुकर अपनी मधुर अंगुलियाँ चूसता रहा। माँ को शुभ्र आटे से बनाई गई रंगोली (चौक) पर बैठाया गया। ननदों ने छोटे को उठाकर माता की गोद में लिटा दिया। सजी-धजी माता अपने शृंगार को भूलकर शिशु को सम्भालने में लगी रही। पारिवारिक महिलाओं ने चौक की रस्म अदा की। फिर सभी ने मिलकर शिशु को खिलाया और उसकी जननी को बधाईयाँ दीं। तब तक युवतियों की मंडली ने सोहर गान शुरु कर दिये महिला - कंठ से निकले गीत के स्वर आँगन से लेकर मोहल्ले तक गूँजने लगे ।

शिशु कलरव -

चौक सम्पन्न हो गया। धीरे-धीरे पाहुने अपने घरों की ओर प्रस्थान कर गए। मगर किशन जी के घर में उत्सव की धूम कम न हुई । जब भी शिशु हँसता - मुस्काता, किलकारी भरता तो समस्त जन दौड़कर उसके पास आ जाते हँस- हँसकर खिलानें लगते । दिन में दो-तीन बार एक छोटा पर्व मना लेते।

धीरे - धीरे शिशु छह माह का हो गया । हाथ पैर की कोमलता में थोड़ा-सा कड़ापन आ गया अतः लोगों में खिलाने में सुविधा होने लगी। बड़ी बात यह कि दो - दो घंटे तक खेलने - खिलाने का क्रम बना रहता शिशु कभी थकता नहीं था। घर के लोग मुस्काते रहे, शिशु चन्द्रमा की तरह नित -नित बढ़ता रहा । देखते ही देखते वह छह वर्ष का हो गया । माता-पिता सुबह शाम धार्मिक चर्चा करते और बालक में नूतन संस्कार डालने का प्रयास करते जिससे बालक संस्कारशील बन गया ।

शिक्षा -

माँ के आग्रह पर बड़े भाईयों ने छोटे का नाम प्राथमिकशाला में दर्ज करा दिया । छोटे से 'छोटेलाल' समय पर शाला जाने लगे । देखते ही देखते पहली कक्षा पार कर दूसरी में प्रवेश किया । बालक पढ़ता रहा समय वर्ष बनकर बीतता रहा, चूँकि वह पढ़ने में कुशाग्र बुद्धि था अत: पारिवारिक जन को पता न चला कि समय कैसे गुजर गया और छोटेलाल चलते-चलते पाँचवी कक्षा पूर्ण कर चुका। उसे होमवर्क /गृहकार्य , जिसे उस समय सबक कहा जाता था, समय पर करने की प्रबल भावना रहती थी अत: कभी शिक्षकगण उसे दण्डित नहीं कर पाते थे। जब छोटेलाल छठवीं कक्षा में थे तब एक दिन कोई भी छात्र घर से सबक पूर्ण करके नहीं लाया था। अत:शिक्षक को सभी पर क्रोध आ गया। उसने हर छात्र को किंचित दण्ड देना उचित समझा ताकि अगली बार से सबक अधूरा ना रहे ।शिक्षक ने बारी-बारी से हर छात्र को अपने पास बुलाया और उसकी कोमल हथेली पर एक-एक बेंत जड़ दिया। जब छोटेलाल का क्रम आया तो वे उत्तर पुस्तिका हाथ में लिए शिक्षक के समक्ष पहुँचे। शिक्षक ने ध्यान नहीं दिया कि सिर्फ छोटेलाल ही गृहकार्य पूर्ण करके लाया है, अत: उसने बेंत उठा लिया। तभी उसकी दृष्टि छोटेलाल की कॉपी पर पड़ी और एक क्षण भर को रुक गया । कॉपी देखी तो मुस्करा उठा फिर बोला जब आप सबक कर लाए हैं तो सजा पाने क्यों आ गए ? छोटे ने सहजता से उत्तर दिया मेरे सभी मित्र पिट रहे थे अत: मैंने सोचा कि उनका साथ देने के लिए मैं भी एक बेंत की मार सहूँ। शिक्षक ने छोटेलाल की मैत्री-भावना को समझ लिया अत: बेंत टेबिल पर रखकर छोटे लाल की हथेली को वात्सल्य पूर्वक सहलाने लगा। इस बीच उसने हथेली की रेखाओं से अनुभव किया कि यह बालक तो अत्यंत होनहार है, एक दिन महापुरुष बनेगा। स्कूल की छुट्टी हो गई

सभी छात्र घरों की ओर लौट गए। शिक्षक महोदय छोटेलाल के विषय में सोचने लगे- यह छात्र मेहनती और आज्ञाकारी तो है ही, स्वानुशासित भी है, इसे एकांत में बैठने से ऊब नहीं होती। अपने निश्चय के प्रतिदृढ़ रहने वाले छोटेलाल ने साल-दर-साल अच्छा अध्ययन किया फलतः समय आने पर शासकीय हायर सेकेण्डरी स्कूल लोहारिया से प्रथम श्रेणी में मैट्रिक कक्षा उत्तीर्ण करने में सफल हुआ । छोटेलाल की रुचि धीरे-धीरे उसके मित्रों की भी रुचि बन गई अतः उसके मित्र अधिक समय तक उसके साथ बने रहते थे। चूँकि उस समय देश ने कुछ ही वर्ष पूर्व स्वतंत्रता प्राप्त की थी, अतः हर नगर में देश प्रेम और देश - सेवा की लहर चल रही थी। छोटेलाल अपने राष्ट्रीय नेताओं से प्रभावित था अतः उसके मन में भी राष्ट्रप्रेम की प्रबल भावना स्थान ले चुकी थी

घर के बाहर का वातावरण उसे राष्ट्रसेवा सिखला रहा था, तो घर के भीतर का वातावरण धर्म-परायणता के बीज वो रहा था। कालांतर में छोटेलाल ने आचार्य महावीर कीर्ति जी, आचार्य धर्मसागर एवं मुनि श्री देवेन्द्र सागर जी का सान्निध्य प्राप्त किया । एक दो बार आर्यिका श्री ज्ञानमति माताजी के प्रवचन भी सुने थे, फलतः उसने अपने घर में एक स्वच्छ स्थान पर स्वाध्याय कक्ष बना लिया था। माता-पिता की प्रेरणा से शाम को प्रतिदिन भगवान महावीर की आरती किया करता था ।

पहला झुकाव देश सेवा की ओर -

बचपन से ही देश सेवा का मन था अतः युवावस्था में पहुँचते ही नगर का पुलिस अथवा फौज का सिपाही बन जाने का मन हुआ। युवावस्था होती ही ऐसी है कि युवक किसी ना किसी पर न्यौछावर होने की भावना ले आतें हैं फिर चाहे वह देशप्रेम हो या मानव-प्रेम।

हृदय परिवर्तन के लिए एक प्रेरणा काफी होती है, अतः जब चीन

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

ने भारत पर हमला बोला तो छोटेलाल की तरुणाई शाँत न रह सकी। वह सन् 1962 का वर्ष था, छोटेलाल तब मात्र 13 वर्ष के थे, अतः किशोरावस्था में ही उनका मन राष्ट्र - सेवा के लिए संकल्पबद्ध हो चुका था ।

युवावस्था -

तरुणाई के उपहार पाते ही छोटेलाल ने समय नष्ट नहीं किया और वे शीघ्रता से होमगार्ड की ट्रेनिंग में रम गए वहाँ अल्पकाल में लम्बी दौड़, तैरना और बंदूक चलाना सीख गए । एक दिन उन्होंने अपना निश्चय परिवार के समक्ष स्पष्ट कर दिया कि वे सैनिक बनकर जीवन यापन करेंगे । निर्णय सुनकर सम्पूर्ण परिवार सहित माँ का हृदय काँप गया अतः माँ ने पुत्र को समझाया- सैनिक बनकर ही देश-सेवा नहीं की जाती, अन्य प्रकार से भी देश-सेवा कर सकते हो, जो व्यक्ति निर्दोष जीवन चर्या का पालन करता है वह कभी परोक्ष रूप से महान देश भक्त माना जाता है। तुम चाहो तो अध्यात्म के क्षेत्र में भी बढ़ सकते हो,जहाँ सम्पूर्ण वातावरण अहिंसा और करुणा से दमकता रहता है। माता के द्वारा विभिन्न प्रकार से समझाने के बाद छोटेलाल ने सैनिक बनने का संकल्प छोड़ दिया, उनके स्वभाव के अनुसार उनमें पांडित्य का उद्भव होने लगा, वे प्रारंभ से ही साधु-स्वभावी थे अतः उनका मन साधु या पंडित बनने में लालायित हो पड़ा। कोई भी व्यक्ति तरुणाई में निठल्ला नहीं रहना चाहता अतः छोटेलाल किसी उद्यम से जुड़ जाना चाहते थे । उद्यम जवान व्यक्ति को आत्मसम्मान से भर देता है और उसे जीने में सुखानुभूति होती है। अतः सरकारी नौकरी की भावना त्याग कर वे नगर के ही व्यापारी के यहाँ नौकरी करने लगे। व्यापारी तेल घी की आढ़त करते थे । नगर के लोग उन्हें आदर पूर्वक सेठ जी कहते थे । छोटेलाल ने अपने कार्य

कलापों से कुछ ही दिनों में सेठजी का विश्वास अर्जित कर लिया । मगर उनका अभिप्राय किसी दूसरे विश्वास पर निर्भर था, वे चाहते थे कि देव-शास्त्र-गुरु भी मुझ पर विश्वास करें, तब मेरा जीवन सफल होगा। इसे दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि छोटेलाल भीतर ही भीतर अध्यात्म में रम चुके थे, शायद वैराग्य-पथ उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। धीरे - धीरे डेढ़-दो वर्ष का समय निकल गया। एक दिन धर्मधुरंधर कहलाने वाले तत्कालीन संत, वात्सल्य मूर्ति, परम पूज्य आचार्य शिरोमणि 108 श्री विमलसागर जी महाराज ससंघ का आगमन बाँसवाड़ा नगर में हुआ ।

छोटेलाल जी को जब तक गुरुदेव का समाचार नहीं मिला था तब तक उनका मन था वे नौकरी छोड़कर मुरैना जावें और वहाँ स्थित जैन विद्यालय से ज्ञान प्राप्त करें और जीवन को सही दिशा की ओर मोड़ें; किन्तु जब उन्हें पता चल गया कि पूज्य विमलसागर जी बाँसवाड़ा आ चुके हैं तो वे सभी योजनाएँ एक तरफ धरकर उनकी ओर जाने का मानस बनाने लगे। छोटेलाल का हृदय गद्गद् हो गया था, वे जानते थे कि गुरुदेव विमलसागर जी स्वत: एक महान विद्यालय की तरह देश में विख्यात हैं, उनसे वर्तमान जन-गण निरंतर शिक्षाएँ ले रहे हैं। वे सेठ जी से अवकाश लेकर गुरु के दर्शनार्थ बाँसवाड़ा जा पहुँचे। उन्हें देखा तो देखते ही रह गए- ऊँचा कद, मधुर मुस्कान, स्वर्ण वर्ण, तेजस्वीकांति, विशाल वक्षप्रदेश, उत्तुंग स्कंध और विराट हृदय के ध नी लगे गुरुदेव। छोटेलाल ने भरपूर छवि का पान किया, फिर गुरुदेव के चरणों में नमोस्तु किया। वे एक दिन के लिए आए थे मगर मन लौटने का न हो रहा था अत: रुके रह गए गुरु चरणों के समीप 13 दिन तक लगातार गुरुदेव के आस-पास ही बने रहे। किसी क्षण दर्शन किए, किसी क्षण वार्ता सुनी तो किसी क्षण भीड़ के कारण दूरी पर खड़े-खड़े ही नमोस्तु किया। काल लब्धि आई चौथे दिन एक ऐसा क्षण कि जब

छोटेलाल गुरुदेव के चरणों के समीप बैठकर विनत भाव से दो -शब्द बोल सके - हे गुरुदेव, मुझे अपने साथ ले चलिए, आपके श्री चरणों की सेवाकर शांति प्राप्त करूँगा ।

छोटेलाल का वाक्य सुनकर गुरुदेव मुस्कराये फिर बोले- बेटा! तेरा सोच उत्तम है, भवितव्य श्रेष्ठ है।

गुरुवर ने बेटा शब्द से संबोधन किया था जिससे युवक को उनके भीतर छुपे वात्सल्य के खजाने के दर्शन हो गए। छोटेलाल जी को लगा कि गुरुदेव ने अभी- अभी वात्सल्य से अभिषेक कर दिया है उनका तन-मन गुरुवात्सल्यता से भीग गया था। वे हो गए संघ के साथ।

गुरुदेव बाँसवाड़ा से विहार कर पारसोला पहुँचे छोटेलाल जी साथ में थे। उन्हें वहाँ नए-नए अनुभव हुए । संयोग ऐसा बना कि उन्हें दो दीक्षाएँ भी देखने मिली, जिससे उनका अनुभव बढ़ा। पहले गुरुदेव ने ब्र. कुसुम बाई को क्षुल्लिका दीक्षा दी, नामकरण किया - क्षुल्लिका 105 श्री पार्श्वमति जी । बाद में ब्र.सागरबाई को क्षुल्लिका दीक्षा दी सो वे हुई- क्षुल्लिका 105 श्री पद्मश्री माताजी। छोटेलाल जी ने दोनों दृश्य आँखों से देख लिए और सोचने लगे कि ऐसा क्षण उन्हें कब नसीब होगा।

लोहारिया : ब्रह्मचर्य व्रत -

श्री छोटलाल का ब्रह्मचर्य व्रत - गुरुदेव विमल सागर जी पारसोला को पार कर लोहारिया पहुँचे। छोटेलाल जी साथ-साथ चल रहे थे, उन्हें अपनी जन्म भूमि उस दिन नवीन क्यों लग रही है, क्योंकि वहाँ भवपार कराने वाले संत विमलसागर जी पधारे हैं। समाज के अनुरोध पर आचार्य विमलसागर कुछ दिन लोहारिया में रुके ससंघ। एक दिन विचार करने लगे कि छोटेलाल संघ के साथ हो लिया है; किन्तु इसके माता पिता अभी तक संपर्क करने नहीं आए। गुरुदेव ने

गाँव के प्रमुख लोगों से पूछा तो ज्ञात हुआ कि छोटेलाल के पिता जी काफी समय पूर्व स्वर्गस्थ हो चुके हैं, माताजी हैं किन्तु वे इस समय शिखर जी की यात्रा पर हैं । जानकारी प्राप्त कर गुरुदेव चुप रह गए। छोटेलाल शांत न बैठ सके, उन्हें तो धर्मपथ पर बढ़ने का सुखद क्षण चाहिए था, सो वे सोचने लगे- माँ घर पर होती तो पकड़कर वापस ले जाती, संघ के साथ न जाने देती और शादी-विवाह की बात चलाती अतः क्यों न उनकी गैर हाजरी का लाभ उठा लिया जावे ?

उनकी यह सोच कहती है कि मात्र 18 वर्ष की वय में छोटेलाल जी काम वासना के सैन्यदल और सेनापति को करारी मात देकर अपने जीवन से भगा चुके थे और ब्रह्मचर्य की गोद में बैठने का मन बना चुके थे ।

दूसरे दिन उन्होंने आचार्य श्री से प्रार्थना की- हे गुरुदेव मेरी माता जी की प्रतीक्षा थी वे नहीं आईं, अतः मेरे अनुरोध पर विचार कीजिए। गुरुदेव मुस्काए, फिर पूछा प्रेम से- क्या अनुरोध है तेरा ?

हे आचार्यवर! मुझे अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत प्रदान करें। सुनकर गुरुदेव मुस्कराने लगे। छोटेलाल ने उनके मन की बात ही कह दी थी अतः वे धैर्य दिलाते हुए बोले-'बस आज करूँगा। सन् 1968 का वह दिन धन्य हो गया जब लोहारिया के लाड़ले को लोहारिया के प्रांगण में गुरुदेव ने ब्रह्मचर्य - व्रत प्रदान कर दिया। तब किया भक्तों ने आचार्य- श्री का जयघोष। छोटे बन गए ब्रह्मचारी छोटेलाल जी। 'लोहारिया ' शब्द के संकेत आकाश में गूँज गए। क्या थे संकेत लोहारिया नगर के विषय में विचार करते हुए हमें यहाँ - वहाँ नहीं देखना है, मात्रा लोहारिया शब्द के हिज्जे, उच्चारण (प्रोनाउनशेषन) पर ध्यान देना है। इस नगर के चार अक्षर कुछ संकेत करते हैं।

'लो' यानी 'तक'।

'हा' यानी दुख , शोक, भय सूचक शब्द।

'रि' का स्पष्ट तौर से कोई मायना नहीं मालूम। अतः अपनी सुविधा के लिए 'रि' माने रिक्त कर लें ।'या' माने अथवा। इन चार मायनों /अर्थों पर सोचें तो प्रथम तीन अक्षर से ध्वनि सुनाई पड़ती है - जब तक आत्मा को दुख, शोक, भय से रिक्त नहीं कर लेते हैं तब तक साधना करना है। यह है- लोहारिया का प्रथम संदेश ।अब दूसरा संदेश समझें -

'लोहारिया' के 'लोहा' और 'रिया' को चिन्तन की कसौटी पर घिसें तो अर्थ निकलते हैं-

'लोहा' माने लाल रंग का बैल।

'रिया' माने अमलदारी / अधिकार।

इन मायनों पर सोचने से, संदेश मिलता है- जब तक लाल रंग के बैल (मन) की अमलदारी समाप्त न करूँ तब तक साधना करना है।

तो जिस नगर ने साधना के लिए इतने स्पष्ट दो-दो संकेत प्रदान किये हों, वहाँ का श्रावक साधना-पथ पर न चलेगा तो कहाँ चलेगा ? लोहारिया के महान श्रावक श्री छोटेलाल जी अपने नगर में छुपे संदेश के अनुसार महान साधक बने भी और बने महाचार्य। यह रहस्य भी इस कथा में पृष्ठ-दर-पृष्ठ खुलता मिलेगा।

तो कथा चल रही थी शिष्य की ।समय को गति प्रदान करते हुए आचार्य श्री ने नूतन शिष्य सहित अपने पावन चरण भवानीमंडी की ओर बढ़ा दिये। ब्र. छोटेलाल सच्चे पथानुगामी बन, साथ-साथ चले गये। हर क्षण गुरु की सेवार्थ तत्पर रहे और अपनी धर्मिक - क्रियाएँ भी साधुओं के मानिंद सम्भालते रहते थे। आचार्यश्री उनकी ओर विशेष ध्यान देते थे, उनकी कार्य शैली को मन ही मन तौलते रहते थे

संघ भवानीमंडी रुका ।कुछही दिनों में गुरुदेव ब्रह्मचारी छोटेलाल पर पूर्ण विश्वास करने लगे , हो गए उनकी क्रियाओं से संतुष्ट। अतः भवानीमंडी के एक कार्यक्रम के पश्चात उन्होंने ब्र. जी को दो प्रतिमा के व्रत प्रदान कर दिए। वहाँ का समाज भी गद्-गद् था कि 19 वर्ष का छोरा वैराग्य पथ पर निकल पड़ा है।

भवानीमंडी से चलकर आचार्य श्री अजमेर की ओर बढ़े, रास्ते में झडवास ग्राम में रुकना हुआ, वहाँ अनेक भक्तों को दैहिक, दैविक, और भौतिक कष्टों में देख जब वे आचार्य श्री से आशीर्वाद लेने आए तो उन्हें हल्दी की गाँठ और सुपारी हाथ में लेने को कहा।

देखते ही देखते उनके कष्ट दूर हो गए अतः गाँव में कई दिनों तक हल्दी, सुपारी, के चमत्कार की चर्चा होती रही। झडवास से विहार कर आचार्य श्री ससंघ अजमेर पहुँचे। समाज ने भाव भीनी आगवानी की। ब्र. जी भक्तों का उत्साह देखकर अपने गुरु पर गर्व कर रहे थे। ग्रीष्मकालीन समय चल रहा था, अतः लोगों ने आचार्य श्री को चातुर्मास हेतु श्री फल चढ़ाना शुरु कर दिए। गुरुदेव उनके भाव देखकर प्रसन्न होते और कह देते-अभी तो वर्षायोग के लिए काफी समय है, अभी से क्यों बाँधते हो। ब्रह्म. छोटेलाल जी गुरुदेव की हर वार्ता ध्यान से सुनते और अपना ज्ञान बढ़ाते। करीब एक सप्ताह बाद ब्र.जी ने गुरुदेव से दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की। गुरुदेव को समय और स्थान उचित प्रतीत हुए, अतः उन्होंने मुस्कराते हुए कहा- ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी को तेरी क्षुल्लक दीक्षा होगी, कल तुझे विशेष बातें बतलायेंगे। उनका वाक्य सुनकर ब्र. जी गद्गद् हो गए, उन्हें लगा कि गुरुदेव के करकमलों से स्वर्ग का सिंहासन दिया जा रहा है। वे विचार करने लगे कि चतुर्दशी को क्या तारीख होगी। अंगुलियों के पोर पर दिन गिने और अपने (स्व) को सूचित किया - 25 मई होगी।

क्षुल्लक दीक्षा -

ब्र. जी के ज्ञानोदय के साथ-साथ भाग्योदय का क्षण अजमेर की धरती पर उपस्थित होने वाला था, गुरुदेव की महान गुरु परम्परा में समा जाने की जो भावना लेकर आए थे,वह साकार होने वाली थी। एकदिन गुरुदेव ने प्रवचनों के मध्य समाज के समक्ष भी दीक्षा की जानकारी जाहिर कर दी अत: कार्यकर्तागण आवश्यक तैयारियाँ करने लगे। समाज का एक वर्ग उत्साह पूर्वक समर्थन कर रहा था तभी दो व्यक्ति जिन में एक श्रेष्ठी थे और द्वितीय विद्वान समय देखकर गुरुदेव से पूछने का साहस कर बैठे- 19 वर्ष का युवक क्षुल्लक चर्या का सही निर्वाह कर पाएगा क्या ? पूछ तो लिया परन्तु दोनों जन अपने ऊपर शर्मिंदा हुए कि इतने बड़े आचार्य से प्रश्न कर हमने भूल की है तब तक आचार्य श्री बोल पड़े - आप प्रश्न करके भूल कर रहे हैं, पात्र की दृढ़ता गुरु समझ लेते हैं। तभी निर्णय सुनाते हैं। दोनों व्यक्यिों के सिर झुक गए अत: गुरुदेव के चरण स्पर्श कर नौ दो ग्यारह हो गए।

उत्साही कार्यकर्ताओं ने अनुकूल मंच और पाण्डाल आदि की साज-सज्जा शुरु की तो कुछ लोगों ने ब्र. जी की बिन्दौरी निकालने की बात कही। सभी ने आचार्य श्री से आज्ञा प्राप्त की फिर भारी उत्साह से कार्य को गति दी। 24 मई की शाम को ब्र. जी को राजकुमार की तरह सजाया गया कीमती वस्त्र, आकर्षक आभूषण एवं रत्न जड़ित मुकुट पहनाए गए। जब उन्हें हाथी पर विराजित किया गया तो ब्र. छोटेलाल जी पगड़ी और मुकुट के कारण साक्षात् सम्राट दिख रहे थे। उनका गेहुँआ रंग और निर्दोष चेहरा उनके दुबले-पतले शरीर की शोभा बढ़ा रहा था। कद सामान्य था अत: वे सभी को बहुत प्यारे दिख रहे थे। विशाल शोभा यात्रा के साथ जब सजे हुए गजराज ने कदम बढ़ाए तो सड़कों पर खड़े लोग उस पर आसीन नन्हें चक्रवर्ती को धन्य-धन्य कह रहे थे । बिन्दौरी के साथ वाद्ययंत्र का समूह मधुर ध्वनि नि:सृत

कर रहा था ।मंदिर और सड़क वंदनवार से सज्जित किए गए।माताओं-बहिनों और भाईयों ने ब्र . जी की झोली भरी, आरती उतारी।

दूसरे दिन ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी को आचार्य श्री ने विधि विधान पूर्वक ब्र . जी को क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की । दीक्षोपरांत आचार्य श्री ने बतलाया कि आज सोलहवें तीर्थंकर भगवान शांतिनाथ के तीन कल्याणकों का संयोग है, जन्म,तप, और मोक्ष कल्याणक का गौरवशाली दिवस है अतः मैंने नवदीक्षित क्षु . जी का नामकरण क्षु . शांतिसागर जी किया है। उनका वाक्य सुनकर कार्यक्रम में उपस्थित हजारों नर-नारियों ने आचार्य श्री के मन्तव्य का स्वागत किया, सभी ने गुरु और शिष्य का जयघोष किया ।संपूर्ण कार्यक्रम निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। देश को मिला एक नया साधु जो कुछ क्षण पहले ही ग्यारह प्रतिमा धारी हुआ है जिसके पास परिग्रह के रूप में लंगोटी और चादर है। अहिंसा का उपकरण मयूर पिच्छिका है और साधना का उत्प्रेरक कमण्डलु है। केश लोंच का संकल्प है और है एक शास्त्र।

आचार्य संघ कुछ दिवस और अजमेर में रुका। नए संत को पड़गाहने के लिए रोज भारी भीड़ होती, किन्तु सौभाग्य मिलता किसी एक परिवार को। धीरे- धीरे पन्द्रह दिन बीत गए, अजमेर नगर के उस मोहल्ले के पन्द्रह परिवार क्षुल्लक जी को आहार दान देकर अपना सौभाग्य मान रहे थे, तभी एक दिन आचार्य श्री ने ससंघ विहार कर दिया। चरण थे नगर पीसांगन की ओर।

रास्ते का उपसर्ग -

गुरुदेव के चरण जिस सड़क पर थे वह उनके लिए तनिक भी करुणाधारी नहीं बनी, ग्रीष्म की तपन से रोज तप जाती थी ।तपी हुई सड़क पर तप करने वाले ताप को रौंधते हुए सहजता से आगे बढ़ जाते थे फिर भी गुरुदेव चुपचाप देखते कि नए संत जी का क्या हाल है।

चलते समय उन्हें तलवों पर जलन होती होगी, नया लड़का है, अभी आदत नहीं पड़ी होगी। किन्तु नया लड़का तो नए संत का बाना धारण कर चुका है अतः पूर्ण दृढ़ता से गुरुदेव का अनुशरण करता हुआ बढ़ रहा था। साथ चल रहे लोग चिन्तित होते कि क्षुल्लक जी को छाले ना पड़ जावें; लेकिन क्षुल्लक जी तो निश्चिंत थे। रास्ते में जहाँ शाम हो जाती वहाँ विराम हो जाता। सामने एक गाँव था, जिसका नाम नागेलाव है। संघ ने रात्रि विश्राम वहाँ उपयुक्त समझा सो रुक गए चरण। हुआ संत विश्राम। रात्रि बीत गयी । पौ फटी। चिड़ियों की तरह साधुगण अपनी चर्या में लग गए। भोर की बेला का लाभ, कोई किसी तरह तो कोई अन्य दिशा में शौचादि को निकल गए । शौच से वापिस आकर तुरंत विहार की तैयारी थी। कुछ शिष्यों और कार्यकर्त्ताओं के साथ गुरुदेव सबसे पहले वापिस हुए जंगल से, कुछ देर रुके, फिर यह मानकर कि जो साधु बाद में लौटेंगे, वे पथानुशरण करते हुए चले आयेंगे, अतः गुरुदेव शिष्यों के साथ विहार कर गए। साथ-साथ कार्यकर्त्तागण वे सब नगर पीसांगन की ओर थे । तभी अजमेर के श्रावक जीप आदि वाहनों से उस स्थल पर पहुँचे जहाँ संघ ने रात्रि विश्राम किया था वहाँ सूचना निकली कि संघ तो काफी देर पहले विहार कर गया। वाहन वाले तुरंत पीसांगन की ओर बढ़े, उन्हें वहाँ चौका आदि की पूर्व सूचना भी देनी थी अतः कुछ कार्यकर्ता पीसांगन चले गए और कुछ कार्यकर्त्तागण संघ के मिलते ही आचार्यश्री के पीछे- पीछे पैदल चलने लगे। जब संघ पीसांगन पहुँचा तो गुरुदेव ने ध्यान दिया कि नव-दीक्षित क्षुल्लक शांतिसागर जी नहीं हैं। सोचा पीछे होंगे, आते होंगे, एक घंटा बीत गया परन्तु क्षुल्लक जी नहीं आए। श्रावकों और साधुओं के साथ-साथ गुरुदेव को भी चिंता हो गई, कार्यकर्त्तागण यहाँ वहाँ अन्य गलियों में खोजने लगे। कुछ लोग जीप से पुनः पिछले गाँव को गए; परन्तु वहाँ भी न मिले तब उन्होंने गुरुदेव के पास पहुँचकर बतलाया- महाराज तो

कहीं नहीं दिखें। आप ही विचारकर बतलाने की दया करें ।

तब गुरुवर ने विचार किया फिर सहजता से बोले- हैं तो सुरक्षित किन्तु किसी कुएँ में या बावड़ी के कारण परेशानी में पड़ गए हैं। वाक्य सुनते ही श्रावकगण पुनः खोजने चल पड़े।

हकीकत यह थी कि क्षुल्लक जी उस समय तक उसी ग्राम-नागेलाव के एक कुएँ में थे। वहाँ ग्रामीण महिलाओं ने पानी भरते समय जब उन्हें देखा तो चकित हो गईं वे कुछ बोलती उसके पूर्व ही क्षुल्लक गंभीरता से बोले माताओ मुझे बाहर निकालिए, डाकू मुझे यहाँ धकेल कर भाग गए। तब कर्मठ महिलाओं ने कुएँ पर लगी चरस को ढीला कर नीचे उतारा कि क्षुल्लक जी इसमें बैठेंगे तो हम ऊपर खींच लेंगे। किन्तु क्षुल्लक जी ने उसमें चमड़े का उपयोग देखा तो बैठने से मना कर दिया, विनय पूर्वक बोले- हम जैन साधु हैं, संभव हो तो कहीं से पाटा लाकर लटकाइये। तब कुछ ग्रामीण भी आ गए उन्हें वार्ता समझने में देर न लगी। तुरन्त पाटे की व्यवस्था की गई और क्षुल्लक जी को निकाला गया।

तब तक ग्राम में निवास कर रहे श्वेताम्बर भाईयों को जानकारी मिली, वे दौड़े- दौड़े आए और क्षुल्लक जी को धर्मायतन कक्ष में ले गए। गाँव में दिगम्बर जैन समाज के घर नहीं थे।

क्षु. जी स्वच्छ स्थान में बैठे थे तभी पीसांगन से खोज पर निकली जीप आ गई उससे श्रावकगण उतरे, क्षु. जी के पास पहुँचे और चरणों से लिपट गये। सभी के मुँह पर एक ही प्रश्न था- क्या हो गया था महाराज? क्षु. जी ने गंभीरता को बिखरने नहीं दिया, सहज भाव से पूरा वृतांत बतलाने का संकेत गाँव वालों को किया। गाँव वालों ने श्रावकों को पूरा हाल बतलाया समाचार सुनकर श्रावकों ने क्षु. जी को उपसर्ग विजेता घोषित किया और जयकारा बोला।

श्रावकगण क्षुल्लक जी को लेकर पद यात्रा करते हुए गुरुदेव की ओर चल पड़े। गुरुजी तो एक माँ की तरह अपने शिशु की प्रतिक्षा कर रहे थे। पीसांगन पहुँचने के बाद संत मिलन हुआ। क्षुल्लक जी गुरुदेव के चरणों के पास बैठ गए। गुरुदेव ने शिष्य के सिर पर वात्सल्य बरसाता वरदहस्त रख दिया। फिर पूरा समाचार सुना। क्षुल्लक जी के साहस, संयम और दृढ़ता की सराहना की। फिर श्रावकों की प्रार्थना सुनकर संघ सहित आहारचर्या के लिए निकले। वसतिका में लौटते हुए तीन बज गए थे, धूप का प्रभाव कम नहीं हुआ था सारा नगर तप रहा था पर संघ और श्रावकों के हृदय से शीतलता टपक रही थी।

उपसर्ग आकर चला गया। क्षुल्लक जी के जीवन पर एक मोहर लगा गया जो उनकी दृढ़ता की प्रतीक थी ।

पाठकों को जानकर खुशी होगी कि जिस अजमेर शहर में छोटेलाल जी की क्षुल्लक दीक्षा सम्पन्न हुई थी उसी अजमेर में करीब 36 दिन बाद विद्याधर की मुनि दीक्षा सम्पन्न हुई थी, तिथि थी 30 जून 1968, वे वर्तमान में परमपूज्य आचार्य विद्यासागर महाराज के नाम से विख्यात हैं। वहाँ दो दीक्षाओं का समय, काल, स्थल, एक जैसा है। अजमेर की पावनता और वैराट्य उन दीक्षाओं से और- और बढ़ गया था, ऐतिहासिकता समृद्ध हुई थी, क्योंकि अजमेर ने दो होनहार साधु भेंट किए थे देश को - परमपूज्य आचार्य रत्न मर्यादा शिष्योत्तम ज्ञान दिवाकर 108 श्री भरतसागर जी महाराज और परम पूज्य राष्ट्रसंत, महाकवि, आचार्य शिरोमणि 108 विद्यासागर जी महाराज। इन प्रसंगों से अजमेर की धरती ने जैन इतिहास में जो चर्चा, गरिमा और ख्याति पाई वह आज भी अक्षुण्ण है।

साधुओं के चरण सुजानगण की ओर बढ़ रहे थे। एक स्थल पर जब संघ ने विराम लिया तो अचानक गुरुदेव को कुएँ की घटना याद

हो आई अत: वात्सल्य पूर्वक क्षुल्लक जी से पूछने लगे - जब डाकूओं ने धक्का देकर कुएँ में गिराया था तब पैरों में चोट आई होगी? क्षुल्लक जी ने सहजता से उत्तर दिया- जी साधारण, क्योंकि कुएँ में कमर तक पानी था।

- कितना गहरा था?

- 25-30 फुट गहराई रही होगी।

- जलचर जीवों ने काटा तो नहीं ?

- नहीं। किन्तु चार - पाँच घंटे बाद पैरों में जलन होने लगी थी।

- कोई जीव दिखा था?

- जी, पत्थरों के जोड़ के बीच में तीन स्थानों पर पानी वाले सर्प का मुँह दिख रहा था मगर वे पास नहीं आए।

आचार्यश्री के प्रश्नों से उन्हें तो समाधान मिला ही, शिष्य को भी मिला। शिष्य को अनुभव हुआ कि गुरुदेव मेरा बहुत ध्यान रखते हैं।

सुजानगढ़ : 1968 -

संघ समय पर सुजानगढ़ पहुँचा। निश्चित समय पर आचार्यश्री ने ससंघ ने अपने चातुर्मास स्थापना की। उस समय संघ में अनेक साधुओं के साथ-साथ आर्यिका माताजी भी थी जिनमें पूज्य आर्यिका सिद्धमति जी वरिष्ठ थीं। विदुषी एवं वात्सल्य की मूर्ति थी। स्वभाव सहज सरल था।

आचार्यश्री वर्षायोग की साधना में कर्मठता पूर्वक खुद की और संघस्थ साधुओं की दैनिक चर्या पर दृष्टि रखते थे। सुबह शाम सामायिक, प्रतिक्रमण और समय पर होता था स्वाध्याय। आहारचर्या के समय कार्यकर्तागण विशेष व्यवस्था बनाते थे ताकि बिना शोरगुल के साधुओं के आहार सम्पन्न हों, किसी की त्रुटि से अन्तराय न हो।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

प्रतिदिन निश्चित समय पर आचार्यश्री प्रवचन करते थे। कभी विशेष प्रसंग पर क्षुल्लक जी को भी प्रवचन के लिए आदेश देते थे। वे नए थे, इसलिए झिझकते थे, फिर भी 10-20 मिनट सारगर्भित बातें अवश्य सुनाते थे।

एकदिन आचार्यश्री के दर्शन करने तत्कालीन चर्चित विद्वान पं. सुमेरचन्द्र जी आए। नमोस्तु आदि के बाद सारगर्भित चर्चाएँ सम्पन्न हुईं। तभी पं. जी की दृष्टि कक्ष में विराजित क्षु . शांतिसागर जी पर पड़ी। छोटे से महाराज को देखकर पं. जी कौतूहल में पड़ गए सो हाथ जोड़कर आचार्यश्री से पूछने लगे- गुरुदेव छोटी उम्र के युवक को दीक्षा दी है आपने? अभी तो इनके पढ़ने लिखने का समय है। आचार्यश्री को पंडित जी के वचकाना प्रश्न पर आश्चर्य हुआ अतः वे मुस्कराते हुए बोले- आप पढ़-पढ़कर बड़े पंडित हो गए मगर अभी तक दीक्षा की ओर विचार नहीं किया ? क्या पढ़ने-लिखने के बाद दीक्षा ली जाती है? यदि हाँ, तो आप पहले दीक्षा लीजिए।

आचार्यश्री के प्रबल प्रश्न से पंडित जी लजा गए फलतः गुरुदेव को नमोस्तु कर आँखें नीची कर ली। फिर यहाँ-वहाँ की वार्ता करने लगे। उस दिन पं. जी को जाने क्या हो गया था; क्योंकि वे लगातार क्षु. जी पर ध्यान दे रहे थे जबकि क्षुल्लक जी वैराग्य पथ पर बहुत नए थे, उनका अल्प अध्ययन था। पं. जी जाते समय कुछ देर क्षुल्लक जी के पास रुके। उन्हें इच्छामि की और उनके पास बैठ गए। फिर एक के बाद तीन-चार प्रश्न कर दिए। क्षु. जी मौन रहे फिर पं. जी का संशय मिटाने के लिए उत्तर दिया- गुरुदेव के निकट अध्ययन शुरु कर रहा हूँ, कुछ जानूँगा तब बतला पाऊँगा।

पण्डित जी क्षुल्लक जी को अध्ययन की अंतरंग प्रेरणा देना चाहते थे अतः कतिपय कठोर शब्दों का उपयोग कर बैठे - क्या कमाना-ध

ामाना नहीं आता था जो समाज का आहार करने आ गए?

पण्डित जी के व्यंग पूर्ण शब्द सुनकर क्षु. जी का चेहरा पीला पड़ गया वे कुछ बोल ना सके। पण्डित जी को जो कहना था सो कह चुके थे फलतः पुनः नतमस्तक हो इच्छामि की और चलते बने।

क्षुल्लक जी तो अपने गुरुदेव से पढ़ना ही चाहते थे; किन्तु पंडित जी के प्रश्न से आकुल हो उठे, फलतः दूसरे दिन से पढ़ने में अधिक ध्यान देने लगे वे घंटे भर गुरुदेव के पास पढ़ते तो तीन-तीन घंटे अपने कक्ष में पढ़ते। उनके अध्ययन से संघ के सभी संत प्रसन्न रहते थे।

टावर महाराज -

राजस्थान में बच्चों को बोलचाल की भाषा में टावर महाराज कहा जाता है। अतः सामान्य भक्तगण धीरे धीरे क्षुल्लक को टावर महाराज का संबोधन देकर आपस में वार्ता करते थे। सुजानगण वालों ने नया संबोधन क्या दिया, जब तक संघ राजस्थान की सीमा में रहा क्षुल्लक जी टावर महाराज ही कहलाते रहे। वे मीठी और पतली आवाज में प्रवचन करते थे अतः जिस दिन उनके प्रवचन होते थे, बाल गोपाल भी जमें रहते थे।

टावर महाराज को आचार्यश्री के स्नेह के साथ-साथ संघस्थ आर्यिका सिद्धमति माताजी का भारी वात्सल्य मिलता था अतः क्षुल्लक जी का आत्मविकास का क्रम दिन दूना रात चौगना हो गया। आचार्यश्री के संघ में अन्य मुनियों में पूज्य पार्श्व सागर का नाम वरिष्ठता के क्रम में सर्वप्रथम आता है

सुजानगढ़ से चातुर्मास पूर्ण कर आचार्य संघ उत्तर भारत की ओर प्रस्थित हुआ। विभिन्न नगरों का भ्रमण करते हुए संघ ने सन् 1969 में दिल्ली में चातुर्मास सम्पन्न किया । महानगर में इस चातुर्मास में प्रवचन करते थे श्रोताओं से हार्दिक सम्मान पाते थे।

(चूँकि यह कथा आचार्य भरत सागर जी की है अतः इसमें अन्य मुनियों की अन्य स्थानों के प्रसंग गौण करते हुए केवल आचार्य भरतसागर जी से संबधित वार्ताएँ स्पर्श की जा रहीं हैं।)

दिल्ली वर्षायोग समाप्ति के पश्चात् आचार्य संघ ने श्री सम्मेद शिखर जी की ओर विहार किया। उत्तर प्रदेश एवं बिहार प्रदेश के अनेक नगरों एवं गाँवों को धन्य होने का अवसर मिला। धीरे-धीरे आचार्य श्री के चरण शिखर जी जा पहुँचे। सन् 1970 का वर्षायोग शिखर जी में स्थापित किया गया। वहाँ के शांत वातावरण में क्षु. जी को गुरुदेव से अधिक समय मिला फलतः अध्ययन अच्छा हुआ। दैनिक चर्या तो अच्छी होती ही थी क्षु. जी ने गुरु आज्ञा से गिरिराज शिखर की अनेक वंदनाएँ कीं उनके साथ की तो कतिपय वंदनाएँ अन्य संतों के साथ की। जितना समय भक्ति और गुरुभक्ति को दिया जाता था उससे अधिक समय क्षुल्लक जी विद्या भक्ति को दे रहे थे फलतः उनमें आगमिक-ज्ञान बढ़ने लगा।

सन् 1971 का वर्षायोग आचार्य श्री ने राजगृही में किया। यहाँ ही आचार्य श्री ने संघस्थ क्षुल्लक प्रबोध सागर जी को मुनि दीक्षा प्रदान की थी। संयोग यह रहा कि मुनि प्रबोध सागर जी ने गुरुदेव की आज्ञानुसार क्षुल्लक शांतिसागर जी को नित्य-नित्य न्याय और व्याकरण का अध्ययन कराया। क्षुल्लक शांतिसागर जी अपने गुरुदेव पूज्य विमल सागर जी से वह सब कुछ पा रहे थे जिससे एक साधक उच्च कोटि का साधक बन जाता है। फलतः वे धीरे-धीरे संघ और समाज में उच्च कोटि के रूप में ख्याति भी प्राप्त कर सके। उन पर संघ के अनेक संतों का वात्सल्य बरसता था, आचार्यश्री के साथ- साथ मुनि पार्श्वसागर जी, मुनि सुव्रतसागर जी एवं आर्यिका सिद्धमति जी उनके लिए प्रकाश स्तम्भ सिद्ध हुए ।

शिखर जी चातुर्मास - 1972

गुरुदेव के वरदहस्त की छाया में क्षु . शांतिसागर जी क्रमशः विकास कर रहे थे मगर उन्हें कभी - कभी अनुभव होता कि आत्मिक शांति नहीं मिल रही है। एक दिन उन्होंने पूज्य गुरुदेव विमल सागर जी के समक्ष अपनी समस्या रखते हुए बतलाया कि पढ़ते समय तो कभी स्वाध्याय के समय मैं पल दो पल को विचलित हो जाता हूँ, मनःशांति भंग हो जाती है इसका क्या कारण है ?।

गुरुदेव कारण के पीछे छुपी भावना को जानते थे अतः उन्होंने समझाते हुए लहजे में क्षुल्लक जी से कहा- तुम्हें लंगोटी और चादर भार लग रही है इससे जाहिर होता है कि मुनि बनने पर पूर्ण शांति का अनुभव होगा, ऐसा विश्वास है। तब क्षुल्लक जी ने विनय पूर्वक कहा- गुरुदेव बात तो आप सत्य के धरातल पर कर रहें हैं, कमी मुझमें ही है।

- क्या कमी है।

- मुझे कुछ बीमारियाँ हैं।

- क्या - क्या है ?

- बतलाने में शर्म आती है, परन्तु आप तो मेरे गुरु ही नहीं माता - पिता भी हैं, सो कह रहा हूँ कि आधा आहार ही हो पाता है और वमन को जी मचलने लगता है।

- हूँ, और क्या तकलीफ है ?

- मुँह के भीतर गालों में छाले हैं।

क्षुल्लक जी की बीमारियों के नाम सुनकर आचार्य श्री हँस दिए, फिर प्रेम से बोले - बेटे, ये कोई बड़ी बीमारियाँ नहीं हैं, ये तो मौसम के साथ- साथ आती-जाती रहती हैं अतः इतनी सी परेशानी के कारण

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

मुनि बाना से दूर मत रहना। मेरा विश्वास है मुनि बनोगे, खड़गासन में रहकर आहार लोगे तो ये ही नहीं अन्य बीमारियाँ भी दूर भाग जावेगीं, मुनि आहार और विहार नैरोग्यदायक होता है।

गुरुदेव के वचनों से क्षु. जी के मन में एक नई परेशानी का संचार हुआ, उन्हें लगा वे अभी - अभी पूर्ण स्वस्थ्य हो गए हैं अत: चेहरे पर प्रसन्नता लाकर गुरुदेव के चरणों पर शीश रख दिया। जब उठे तो हाथ जोड़कर बोले - गुरुदेव आप यह कृपा अवश्य कीजिए मैं मुनि दीक्षा धरण कर अपना जीवन धन्य करूँगा ।

मुनि दीक्षा -

समय पंख लगाकर उड़ रहा था मगर तत्त्वज्ञानी गुरुदेव हर कार्य समय पर सम्पन्न करने में सिद्धी प्राप्त कर चुके थे। नवम्बर माह के पहले दिन ही उन्होंने प्रवचनों के बीच श्रोताओं और कार्यकर्ताओं को स्पष्ट कर दिया कि करीब एक हफ्ते बाद कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को दीक्षाएँ होंगीं। सभी लोग हर्षित हुए; किन्तु सभी चकित। जिज्ञासा यह कि किसे - किसे दीक्षा दी जावेगी। मगर जब दो नवीन कमण्डलु और दो नवीन पिच्छिकाएँ क्षेत्र पर लाईं गईं तो सभी को जाहिर हो गया कि संघस्थ क्षुल्लक द्वय को दीक्षा दी जावेगी, प्रथम क्षु. सुमतिसागर जी एवं द्वितीय क्षु. श्री शांतिसागर जी ।

शिखर जी के पावन वातांश में 6 नवम्बर 1972, तदनुसार कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा विक्रम संवत 2028, को आचार्यश्री ने विधि-विधान पूर्वक क्षु. द्वय को जैनेश्वरी दिगम्बर मुनि दीक्षा प्रदान की। इस अवसर पर गुरुदेव के परम भक्त श्री सोहन लाल पहाड़िया एवं उनकी भार्या सद्गृहणी श्रीमति पद्मादेवी जी क्षु. शांतिसागर जी के माता-पिता बने। दीक्षोपरांत आचार्यश्री ने नूतन मुनियों के नामों की घोषणा की कि आज से क्षु. सुमतिसागर जी मुनि 108 श्री बाहुबलीसागर जी

कहलायेंगे एवं क्षु . शांतिसागर जी मुनि 108 श्री भरत सागर जी कहलायेंगे।

गुणीजनों ने अंदाज लगाया कि क्षु. द्वय को नाम किस आधार पर दिए गए हैं। उन्हें याद आया कि भगवान बाहुबली अखण्ड तपस्वी थे, कठोर साधना करते थे, अनेक उपवास करते थे, काया बलिष्ठ थी अतः ये गुण देखते हुए क्षु .सुमतिसागर जी को बाहुवली सागर नाम दिया गया है क्योंकि उनमें उक्त सभी गुण विद्यमान हैं। इसी तरह भगवान भरत धीर-वीर-गंभीर, शांत स्वभावी रोम-रोम से वैरागी, ध्यान अध्ययन में लीन रहने वाले एवं भावों से विशुद्ध परिणामी थे अतः उनके गुण क्षु. शांतिसागर जी में देख लेने के पश्चात् ही गुरुदेव ने उनका नामकरण मुनि भरत सागर किया है।

दीक्षोपरांत मुनि रत्न भरतसागर जी 28 मूलगुणों के धारक हो गए, वे उत्तर गुणों का पालन करते ज्ञान-ध्यान और तप की ओर समर्पित हो गए। कुछ ही दिनों में उनका चारित्र वैराग्य की कथा सुनाने लगा और वैराग्य की कथा में उनकी विशुद्धि के दर्शन होने लगे। वे भक्तों के समक्ष साक्षात् साधु परमेष्ठी प्रतीत होने लगे, बन गया उनका स्थान-पंच परमेष्ठी में। उनकी वाचनिक धारा से श्रावकों को नूतन चेतना प्राप्त होने लगी, वे संघ में शक्तिपुंज सदृश थे। गुरुदेव के दाहिनें हाथ के रूप में उन्हें ख्याति मिलने लगी। नग्नत्व धारण करने के बाद अंतरंग तप में तपते हुए बाह्य तपों की ओर भी दृढ़ता से उन्मुख थे। उनकी ओजस्वी वाणी ने उनके सहज प्रवचनों पर आगम का स्पर्श सदा बनाए रखा। ग्राह्य शैली में मधुर प्रवचन और स्पष्ट उच्चारण उनकी शैली बन गई । जैन आगम के सिद्धांतों को समझाते हुए उनका दृष्किोण व्यावहारिक किन्तु गूढ़ वैज्ञानिक हो जाता था फलतः व्यवहार-नय और निश्चय-नय की पकड़ कभी ढीली नहीं होती थी। वाणी में भी धैर्य, वीरता और गंभीरता के रंग रहते थे।

दिन तो दिन रात्रि समय भी वे अपने प्राण प्यारे गुरुदेव का सामीप्य पल-पल चाहते थे, अक्सर गुरुदेव के कक्ष में ही रात्रि विश्राम की भावना रखते थे। उनकी इस समीपता को देखकर एक वर्ष भी नहीं बीता और श्रावकगण उन्हें गुरुदेव की छाया कहने लगे थे। सच है वे छाया की तरह हमेशा गुरु चरणों में बने रहते थे । गुरुदेव भी उन्हें आत्मिक स्नेह करते थे फलतः पुद्गल पृथक-पृथक होते हुए भी, उनकी आत्मिक एकता जग जाहिर हो गई । क्षणभर को भी गुरुदेव कहीं जाते थे तो मुनि भरतसागर जी की साधना शुरु हो जाती थी। अतः भक्तगण उन्हें एकांतप्रिय कहने लगे । गुरु से ज्ञान और सान्निध्य निरंतर मिलता रहता था फलतः उनके चेहरे पर निर्भीकता और प्रज्ञा की छाप देखने को मिल जाती थी, तब भक्तगण उनके दर्शन करते हुए उन्हें मनोज्ञ साधु कहा करते थे।

सन् 1972 का वर्ष विदा ले गया, सन् 73 का साल प्रारंभ हो गया। आचार्य श्री ने सन् 73 में भी श्री सम्मेद शिखर जी की पावन धरा पर वर्षायोग संपन्न किया। रोज देश के किसी न किसी शहर से भक्तगण आते रहते थे। एकदिन एक श्रेष्ठी सपरिवार शिखर जी पहुँचे । जब वे संघ के दर्शन करने निकले तो उन्होंने अलग-अलग कक्षों में साधुओं के दर्शन किए, एक बड़े कक्ष मे आचार्य श्री विराजित थे उनके समीप कुछ भक्तगण बैठे हुए धर्म चर्चा कर रहे थे। तभी आगत श्रेष्ठी गुरुदेव के कक्ष में बैठे, नमोस्तु के बाद विनय पूर्वक किन्तु व्यंग सहित पूछ बैठे - आप तो यहाँ दरबार में पधारे हैं वहाँ सीढ़ियों के नीचे वाले स्थान में भरतसागर जी अकेले बैठे हैं। आप उन्हें अकेला क्यों छोड़ते हैं ?

आचार्यश्री भक्त के अल्पज्ञान पर हँसने लगे फिर श्रेष्ठी से बोले, वे क्या स्वाध्याय नहीं कर रहे ?

– जी, कर रहे हैं।

– तो फिर वे अकेले कैसे हुए? उनके साथ जिनेन्द्र भगवान हैं जिन्हें वे स्वाध्याय में चेत रहे हैं।

– जी महाराज जी ।

– भविष्य में ऐसे प्रसंगों पर मुँह नहीं चलाना चाहिए, चुप रहना चाहिए और विवेक पूर्वक सोच कर खुद निर्णय लेना चाहिए। मुझे अपने शिष्य पर पूर्ण विश्वास है आप अपना विश्वास बनाइए।

आचार्यश्री का उत्तर सुनकर श्रेष्ठी मन ही मन लज्जित हुआ फिर उनके चरणों में मस्तक टेक कर शांति से बैठ गया।

शिखर जी चातुर्मास – 1974 –

आचार्य विमल सागर जी अपने चिंतन के अनुसार योग संयोग बनाते थे, वे कभी संयोग के लिए समय की प्रतीक्षा नहीं करते थे, उनकी यह दृष्टि और सोच मुनि भरतसागर जी को गहराई से प्रभावित करती रही फलतः वे भी अपने गुरु की तरह योग और संयोग के सम्राट सिद्ध हुए।

संपूर्ण संघ अपनी दैनिक चर्या के लिए संपूर्ण भारत में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था। गुरु एवं शिष्य के समीप देश के बड़े-बड़े धनशाली व्यक्तित्व आते थे और संयम में बँधकर लौटते थे। निर्धनों का तो उनके दरबार में जमावड़ा ही बना रहता था, हर व्यक्ति अपनी परेशानियों का समाधान प्राप्त करके ही लौटता था।

सम्मेद शिखर जी के वर्षायोग के बाद संघ ने पावन क्षेत्र की पावनता बांटते हुए विभिन्न नगरों एवं ग्रामों में विहार किया।

राजगृही चातुर्मास –1975 –

ग्रीष्मकाल की तपन को अपने चरणों से शीतलता का आवरण

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

पहनाते हुए, संघ एक सिद्ध क्षेत्र से दूसरे सिद्ध क्षेत्र राजगृही समक्ष अवस्थित मुस्कुरा रहा था। कार्यकर्त्ताओं ने राजगृही की सीमा पर संघ की आगवानी की, पादप्रक्षाल और आरती सभा सम्पन्न हुए। फिर विशाल शोभा यात्रा के साथ संघ को राजगृही तीर्थ परिसर में प्रवेश कराया ।पंचशैल से सज्जित राजगृही के मंदिर जी में तीर्थंकर, मुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा के दर्शन कर संघ गद्‌गद् था। दूसरे दिन गुरुदेव और भरतसागर जी वंदनार्थ निकले, पीछे- पीछे संपूर्ण संघ। भारी हर्ष के साथ वंदना पूर्ण हुई। पंच पहाड़ी की परिक्रमा करने का मन था जो दूसरे दिन पूर्ण हुआ।

निश्चित समय पर वर्षायोग की स्थापना की गई। संघ के दर्शन के लिये रोज- रोज यात्रियों की संख्या बढ़ने लगी। संघ वर्षायोग की साधना में मस्त था तो भक्तगण गुरु-शिष्य के दर्शन कर मस्त थे। समय बीतते देर नहीं लगी श्रेष्ठी के जेब से खर्च होते नोटों की तरह संघ के हाथों से चार माह का समय व्यतीत हो गया। धीरे-धीरे सन् 1975 नाम के वर्ष की समाधि हो गई और सन् 1976 नाम का वर्ष शिशु रूप में किलकारी भरने लगा। तभी दोंनों महान यायावर, गुरु और शिष्य, ससंघ वहाँ से विहार कर गए। सारे देश की सोच थी कि संघ अब महानगरों की ओर बढ़ेगा और भीड़ को उपकृत करेगा; किन्तु गुरु शिष्य तो कभी भीड़ को भीड़ नहीं मानते थे उन्हें श्रावक समूह ही दिखता था। भीड़ होती थीं मगर वे अपने मुँह से भक्तों के समूह को कभी भीड़ कहकर उपहास नहीं करते थे। वर्तमान भारत में भीड़ को भीड़भाड़ तक कहा जाने लगा है, हो सकता है भविष्य में भीड़ को कोई कार्यकर्ता भेड़- समूह कह दें किन्तु गुरु शिष्य का अनुशासन गरिमा का प्रतीक था, बड़ी से बड़ी भीड़ में भी कोई भीड़ -भाड़ नहीं थी, भेड़ चाल नहीं थी, भड़ाश नहीं थी , थी तो केवल भक्ति धारा और भक्त का समर्पण।

पुनः शिखरजी - 1976 -

चलते फिरते सिद्धों की टोली लगती थी गुरु और शिष्य का संघ। थे वे सिद्ध पुरुष सो पुनः कदम थे -सिद्धक्षेत्र की चाहत में बम्बई का बुलावा ठुकरा दिया, दिल्ली का दहकना ठंडा कर दिया, पटना का पुकारना बंद कर दिया, कलकत्ता का कोलाहल शांत कर दिया और जाकर साधना करने लगे सिद्धक्षेत्र पर। कुछ माह शिखर जी की पवित्र धरती पर साधना करते हुए ऐसे बीत गए जैसे अभी कुछ मिनिट ही हुए हों। आ गया समय चातुर्मास का। सुनिश्चित तिथि पर विधि-विधान पूर्वक स्थापना की ओर संत द्वय ने संघ चातुर्मासिक साधना शुरु कर दी। इस बार वातावरण पूर्व से अधिक प्रभावनाकारी देखने को मिला था।

गुरुदेव की क्रियाएँ जग- जाहिर रही हैं उसी क्रम में उनके तपस्वी शिष्य मुनि भरत सागर जी की तपस्चर्या श्रावकों को चकित कर रही थी। कभी मौन, कभी उपवास, कभी केशलोंच, कभी अन्तराय का झेलना और कभी सुमधुर प्रवचनों का प्रवाह उनका परिचय बन गया था।

दीपोत्सव पर्व और निष्ठापना के क्षण आ गए। चातुर्मास पूर्ण हुआ किन्तु संघ ने अपनी साधना निरंतर रखी। फाल्गुन माह ने गिरिराज पर अपनी छटा बखेर दी। समय का राजा कहलाने वाला बसंत एक-एक वृक्ष से बोल रहा था। जो श्रावक वंदना को निकलते, वे टोंकों पर पहुँचने के पूर्व बसंत - जनित बसंति - हवा के झोकों से आह्लादित हो जाते, वे भक्त यह भी जानते थे कि प्रकृति का बसंत तो कुछ दिन का मेहमान होता है, या संत द्वय ने जिस बसंत की रचना की है वह शाश्वत है, यदि इसका आविर्भाव भक्त के जीवन में हो जावे तो भक्तगण भी संतों की तरह बारहों महिने बसंत का अनुभव कर सकते

हैं ।

ग्रीष्मकाल ने अपनी आँखे खोल दीं, चारों ओर प्रखर धूप पृथ्वी को तपाने लगी, गुरुदेव ससंघ विहार कर गए। तपती धरती पर कदम धरने में गुरु- शिष्य के तलवों को कभी आँच नहीं आई। सन् 1977 के कुछ मील तक संघ ने बिहार किया और फिर टिकैत नगर समाज का अनुरोध फलित करते हुए वहाँ पहुँचे।

टिकैतनगर - 1977 -

गुरु शिष्य ससंघ टिकेत नगर की सीमा पर पहुँचे। सदा की तरह यहाँ भी समाज ने आगवानी कर खुद को धन्य किया । श्री दिगम्बर जैन मंदिर परिसर में संघ के ठहरने की व्यवस्था थी । शिष्य को साथ में रखते हुए गुरुदेव ने आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को स्थापना की । देश भर में फैले भक्तगण टिकैतनगर की ओर आने जाने लगे । गुरू और शिष्य का आशीर्वाद पाकर अनेक भक्तों ने अपनी आंतरिक परेशानियों से निजात पाई। रोते हुए व्यक्ति हँसते हुए लौटते थे।

वर्षायोग के बाद गुरु-शिष्य वहाँ से सीतापुर गए और मिल प्रांगण में रुककर सिद्ध चक्र विधान कराया। समय के हर क्षण को गुरु और शिष्य अपनी साधना से धर्म के रंग में रंग रहे थे। वर्ष बीत गया। संघ ने विहार कर दिया। छोटी- बड़ी वस्तियों को चरण सान्निध्य प्रदान करते हुए संघ 28 जून को मध्य भारत के सुप्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र श्री सोनागिर जी पहुँचा। संघ विशाल था, क्षेत्र भी विशाल था फलतः विशाल में विशाल समा गए। कार्यकर्तागण ने संघ का आत्मिक स्वागत किया, कि भाव पूर्ण आगवानी एवं धर्मशाला में ठहराया।

सोनागिरजी -1978 -

सिद्ध क्षेत्रों में रमने वाले पक्षी के रूप में पहचान लिए गए थे गुरु

शिष्य, अतः भक्तों को विश्वास था कि संघ का वर्षायोग स्थापना यहाँ ही करेंगे। नित-प्रति गुरु चरणों के समक्ष श्रीफलों के ढेर लगने लगे, हर कंठ यही पुकारता कि हे गुरुदेव वर्षायोग स्थापना यहाँ ही कीजिए। गुरुदेव ने भक्तों को स्वीकृती दे दी। अषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को विधिपूर्वक स्थापना की और चातुर्मासिक क्रियाएँ प्रारंभ कर दी। गुरु-शिष्य की जोड़ी के आशीर्वाद से क्षेत्र पर अनेक रचनात्मक कार्य शुरु किए गए। कार्यकर्त्ताओं ने गुरुदेव के आशीर्वाद से नंगानंग संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की। वे एक निर्माण कार्य पूज्य विमल सागर जी के नाम पर भी करना चाहते थे अतः समय पाकर एक दिन पूज्य मुनि भरत सागर जी के पास गए और उनसे मार्गदर्शन चाहा, तब भरतसागर जी ने वात्सल्य पूर्वक उन्हें मार्गदर्शन दिया और कहा कि विमल सभा भवन बनाने की घोषणा कर सकते हो, किन्तु पहले गुरुदेव से आज्ञा अवश्य ले लेना। यदि वे मना करें तो मेरी प्रेरणा बतला देना।

जब भक्तगण गुरु के पास गए उन्हें पूरी चर्चा सुनाई तो वे कुछ अधिक न बोल सके, इतना ही कहा- जब भरतसागर जी की प्रेरणा है तो में क्यों मना करूँगा।

इस क्षेत्र पर एक दृश्य बनता था जब गुरुदेव शिष्य भरतसागर जी सहित सम्पूर्ण संघ के साथ बैठकर स्वाध्याय या प्रतिक्रमण अथवा अध्ययन करते तो अनेक श्रावक उस दृश्य को देखने को और संघ के दर्शन करने घंटे-डेड़ घंटे खड़े रहते थे। किसी योग्य कार्यकर्ता ने वह दृश्य स्थायी करने की दृष्टि से एक बड़ा चित्र भवन की दीवाल पर बनवा दिया है जिसमें आज भी गुरु-शिष्य साथ- साथ स्वाध्याय कर रहे हैं।

सोनागिरी प्रवास में एक और विलक्षण दृश्य बना था, आचार्य

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

विमलसागर जी का जन्म कोसमा में हुआ था तब मुण्डन संस्कार के लिए उनके माता - पिता शिशु को सोनागिरी ही लाए थे तब उस शिशु का नाम नेमीचंद था। वही नेमीचंद उस वर्ष सन्1978 में, उसी क्षेत्र पर महान योगी और महाचार्य के रूप में केश लोंच कर रहे थे उन्हें देखकर उनके प्रिय शिष्य मुनि भरत सागर जी भी अपना केश लोंच करने लगे । वह दृश्य अप्रतिम था। जिसे एक सुधि-कार्यकर्त्ता ने भवन के चित्र-खण्ड नामक कक्ष में बनवाया है।

मुनि भरतसागर का स्पष्टीकरण -

एकबार कुछ भक्तगण मुनिवर के पास पहुँचे और पूँछने लगे कि आपके गुरुदेव को लोग संकट मोचक क्यों कहते हैं ? प्रज्ञापुंज पूज्य भरतसागर जी क्या भटक सकते हैं अत: उन्होंने धैर्यपूर्वक बतलाया- धर्मधारण करने और कराने वाले परम पूज्य आचार्य गुरुदेव विमलसागर जी का एक और विराट रूप है जिसे केवल भक्तगण जानते हैं, बारीकी से अध्ययन करने के बाद ज्ञात हुआ कि अनेक मनुष्यों को दैहिक और भौतिक संकटों तथा समस्याओं का समाधान आवश्यक होता है अत: जब वे सहजता से अपने इष्ट के समीप समय पर लाभ प्राप्त नहीं कर पाते तब वे पंडित लोग मिथ्यामार्ग पर चलकर झाड़-फूँक करवाते हैं। ऐसे लोगों को वहाँ से ठोकरें लेने के बाद अन्य-अन्य स्थानों पर पनाह खोजनी पड़ती है, जिससे वे समय और धन का अपव्यय तो करते ही हैं भ्रष्ट जीवन भी जीने लगते हैं। उन्हें धर्म पथ पर बने रहने और उनकी वेदनाएँ समाप्त करने की दृष्टि से आचार्य श्री ने णमोकार मंत्र की माला फेरने का ढंग बतलाया है। गुरुदेव की शरण में आने का अर्थ है महामंत्र णमोकार की कृपा छाया में आना ।

गुरुदेव जी देश के किसी भी स्थान में होते हैं तब भी दोपहर में घंटे भर का समय दुखियों के लिए अवश्य निकालते हैं। पीड़ित लोग पंक्ति

बनाकर वसतिका के समक्ष खड़े हो जाते हैं, गुरुदेव एक-एक को बुलाकर कष्ट सुनते, उसे उचित परामर्श देते, घरेलू नुस्खा, आयुर्वेदिक दवा और णमोकार महामंत्र की जाप बतलाते हैं। उनका आशीष पाने के बाद भक्तगण निरोग होने लगते हैं, परेशानियाँ उनसे विदा ले लेती हैं, उनके जीवन में सुख साता का प्रादुर्भाव हो जाता है फलतः वे सुख शांति से रहने लगते हैं।

गुरुदेव का यह उपक्रम चिकित्सा गुण के अंतर्गत है, अहिंसा धर्म के परिवेश में है, अतः वे भक्तगण उनका गुणगान करते रहते हैं, बार -बार उनके चरण सान्निध्य में आते हैं।

पूज्य मुनिवर ने आगे बतलाया- गुरुदेव जीवन की हर श्वॉस में अपनी गुरु परम्परा का ध्यान रखते हैं। उनका जैसा नाम है वैसा ही स्वभाव है और वैसे ही गुण विराजमान हैं। प्राणी मात्र के उपकार और उद्धार की भावना विमल सरोवर में सदा लहराती रहती है । वे अत्यंत सरल संत हैं, निर्दोष रीति से गुरु परम्परा का पालन करते हैं और अपने महान गुरू समाधिस्थ संत परम पूज्य आचार्य श्रेष्ठ महावीर कीर्ति जी महाराज की सिंहवृत्ति के धारक, निर्भीक, आगम निष्ठ, शुद्ध आहार पद्धति के प्रणेता, सज्जातित्त्व के प्रशंसक एवं सम्पूर्ण आचार्यत्व के स्वशासक है। उनके श्री चरणों में अनपढ़ और विद्वान, निर्धन और धार्मिक बराबरी से स्थान पाते हैं, भेदभाव का दस्तूर उनके दरवार में नहीं रहता। बंद कक्ष में एक श्रावक से बात करते हुए दूसरे श्रावकों से प्रतीक्षा नहीं करवाते ।

शिष्य के मुख से अपने गुरुदेव के विषय में उच्च विचार और सत्य जानकारी युक्त शब्द सुनकर उपस्थित श्रावक गद्‌गद् हो गए। सोचने लगे- शिष्य महान हो तो वह गुरु की महानता का गुणगान भक्ति भाव करता है, ये उनके महान शिष्य तो है ही, शिष्योत्तम भी है। कुछ इसी

तरह की धारणाएँ जब मुनिवर के प्रति अनेक शहरों में बन गई तो धीरे-धीरे सम्पूर्ण देश का जैन समाज उन्हें शिष्योत्तम कहने लगा। अलंकरण का क्रम बाद में आया था।

समय की गति अपनी जगह थी, संघ की क्रियाएँ अपनी जगह, वर्षायोग की अवधि पूर्ण हो गई । सोनागिर के पावन क्षेत्र में उस वर्ष आचार्य कुन्थुसागर जी एवं आर्यिका विजयमति माताजी ने भी ससंघ वर्षायोग किया था। मुनिवर भरत सागर जी समय निकालकर उनसे मिलते थे, कभी-कभी आचार्य कुन्थुसागर या आर्यिका विजयमति जी जब आचार्य विमल सागर के दर्शन करने आते तो मुनिवर भरत सागर जी से भी मिलकर अत्यन्त प्रसन्न होते थे।

विहार बुन्देलखण्ड की ओर -

वर्षायोग पूर्ण हुआ तो गुरुदेव विमलसागर जी के मन में बुन्देलखण्ड की तीर्थ यात्रा की भावना हो आई, शाम तक शिष्य भरत सागर जी से मंत्रणा की फिर दोनों संत ससंघ निकल पड़े। बुन्देलखण्ड के धर्मायतनों की ओर। कार्यकर्ताओं ने सुंदर व्यवस्था बनाई फलतः शीतकाल से लेकर ग्रीष्मकाल तक का समय तीर्थ वंदना से सज गया। सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड उनका स्पर्श पा खिल उठा । संघ के चरण पुनः सोनागिर की ओर पड़े।

पुनः चातुर्मास सोनागिर में - 1979 -

तपस्वियों के चरण ऐसे सक्रिय हुये कि पन्द्रह दिन का रास्ता दस दिन में पूर्ण कर लिया फलतः श्रुत पंचमी का पावन समारोह सोनागिर के पावन प्रांगण में आयोजित करने का क्षण मिला कार्यकर्त्ताओं को। इसी क्रम में, सुनिश्चित समय पर चातुर्मास की स्थापना की गई। धीरे-धीरे पर्यूषण पर्व का समय शुरु हो गया, तब पूज्य भरत सागर जी को अपने गुरुदेव का चौंसठवाँ जन्मदिवस समारोह मनाने का भाव

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

हुआ। उन्होंने वर्षायोग समिति के अध्यक्ष महोदय से चर्चा करते हुए संकेत किया कि व्रतों के बाद आश्विन (कुंवार) कृष्ण सप्तमी को अवतरण दिवस है। फिर क्या था सम्पूर्ण समाज, समितियाँ, संस्थान, मिलजुलकर समारोह की तैयारी में लग गये ।देश में फैले हजारों भक्तों को तिथि ज्ञात थी अतः सभी ने अपने-अपने नगर में उत्सव मनाने का उत्साह युक्त पुरुषार्थ किया फिर भी सैकड़ों भक्तगण ऐन मौके पर अपना नगर छोड़कर गुरुदेव के नगर सोनागिरी जा पहुँचे । सोनागिर की धर्मशालाएँ सुहागवती की गोद की तरह भर गई। खाली पड़े रहने वाले अतिथि गृह भक्तों के भजनों से गूँजने लगे। ठीक सप्तमी के दिन पूज्य भरत सागर के सान्निध्य में गुरुदेव का जन्मोत्सव मनाया गया। चौंसठ दीपकों से चौंसठ श्रावक परिवारों ने गुरुदेव की आरती उतारी। पूज्य भरतसागर जी ने गुरुदेव की आज्ञा पालन की, साथ दिया हजारों भक्तों ने। यह थी आयोजकों की पूर्ण तैयारी। मगर गुरुदेव के मन में कोई पृथक तैयारी चल रही थी जिसका आभास किसी को नहीं था।

उपाध्याय पद -

7 सितम्बर 1979 का दिन था, लोगों को आश्चर्यचकित करते हुए आचार्यश्री ने भरत सागर जी की ओर आशीर्वाद के लिए हाथ उठाया और बोले- आज भरत जी को उपाध्याय पद दे रहा हूँ। वाक्य सुनते ही हजारों हाथों से तालियों की सुदीर्घ गर्जना हुई। शीघ्र ही गुरुदेव ने चर्तुविध संघ की सम्मति ली उपस्थित जन समूह की सम्मति ली फिर तत्त्व-चिंतक भरतसागर जी की सम्मति ली, तुरंत प्रतिष्ठाचार्यगण सामग्री लेकर गुरुदेव के समीप उपस्थित हो गए। गुरुदेव ने दीक्षा विधि के संस्कारों के साथ पुष्प क्षेपण करते हुए शिष्योत्तम भरतसागर जी को उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित किया। पुनः तालियाँ, पुनः जय जयकार कुछ क्षणों तक ऐसा लगा जैसे कोई सैन्य दल अपने आयुधों

से विरोध कर रहा हो। भारी उत्साह से सम्पन्न उस कार्यक्रम की चर्चा आज भी भक्तगण श्रद्धा पूर्वक करते हैं।

धर्म की सरिताएँ गुरु मुख से बह रहीं ज्ञान की तरंगे उपाध्याय की उपस्थिति से क्षण- क्षण उठती रहीं और वर्षायोग की अवधि पूर्ण हो गयी।

चरण श्रवण बेलगोला की ओर -

आचार्य श्री ने नूतन उपाध्याय के साथ सोनागिर से विहार कर दिया, पीछे-पीछे सम्पूर्ण संघ के पीछे सैकडों भक्तगण। यात्रा लंबी थी गुरुदेव को पग-पग चलकर भगवान गोमटेश के द्वार पहुँचना था जहाँ करीब डेढ़ वर्ष बाद 22 फरवरी 1981 को सदा की तरह विश्व विख्यात महामस्तकाभिषेक महोत्सव प्रस्तावित हो चुका था। श्रवण बेलगोला के विश्व विख्यात भट्टारक जी की मंगलमय आमंत्रण पत्रिका गुरुदेव के समक्ष पहले ही पहुँच चुकी थी, अनेक समितियों के शिष्ट मंडल पूर्व में ही आकर श्रीफल अर्पित कर चुके थे, अतः गुरु शिष्य को दक्षिण की ओर निरंतर विहार करना आवश्यक लगा। यात्रा सहज नहीं थी, सहस्र मील से अधिक थी। गली-गली हर शहर और गाँव को एक साथ तीन परमेष्ठियों के दर्शन उपलब्ध हो रहे थे- आचार्य, उपाध्याय और साधु। धन्य था वह संघ, इतना ही नहीं परमेष्ठी के साथ-साथ आर्यिका माताएँ और ऐलक, क्षुल्लकगण थे।

संघ लगभग 6 माह तक चला। करगुवाँ, झांसी, ललितपुर, माल्यान होते हुए ईसरदा, बारां, सागर, कुण्डलपुर, देवगढ़, थूवौनजी, बजरंगगढ़, गुना, अशोकनगर, वनेड़िया जी, मक्सी पार्श्वनाथ, उज्जैन, इन्दौर, सनावद, सिद्धवरकूट, पावागिरि, ऊन, वड़वानी, मांगीतुंगी, गजपंथा होते हुए गुरु-शिष्य की विख्यात जोड़ी ससंघ नीरा नगर पहुँची वह 18 जून 1980, शुक्रवार का दिन था आषाण शुक्ल षष्ठी गुरुदेव ने

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

स्थानीय समाज के अनुरोध को स्वीकार करते हुए वहाँ ही वर्षायोग सम्पन्न किया।

नीरा नगर समाज गुरु-शिष्य से बहुत प्रभावित हुआ था। लोग उपाध्याय श्री को घेरे रहते थे। उनके प्रवचनों के माध्यम से अपना परिज्ञान बढ़ा रहे थे। धीरे-धीरे समाज को एहसास हुआ कि उनके यहाँ उपाध्याय श्री के रूप में साक्षात् ज्ञान सूर्य उपस्थित हैं अत: क्यों न ऐसे महान साधु को हम अपनी भक्ति और श्रद्धा के रूप में कोई स्थायी वस्तु प्रदान करें मगर दिगम्बर संत किसी से कोई वस्तु स्वीकार नहीं करते अत: वहाँ के प्रबुद्ध जनों ने एक रास्ता निकाला तब 'ज्ञानदिवाकर' की उपाधि के अलंकरण से विभूषित किया। सभी विद्वानों ने अपने कथन के माध्यम से उन्हें ज्ञान दिवाकर पद से विभूषित किया।

निस्पृह संत उपाध्याय भरतसागर जी आश्चर्य में पड़ गए, फिर बोले- तुम्हारी ये उपाधि और अलंकरण लेकर क्या करूँगा? मुझे कुछ नहीं चाहिए मुझे मेरे गुरु की छत्र छाया मिलती रहे यही मेरा श्रेष्ठ अलंकरण होगा।

उपाध्याय श्री आदि-व्याधि-उपाधि के विषय में सदा उदासीन रहे हैं, वे एक ही बात कहते थे कि लोग पोशाक के ऊपर रजत पदक लगाकर अपनी विशेषता जाहिर करते हैं, मैं रजत पदक नहीं, केवल गुरुपद अपने हृदय में रखकर खुश हूँ।

चातुर्मास पूर्ण होते ही कदम पुन: श्रवणबेलगोला की ओर हो पड़े। इस यात्रा में पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी ने अनेक नगरों में प्रवचन किए।।एक नगर में उन्होंने कहा- रूढ़ियों से अधिक महत्त्वपूर्ण आगम है, रूढ़ि का सत्य स्पष्ट नहीं होता; किन्तु आगम त्रिकाल सत्य का कथन करता है अत: पंथवाद के नाम पर आगम को मोड़ते रहना

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

अज्ञानता का प्रतीक है। जो संत या श्रावक आगम के अनुकूल चलता है, अनुकूल क्रिया करता है, वह कभी धोखा नहीं खाता, अपमानित नहीं होता, न ही अवांछित दुख पाता है।

इसी तरह जब संघ इंदौर में था तब आचार्य श्री और उपाध्याय श्री ने साथ-साथ केश लोंच कर धर्म की भारी प्रभावना की थी। सारा समाज दर्शनार्थ उमड़ पड़ा था। संघ में 22 पिच्छियाँ थीं। उस समय में इतना बड़ा संघ देखकर लोगों को हर्ष युक्त कौतूहल होता था।

गुरु-शिष्य की जोड़ी हर नगर में मोह का बंधन काटती हुई बढ़ती चली गई। धीरे-धीरे कुंभोज-बाहुवली पहुँच गए, वहाँ समकालीन आचार्य समन्तभद्र से मिलन हुआ। एक ही दिन में आचार्य समन्तभद्र उपाध्याय भरतसागर जी से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने अपनी आत्मा में उपजे वात्सल्य से उपाध्याय श्री का अदृश्य अभिषेक कर दिया।

गुरु-शिष्य नित्य चल रहे थे अतः स्तवनिधि होते हुए पहुँचे-कोथली। जो आचार्य देशभूषण की जन्म भूमि में ही थे अतः भावपूर्ण समाचारी हुई। लगा उत्तर दिशा दक्षिण दिशा से मिल रही है और दोनों दिशाओं के मिलन का अवलोकन मध्य भारत वाले उपाध्याय भरत सागर जी कर रहे हैं। वह शीतकाल का समय था किन्तु श्री संघ का अनुभव सिद्ध कर रहा था कि वे बसंत ऋतु की गोद में हैं और पल-पल प्रसन्न हैं। श्रवणबेलगोला अब अधिक दूर नहीं था अतः गुरु-शिष्य ससंघ चलते गए। वहाँ उपस्थित ऐलाचार्य पूज्य विद्यानंद जी तब वे आचार्य नहीं थे ने ससंघ अगवानी की। क्षेत्र के भट्टारक जी सहित अनेक भट्टारक गण और त्यागीगण भी साथ में थे। अगवानी और संत मिलन के पश्चात् गुरु-शिष्य के संघ को क्षेत्र भंडार वसदि में ठहराया गया। दूसरे दिन से क्षेत्र में आए हुए अनेक संघों से वार्ता का क्रम शुरु हुआ। धीरे-धीरे 250 पिच्छिकाएँ दृष्टिगोचर होने लगीं, सभी साधु

और आर्यिका माताएँ उपाध्याय भरत सागर जी से बातें करने को लालायित हो रहे थे।

वहाँ उपस्थित हजारों श्रावकों के साथ- साथ समस्त संतों और भट्टारकगणों को यह जानकर भारी खुशी हुई कि महोत्सव के मुख्य कर्णधार ऐलाचार्य श्री विद्यानंद जी आचार्य विमलसागर जी उपाध्याय भरतसागर सहित आचार्य कुन्थुसागर से मंत्रणा करते रहे हैं।

एक दिन जबलपुर के एक श्रावक ने पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी से पूछा कि इस जग प्रसिद्ध प्रतिमा का अभिषेक- जल से क्यों नहीं किया जाता, पंचामृत अभिषेक ही क्यों किया जाता है? तब पूज्य उपाध्याय श्री ने बताया- हरिवंश पुराण देखिए जिसे प्रातः स्मरणीय परम पूज्य आचार्य 108 श्री जिनसेन स्वामी जी ने रचा है, उसके बाइसवें सर्ग में श्लोक क्रमांक 21 से 23 में स्पष्ट वर्णन है कि जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक क्षीर, इच्छुरस, दधि, घृत और जल से किया जाता है। उत्तर सुनकर वह धन्य हो गया।

नियत समय पर राष्ट्र स्तरीय कार्यक्रम महामस्तिकाभिषेक सम्पन्न किया गया और अभिषेक से उठी पवित्र वर्गणाएँ देश की हर दिशाओं में फैलती गईं ।

महोत्सव के बाद कुछ माह तक गुरु-शिष्य महासंघ ने दक्षिण के समीपवर्ति तीर्थों के दर्शन किए जिनमें कदम्बहल्ली, रंगपट्टन, मैसूर, कनकगिरि, गोमटेशगिरि, शालीग्राम आदि स्थान प्रमुख थे। निरंतर तीर्थ वंदना के पश्चात गुरु-शिष्य लौट पड़े श्रवण बेलगोला की ओर।

श्रवणबेलगोला चातुर्मास -1981- आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी का क्षेत्र ने, बल्कि अन्य आचार्यगण, ऐलाचार्य, एवं आर्यिका माताओं ने सभी साधुओं के दर्शन कर रहे थे बाद में उन्होंने बतलाया क्षेत्र पर 42 पिच्छियों ने चातुर्मास की स्थापना की है, वह 16 जुलाई 1981 का

दिन था।

सकल - संघ - साधु अपनी - अपनी गुरू- परम्परा का अनुशरण करते हुए चातुर्मास क्रियाओं में लीन हो गए। ऐलाचार्य श्री विद्यानंद जी महाराज ससंघ गुरु-शिष्य के साथ सामूहिक स्वाध्याय करते थे फलतः समस्त साधुओं को तत्त्वचिन्तन और ज्ञानवृत्ति के नए-नए अनुभव होने लगे।

श्रवण बेलगोला के सुरम्य वातावरण में जब वर्षायोग अवधि पूर्ण हो गई तो सभी संतों ने निष्ठापना क्रिया की । फिर विहार का अभियान शुरू हुआ। पूज्य विमलसागर, पूज्य भरतसागर जी आदि साधुओं की भाव-भीनी विदाई कर जब श्रद्धेय भट्टारक जी क्षेत्र सीमा में वापिस आए तो उन्हें सारा परिसर सूना- सूना लगा। अनेक माहों तक संतों के सान्निध्य में रहनें के पश्चात उनका पावन- सानिध्य वे नहीं भूल पा रहे थे।

गुरु शिष्य ससंघ विहार करते हुए तीर्थ क्षेत्र- धर्मस्थल पहुँचे जहाँ श्री हेंगड़े जी उनके स्वागतार्थ 'पलक पावड़े' बिछाये हुए प्रतीक्षा कर रहे थे, भव्य अगवानी के बाद 22 पिच्छियों का विशाल-संघ क्षेत्र स्थित वस्तिकाओं में ठहर गया ।कुछ ही दिनों में अनेक कार्यक्रम संपन्न हुए। संघ विहार करते हुए उत्तर भारत की ओर जाना चाहता था, रास्ते में हासन, मूलबद्री, कारकल, वरांग, कुन्दकुन्दादि, नरसिंगपुर, हुम्मच, बीजापुर, आदि स्थानों को समय दिया। बीजापुर में गुरु-शिष्य ने विख्यात सहस्रफणी- पार्श्वनाथ की वंदना की, फिर विहार कर उदार खुर्द नगर में प्रतिष्ठा समारोह को सान्निध्य प्रदान किया। पुनः संघ के कदम बढ़े श्री अतिशय क्षेत्र कुंभोज की ओर। यह चारित्र चक्रवर्ती परम पूज्य आचार्य प्रवर शांतिसागर जी महाराज की जन्मभूमि है। फिर अक्कवाट के समाधि स्थलों की वंदना करते हुए सांगली, कलिकुंड

पार्श्वनाथ, सतारा पहुँचे। वहीं बम्बई से आए प्रतिनिधियों ने आचार्य श्री से बम्बई में वर्षायोग करने की प्रार्थना की, वे सभी श्री शांतिसागर स्मारक ट्रस्ट पोदनपुर, बम्बई से संबंधित थे।

जिन चरणों को उत्तर भारत की ओर जाते हुए समझा जा रहा था, वे महाराष्ट्र की ओर हो गए। सोलापुर होते हुए संघ के चरण पोदनपुर की सीमा में जा पहुँचे। जहाँ जैन समाज के उद्योगपति, साहित्यकार, कलाकार और विद्वतगण एक साथ उपस्थित होकर अगवानी कर रहे थे।

पोदनपुर चातुर्मास - 1982 -

पूज्य उपाध्याय भरतसागर जी सदा की तरह अपने गुरुदेव की छाया बने हुए थे। संतों ने भारी उत्साह के साथ वर्षायोग स्थापना की। नितप्रति नए- नए कार्यक्रम आकार पाने लगे। हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी आसोज (कुंवार) कृष्ण सप्तमी के दिन पूज्य उपाध्याय श्री के सान्निध्य में गुरुदेव का जन्मोत्सव मनाया गया।

गुरु-शिष्य की जोड़ी अत्यंत क्रांतिकारी किन्तु समन्वयवादी विचार लेकर चलती थी फलत: वर्षायोग के बाद पोदनपुर के समीप घाटकोपर स्थित सर्वोदय तीर्थ के अंतर्गत दिगम्बर जैन मंदिर में तीर्थंकर मूर्ति की स्थापना एवं प्रतिष्ठा कराई। यह तीर्थ श्वेताम्बर समाज की व्यवस्था के अंतर्गत है। 18 दिसम्बर 1982 को गुरु शिष्य वहाँ पहुँचे और समारोह को सान्निध्य प्रदान किया।

धीरे-धीरे वर्ष पूर्ण हो गया, गुरु-शिष्य के चरणों में सन् 1983 का आगमन हो गया। तभी पोदनपुर बोरीवली स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में 10 वें महामस्तिकाभिषेक को सान्निध्य प्रदान करने समिति ने गरु-शिष्य से प्रार्थना की फलत: 2 फरवरी 1983 को वह महोत्सव भी निर्विघ्न संपन्न हुआ।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

हवा कब दिशा बदल दे कोई नहीं जानता, इसी तरह संत कब गली बदल दें, कोई कुछ नहीं कह सकता। जो लोग अनुमान लगा रहे थे कि, गुरु शिष्य की जोड़ी उत्तर भारत की ओर जायेगी, वे वेचारे गलत सिद्ध हो गए, क्योंकि जोड़ी जा पहुँची महाराष्ट्र में उनके चरण उठे तो पुनः लोग कयास लगाने लगे कि अब मध्य भारत की ओर जायेंगें, परन्तु जोड़ी निकल गई दक्षिण की ओर, चरण थे औरंगाबाद की दिशा में।

गुरु-शिष्य करीब आठ माह बम्बई में रुकने के बाद 4 फरवरी 1983 को वहाँ से विहार कर गए। फलटण नगर, दही गाँव अकलूज, पंडहरपुर, मानकेश्वर आदि स्थानों के जिन-मंदिरों का वंदन करते हुए संघ कुन्थलगिरि पहुँचा। यह चारित्र चक्रवर्ती पूज्य शांतिसागर जी महाराज का समाधिस्थल है। जब पूज्य उपाध्याय भरतसागर जी ने क्षेत्र पर वयोवृद्ध मुनि पूज्य वृषभसागर जी को सल्लेखना में देखा तो वे क्षपकराज की समुचित वैयावृत्ति करने में जुट गए, उन्हें विशेष अनुभव था। क्षेत्र पर ही गुरु शिष्य ने श्रुत-पंचमी पर्व मनाया फिर तप्त सड़कों पर चलते हुए अतिशय क्षेत्र पैठण पहुँचे अतिशय क्षेत्र कचनेर, आडुल ग्राम होते हुए 12 जुलाई 1983 को गुरु-शिष्य औरंगाबाद की सीमा पर पहुँच गए

औरंगाबाद वर्षायोग 1983 -

नगर को स्वर्गपुरी की तरह सजाया गया था। हर चौरस्ते पर तोरण द्वार और हर गली में वंदनवार शोभा विखेर रहे थे। समाज ने अगवानी विशाल शोभायात्रा के साथ संघ का नगर प्रवेश कराया।

पहुँचते ही गुरु-शिष्य ने समाज को धार्मिक उपहार स्वरूप अष्टाह्निका पर्व में वृहद- सिद्धचक्र विधान कराया और धर्म प्रभावना बलवती की। उसी क्रम में 23 जुलाई 1983, आषाण शुक्ल

चतुर्दशी को संघ ने सम्पूर्ण समाज की उपस्थिति में सोना-मंगल - परिसर में चातुर्मास स्थापना की। सारा नगर उनकी जयकार कर रहा था।

पर्यूषण पर्व के बाद प्रतिवर्ष की तरह पूज्य उपाध्याय श्री ने अपने गुरुदेव का जन्मोत्सव सम्पूर्ण समाज के साथ मनाया और मंगलमय सान्निध्य प्रदान किया। उस दिन पूज्य उपाध्याय श्री ने अपने प्रवचन में बतलाया कि मैं गुरुदेव से दीक्षा पाकर धन्य हो गया हूँ आज उनका जन्मदिन है। यह आप सब जानते हैं मगर मेरा जन्म तो मैं दीक्षा के बाद ही मानता हूँ। तदनुसार गुरू आशीष से में 6 सितम्बर 1972 को सम्मेद शिखर जी में उत्पन्न हुआ था। तब से अब तक गुरुदेव के साथ रहकर दीक्षा का जो अर्थ समझा हूँ वह इस तरह है- दीक्षा, दीनता को क्षय करती है, वीरता को जगाती है, भिक्षा का संकल्प कराती है, समता को साधती है, साधक को तपाती है,संयम का पालन कराती है और अंत में मोक्षमार्ग पर पहुँचाती है। वह दीक्षा कहलाती है।

वर्षायोग पूर्ण होने पर गुरु-शिष्य सहित महासंघ ने विहार कर दिया एवं कठोर सड़कों को मृदुल स्पर्श देते हुए, 8 नवम्बर 1983 को अतिशय क्षेत्र कचनेर पहुँचे। कुछ ही दिन बाद क्षु. श्री पूर्ण सागर जी वर्तमान में पूज्य गणाचार्य विराग सागर जी ब्र. श्री कुमार जी के साथ गुरु-शिष्य के समक्ष पहुँचे आकर उनके चरणों में नमोस्तु किया। हुआ फिर वार्ता का आदान-प्रदान वहाँ ही क्षु. जी की मुनि दीक्षा की योजना बनी थी जिसका पूज्य उपाध्याय श्री ने समर्थन किया था।

औरंगाबाद में पुनः पधारे - संघ में 22 पिच्छि तो थीं ही, क्षुल्लक जी के आने से 23 हो गईं। सभी मिलकर गुरु-शिष्य के साथ, शीत से संघर्ष करते हुए औरंगाबाद पहुँचे। 9 दिसम्बर 1983 को उपाध्याय श्री के अनुरोध के पश्चात् आचार्य विमलसागर जी ने क्षु.

पूर्णसागर जी को दिगम्बरी दीक्षा से दीक्षित कर मुनि विराग सागर नाम करण किया एवं ब्र. श्री कुमार जैन को ऐलक दीक्षा देकर ऐलक सिद्धांत सागर नामकरण दिया, इस अवसर पर आचार्य श्री एवं उपाध्याय श्री के प्रवचन भी हुए। उपाध्याय श्री भरतसागर जी ने कहा-ये दो साधक कर्मों का क्षय कर मोक्ष पथ तक जा सकते हैं इसके लिए इन्हें रत्नत्रय-धर्म को पल-पल धारण करना होगा, व्रतों का पालन करना होगा, आगम में वर्णित तपों को तपना होगा, आत्मा में ध्यानस्थ रहना होगा और पापों का प्रक्षालन करना होगा तब मोक्षमार्ग तक पहुँचेंगे। अंत में उन्होंने एक काव्य कहा-

चेतन चित परचय बिना, जप तप सबै निरत्थ।
कण बिन तुष जिम फटकते, कछू न आवें हत्थ।।

कुछ दिन बाद औरंगाबाद की गरिमामयी हवाओं के गीत हुए, गुरु और शिष्य ने 42 पिच्छियों सहित विहार कर दिया। ओंडा, सीरड शाहपुर नवागढ़, जिंतूर, सिरपुर, अंतरिक्ष पार्श्वनाथ आदि स्थानों पर गए। संघ की धर्मयात्रा आगे बढ़ी और पावागढ़ होकर शत्रुंजयगिरि-सिद्ध क्षेत्र पहुँचे। फिर भावनगर पहुँचने पर पूज्य उपाध्याय श्री ने आचार्य श्री को पालीताना चलने का अनुरोध किया। कुछ दिन के लिए पुनः भावनगर आ गए, फिर मुक्ति की याद दिलाने वाले पावन क्षेत्र मुक्तागिरि पहुँचे। फिर अतिशय क्षेत्र महुआ जी में विघ्नेश्वर पार्श्वनाथ भगवान की अतिशयकारी प्रतिमा के दर्शन किए। गए फिर सूरत। संयोग से श्रीमंत श्रीपाल जी, उसकी भार्या श्रीमत कैलाशी बाई और सुपुत्र श्री राजेन्द्र कुमार आर. के. जैन सपरिवार गुरु शिष्य के दर्शनार्थ पहुँचे। श्रीपाल जी तब दिल्ली वाले सेठ कहलाते थे।

राजेन्द्र कुमार कई वर्ष बाद आर. के. जैन बम्बई के नाम से विख्यात

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

हुए। इस परिवार ने गुरु शिष्य संघ को गिरनार वंदना कराने की भावना रखी, फलतः समाज ने उन्हें संघपति अलंकरण प्रदान कर सम्मानित किया।

संघपति जी छाया बनकर गुरु-शिष्य-संघ के साथ चले। पूजा की द्रव्य एवं चौका की सामग्री वाहनों पर साथ-साथ चल रही थी, फलतः सूरत से गिरनार जी तक किसी वस्तु का अभाव नहीं हो सका। संघपति के प्रयास से जंगल में भी नगर जैसा वातावरण बना रहा। गिरनार वंदना के समय आचार्य श्री विमलसागर जी के पैर में भारी पीड़ा थी, साइटिका से परेशान थे। उपाध्याय भरत सागर जी उनका हाथ पकड़े रहते थे और उनके साथ धीरे- धीरे चलते थे। संघपति जी दोनों का ध्यान रखते थे ।

गिरनार वंदना -

गिरनार वंदना के बाद लोग समझ रहे थे कि गुरुदेव का दर्द देखते हुए पूज्य भरत सागर जी कुछ दिन रुकेंगे, किन्तु भरत सागर जी गुरु का पुरुषार्थ जानते थे, अतः न रुक सके और कदम बढ़ा दिए पावागढ़ की ओर। यहाँ भी पहाड़ की चढ़ाई थी किन्तु गुरु शिष्य वीरता पूर्वक चर्या का निर्वाह करते रहे और वंदना पूर्ण की। फिर भावनगर और घोघा होते हुए सोनगढ़ पहुँचे। मुनि विराग सागर जी भी वहाँ जा पहुँचे। दूसरे दिन दोपहर में आचार्य विमल सागर, उपाध्याय भरत सागर और मुनि विराग सागर जी के प्रवचन हुए। गुरु-शिष्य संघ ने वहाँ से चलकर तीर्थराजशत्रुंजय, जो उपसर्ग- विजयी पाण्डवों की सिद्ध भूमि, की वंदना की। आचार्य श्री के दर्द को देखते हुए सभी जन उनसे रुकने का अनुरोध करते थे किन्तु वे कहीं न रुके और पुनः दर्द को रौंदते हुए, पावन भूमि गिरनार जी की ओर चल दिए। लक्ष्य था वर्षायोग का।

गिरनार वर्षायोग 1984 - 'गुरु-शिष्य -संघ' 15 जून 1984

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

को गिरनार जी की पवित्र धरती पर पहुँच गया। आचार्य श्री निर्मल सागर जी ने ससंघ आगवानी कर दर्शन किए। 70 वर्ष के आचार्य विमल सागर और उनके शिष्य भरत सागर ने एक दिन भी आराम नहीं किया और सुबह 5 बजे पर्वतराज की वंदनार्थ निकल पड़े ।कुछ दिन बाद आषाण शुक्ल चतुर्दशी को वर्षायोग स्थापना की। फिर चला धार्मिक-कार्यक्रमों का प्रभावना पूर्ण क्रम और तपः पूर्ण चातुर्मास क्रियाएँ। व्रत, उपवास, मौन, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण, गुरु भक्ति, प्रवचन। क्षेत्र पर रक्षा बंधन पर्व उपाध्याय श्री के प्रवचनों के साथ धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

इसी बीच पूज्य उपाध्याय श्री भरत सागर जी ने गुरुदेव के जन्मोत्सव मनाने की योजना संघपति सहित अन्यान्य भक्तों को बतलाई, अतः कार्यकर्ताओं ने देश के कोने-कोने से आने वाले भक्तगणों के लिए आवास व्यवस्था हेतु क्षेत्र की धर्मशालाएँ, जैन भवन, जैनशालाएँ, एवं अन्य संस्थाओं के भवन आदि तय कर लिए।

16 सितम्बर से 18 सितम्बर तक पूज्य भरत सागर जी के सान्निध्य में गुरुदेव की जन्म जयंती मनाई गई। हर प्रांत के भक्त वहाँ उपस्थित हुए। सैकड़ों की संख्या में त्यागी-व्रती जन भी पहुँचे ।संघपति श्रीपाल जी का उद्‌बोधन हुआ, आर्यिका स्याद्वादमति माताजी के प्रवचन हुए उसके बाद उपाध्याय भरत सागर जी का वचनामृत सुनने मिला- यह संसार एक रंग भूमि है, नाट्यशाला है, जहाँ हर जीव अपना कर्त्तव्य, अभिनय पूर्णकर अपनी-अपनी दिशा को चला जाता है। आचार्य श्री शिष्यों को साधक बनाने के लिए महान कर्त्तव्य कर रहे हैं, हम सब उनकी कृपा से आत्म विकास करे रहे हैं, वे उस माँ की तरह हैं जो संतान को जन्म दे सकती है; किन्तु संतान के कर्ममल कम नहीं कर सकती । यहाँ प्रत्येक जीव को अपने-अपने कर्मों का फल अकेले ही भोगना

होता है ; चूँकि हमारे साथ गुरुदेव उपस्थित हैं अत: उनके ज्ञानप्रकाश से कर्म काटने का मार्ग दिख जाता है। यह गुरु की श्रेष्ठ अनुकम्पा होती है।

वर्षायोग पूर्ण होने पर गुरु-शिष्य संघ श्री पार्श्वनाथ अणिंदा की ओर चल पड़ा। रास्ते में तारंगा जी, अहमदाबाद, देलवाड़ा और उदयपुर को समय दिया।

अणिंदा में एक दिन आचार्य श्री जब प्रवचन करने वाले थे तो अचानक विद्युत गुल हो गयी, लोग उनकी वाणी सुनने आकुल व्याकुल हो उठे गुरुदेव की तरह उनके शिष्य भरत सागर जी भी निमित्त ज्ञानी थे, उन्होंने भक्तों की आकुलता समय रहते जान ली, अत: प्रमुख कार्यकर्ता से बोले- आप आचार्य श्री के समक्ष माइक रख दीजिए। विद्युत आ जावेगी। आचार्य श्री विद्युत की अपेक्षा करते हुए कीर्तन करने लगे जिसकी पंक्तियाँ भक्तों को दुहरानी थी। आचार्य श्री ने पहली पंक्ति ही कही और विद्युत आ गईं। माईक जीवंत हो उठा। सो गुरुदेव प्रवचन हेतु मंगलाचरण करने लगे। कार्यकर्तागण और उपस्थित हजारों श्रोतागण उपाध्याय श्री की भविष्यवाणी सच सिद्ध होती है। हर भक्त जानता था कि उपाध्याय श्री चिंतन-मनन करने वाले, पठन-पाठन करने वाले गुरु सेवा करने वाले महान साधक हैं, उनका दृष्टिकोण विशाल है, उनसे जो भक्तगण चर्चा कर लेते है, उन्हें आत्मिक शांति प्रदान होती है, वे आचार्य विमल सागर के संघ के सर्वश्रेष्ठ रत्न हैं।

अणिंदा से विहार कर गया संघ। चरण पहुँचे पलौद फिर देवपुरा को समय दिया। वहाँ तीन संघ एक साथ थे पूज्य विमल सागर जी का संघ, पूज्य अभिनंदन सागर जी का संघ एवं पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी का संघ। श्रुत पंचमी पर्व के अवसर पर वहाँ पहुँचे। लोहारिया में

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चातुर्मास हेतु जैन समाज के कार्यकर्तागण ने गुरु-शिष्य से लोहारिया में चातुर्मास करने की प्रार्थना की। कुछ दिन बाद विहार हुआ। चरण थे लोहारिया की ओर।

लोहारिया चातुर्मास - 1985 -

लोहारिया समाज जहाँ के लोग संयम की दृढ़ता में लोहा जैसा भाव रखते हैं गुरु-शिष्य की आगवानी के लिए उत्सुक था। लोहारिया का बेटा छोटेलाल जैन अब उपाध्याय श्री भरत सागर जी था। लोहारिया नगर को गर्व था कि उसकी धरती ने संयम शिरोमणि परम पूज्य उपाध्याय श्री भरत सागर जी जैसा महान संत देश को दिया है। आज वह महान सपूत उस गाँव में पहुँच रहा है जो उसका अपना है। गाँव का तिल-तिल और श्रावकों का रोम- रोम हर्षित है अपने सपूत को लोहारिया की गली में पाकर।

20 जून 1985 को लोहारिया का सपूत अपने गुरुदेव के साथ गाँव की सीमा तक पहुँच गया। वहाँ उपस्थित उपाध्याय अजितसागर जी तब आचार्य नहीं थे। अपने संघ सहित हजारों श्रावकों के साथ-साथ उनकी अगवानी के लिए गए। भाव-भीनी अगवानी हुई। विशाल शोभा यात्रा के साथ गुरु-शिष्य ने नगर प्रवेश किया। संयोग देखिए कि उस दिन नगर में 75 पिच्छियाँ उपस्थित थीं। सन् 1949 का छोटा सा लोहारिया सन् 1985 में गाँव नहीं, पूरा शहर बन चुका था।

1 जुलाई 1985 को संघ ने चातुर्मास की स्थापना की। चातुर्मास के दौरान संघस्थ ऐलक श्री निरंजन सागर जी एवं क्षु. अनंगसागर जी पूज्य उपाध्याय श्री से अपने वैराग्य विकास पर परामर्श करते थे। एक दिन उपाध्याय श्री ने गुरुदेव से अनुरोध कर दिया फलतः गुरुदेव ने उचित समय पर ऐलक जी और क्षु.जी को मुनि दीक्षा प्रदान की और नाम करण किया- मुनि निरंजन सागर एवं मुनि अमर सागर जी। इतना

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

ही नहीं, लोहारिया के ब्र. देवीलाल जी ब्र. शंकर लाल जी बहिन तुलसी बाई, बहिन भूरी बाई को भी दीक्षित किया और उन्हें नाम दिए -क्रमशः क्षु. देवसागर जी, क्षु. स्याद्वाद सागर जी, क्षुल्लिका धवलमति माताजी क्षुल्लिका मनोवती जी एवं क्षुल्लिका भरतमति जी। संघस्थ बहिन मुन्नी बाई को क्षुल्लिका जी की पर्याय प्रदान की। धर्म लहर के चलते उस दिन संपूर्ण नगर एक विराट मंदिर में परिणत हो गया।

लोहारिया के कार्यकर्ता उपाध्याय भरत सागर जी से कुछ निर्माण कार्यों पर मार्गदर्शन और आशीर्वाद लेने गए, उन्होंने उचित दिशा देते हुए गुरुदेव से वार्ता करा दी। गुरुदेव के आशीष से मंदिर परिसर में दो छतरियों और नौ चौकियों का निर्माण कार्य कराया गया, पश्चात तीर्थंकर पार्श्वनाथ, तीर्थंकर शांतिनाथ एवं तीर्थंकर वासुपूज्य की खड्गासन प्रतिमाएँ, स्थापित कराईं गईं। उपाध्याय श्री के निर्देश से गुरुदेव की जन्म जयंती मनाई गई, समारोह विशाल स्तर पर था। राजस्थान प्रदेश के तत्कालीन श्री हरिदेव जोशी ने उपस्थित होकर गुरुदेव की अर्चना की। राजस्थान में बांगड़ समाज का अपना महत्त्व है, समाज के कार्यकर्ताओं ने पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी के निर्देशानुसार उस मंच पर गुरुदेव को 'वात्सल्य मूर्ति' उपाधि से अलंकृत किया। नित नए कार्य कार्यक्रमों के साथ निष्ठापना का समय आ गया, संघ ने वर्षायोग निष्ठापना के कुछ दिन बाद लोहारिया से विहार किया।

20 दिसम्बर 1985 को धरियाबाद समाज ने नगर सीमा पर गुरु-शिष्य संघ की आगवानी शोभायात्रा के साथ कराया धरियावाद प्रवेश। कुछ ही दिन बाद श्री शांतिनाथ अतिशय क्षेत्र होते हुए प्रतापगढ़ और बासवाड़ा को स्पर्श कर संघ अंदेश्वर पार्श्वनाथ पहुँचा वहाँ के भक्त समुदाय ने पूज्य भरतसागर जी से विचार विमर्श कर पूज्य गुरुदेव को **'अतिशय योगी'** की उपाधि से विभूषित किया। धरियाबाद के

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

लोगों ने बतलाया कि उस समय संघ में कुल 31 पिच्छिकाएँ थीं जिनमें से 11 मुनि महाराज थे शेष आर्यिका, क्षुल्लक और क्षुल्लिका।

इन्दौर की ओर -

इन्दौर निवासी श्री बाबूलाल पाटौदी श्री कमल कुमार दोसी, एवं श्री माणिकचंद्र जैन धरियाबाद पहुँचे और आचार्य श्री विद्यानंद जी का संदेश सुनाया। उन्हें स्वीकृति मिल गई गुरु-शिष्य ने इन्दौरकी ओर प्रस्थान किया। धरियावाद से करीब 500 कि.मी. दूर इन्दौर नगर स्थित है, रास्ता की लम्बाई संघ के वृद्ध संतो को चिढ़ा रही थी; किन्तु संत की शक्ति का अंत नहीं। वे चलते रहे। श्री बगोला जी कुशलगढ़, बड़वानी, आदि स्थानों को समय देते हुए संघ इन्दौर गया और सन् 1986 में समायोजित किए जा रहे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा समारोह में शामिल हुए, जो फरवरी के अंतिम दिनों से लेकर मार्च के प्रथम सप्ताह तक था। पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी ने जानकारी ली तो स्पष्ट हुआ कि क्षेत्र पर 60 साधु संत विराजे हैं। नित्य लाखों लोग उपस्थित होते थे। समारोह के बाद उपाध्याय श्री के साथ गुरुदेव ने अनेक कॉलोनियों को समय दिया। वहाँ से प्रस्थान कर गुरु-शिष्य का संघ अतिशय क्षेत्र बनेड़िया जी होते हुए बड़नगर पहुँचा। वहाँ उपाध्याय भरत सागर जी ने केश लोंचन किया एवं साधु संतों को संयम उपकरण जुटाने में प्रसिद्ध टोंग्या परिवार को आशीर्वाद दिया।

संघ ने वहाँ से चलकर रतलाम, मंदसौर और भवानी मंडी को कृतार्थ किया। भवानी मंडी, संघस्थ साधु पूज्य बाहुवली जी महाराज की जन्म स्थली है, अत: वहाँ का उत्साह देखते ही बनता था। फिर झालरा पाटन होते हुए चाँदखेड़ी में भगवान आदिनाथ की चमत्कारी मूर्ति के दर्शन किए कोटा और केशवराय पाटन।

पूज्य भरत सागर जी केशवराय में तीर्थंकर मुनि सुव्रतनाथ की

श्याम वर्ण पाषाण प्रतिमा के दर्शनकर आनंदित थे, वे इसलिए भी आनंदानुभूति कर रहे थे कि उस धरती पर कभी पूर्ववर्ती संत श्री नेमीचंदाचार्य ने अपनी पवित्र लेखनी से लघु- द्रव्यसंग्रह की रचना की थी।

फिर सवाईमाधोपुर में श्री चमत्कारिक महावीर जी के दर्शन करते हुए गुरु-शिष्य संघ सहित आगरा की ओर बढ़ गए। वहाँ नगर स्थित समस्त जिन मंदिरों के दर्शन किए। फिर पुनः विहार कर फिरोजाबाद रुके।

फिरोजाबाद चातुर्मास - 1986

फिरोजाबाद वह नगर है जहाँ भरत सागर जी के गुरुदेव के गुरु पूज्य आचार्यवर्य महावीर कीर्ति जी महाराज का जन्म हुआ था। यह तो सदियों से त्याग नगर के रूप में विख्यात रहा है; किन्तु उद्योगपतियों ने कांच की चूड़ियों का व्यापार बढ़ाकर इसका नाम सुहागनगर कर दिया है। चातुर्मास की स्थापना बंध पूर्वक 1986 को की गई, उसी दिन उपाध्याय भरत सागर ने प्रभावना पूर्ण प्रवचन किए मनोविनोद करते हुए उन्होंने बतलाया- पूज्य विमल सागर जी की दुकान शुरु हो गई जिसे माल लेना हो वह शीघ्रता से ले जाएँ। विशेषता यह है कि माल बिना कीमत बिकता है सो सस्ता है, पर टिकाऊ है, हॉलमार्क से प्रमाणित स्वर्ण की तरह उनका माल भी आगम से प्रमाणित है। 24 कैरेट का है। और 24 घंटे उपलब्ध रहता है। श्रोतागण तुरंत समझ गए कि दुकान से अभिप्राय है वर्षाकालीन क्रियाओं और आचरण से और माल के रूप में व्रत,उपवास,नियम संयम ही यहाँ मिलेंगे। सारे नगर में प्रवचन की चर्चा हुई। कुछ समय बाद, कुछ दीक्षाएँ भी सम्पन्न की गई गुरुदेव के कर कमलों से।

वर्षायोग पूर्णता की ओर था, तभी जयपुर के सेठ श्री चिरंजी

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

लाल जी, श्री कमल कुमार एवं श्री चिंतामणि जी शिष्ट-समूह के साथ पहुँचे और गुरु-शिष्य से वर्ष 84 का वर्षायोग जयपुर करने की प्रार्थना की। समय पर निष्ठापना हुई। कुछ दिन बाद विहार हो गया।

फिरोजाबाद से ऐतमादपुर, अवागढ़, शकरोली होते हुए उपाध्याय भरत सागर जी अपने गुरुदेव को उनकी जन्मभूमि कोसमा नगर ले गए। वहाँ आज भी जैन परिवार नहीं हैं, मगर जैनेत्तरों नें बढ़-चढ़कर भक्ति बतलाई और कोसमा के लाल की भाव-भीनी आगवानी की। कुछ घंटे बाद ही वहाँ से बिहार किया। नागरिकगण गुरु और शिष्य को मीलों दूर तक पहुँचाने गए विहार का क्रम बना रहा फलतः जलेसर, अवागढ़, एटा, कंपिला, शौरीपुर, बटेश्वर होते हुए ऐतिहासिक नगर मथुरा पहुँचे। वहाँ पुनः उपाध्याय श्री ने अपने गुरुदेव का अनुशरण करते हुए केशलोंच किया। फिर हस्तिनापुर गए। ब्र. श्री रविन्द्रजी वर्तमान में जम्बूद्वीप के पट्टाधीश ने विशाल समूह के साथ संघ की आगवानी की और 17 दिन का सान्निध्य प्राप्त किया । यहाँ ही ब्र. श्री मौजीलाल जी को 8 मार्च 1987 को पूज्य भरत सागर जी की अनुमोदना के पश्चात आचार्य विमल सागर जी ने क्षु. दीक्षा प्रदान की, नाम दिया श्री मोती सागर।

प्रशान्तमूर्ति अलंकरण -

हस्तिनापुर प्रवास के समय ही, मार्च माह में ही, वहाँ के भक्तगण पू . उपाध्याय श्री को एक विशाल कार्यक्रम में 'प्रशांत मूर्ति' की उपाधि देना चाहते थे, पर उन्होंने मना कर दिया। तब कतिपय प्रबुद्धजन पू. आर्यिका ज्ञानमति जी के पास गये कि वे उन्हें प्रेरित करें। माता जी ने कहा- पू. विमलसागर जी से कहो वे आदेश देंगे तो उपाध्याय श्री मना न कर पायेंगे। विद्वान जन और कमेटी के लोग आचार्यश्री के पास गये। उन्हें मन्तव्य बतलाया। तब आचार्य श्री ने उपाध्याय श्री को

समझाया। दूसरे दिन भारी उत्साह के साथ, विशाल मंच पर कार्यक्रम सम्पन्न करते हुए पू. उपाध्याय श्री को **'प्रशांत मूर्ति'** अलंकरण दिया गया । वे मुस्काते रहे, कुछ न बोले। उस दिन हजारों लोगों को शिक्षा मिली कि उपाध्याय श्री सदा मर्यादा का पालन करते हैं। वे सही मायने में मर्यादा-शिष्योत्तम हैं।

हस्तिनापुर से बड़ौत होते हुए देश की राजधानी दिल्ली पहुँचे गुलाब वाटिका में रुके ग्रीष्मकाल की धूप से संघर्ष करते हुए संघ गाजियावाद पहुँचा वहाँ जैनवॉच कंपनी के सभाकक्ष में पूज्य भरत सागर जी एवं पूज्य विमल सागर जी के उद्‌गार श्रावकों के साथ-साथ मजदूरों और कर्मचारियों को भी सुनने मिले। सैकड़ों लोगों ने मद्य-मांस का आजीवन त्याग किया संत द्वय चरण फिर तिजारा, अलवर, सिकंदरा पदमपुरा होते हुए जयपुर पहुँचे।

जयपुर चातुर्मास - 1987 -

कुछ दिन तक जयपुर सहित भट्‌टारक जी की नसिया, दीवान जी का मंदिर, जैन मंदिर आमेर, खानिया जी राणा जी की नसिया, चूलगिरी आदि के दर्शन किए फिर आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को रात्रि 8 बजे शुभ मुहूर्त में चतुर्विध संघ सहित चातुर्मास स्थापना की। उस समय संघ में 43 पिच्छियाँ थी । आचार्य श्री ने उपाध्याय भरत सागर जी की उपस्थिति का लाभ देते हुए धार्मिक शिक्षा की कक्षाएँ शुरु कराई जिनसे श्रावकों को धर्म लाभ हुआ।

यहाँ ही एक विशाल समारोह में जयपुरवासियों ने आचार्य विमल सागर जी को खंड विद्या धुरंधर की उपाधि दी; किन्तु निष्पृही भरत सागर जी ने कोई भी उपाधि लेने से मना कर दिया । लोगों को तुरंत शिक्षा मिली कि जहाँ गुरु का गुणगान हो वहाँ शिष्य भी उन्ही का गुणगान करते हैं, अपना नहीं कराते।

वर्षायोग पूर्ण होने के बाद संघ सांगानेर गया। पद्मपुरा पहुँचते - पहुँचते सन् 1988 का समय हो गया। यहाँ श्री श्रुत सागर महाराज ने उपाध्याय भरत सागर जी से वर्ण व्यवस्था, आहार चर्या आदि विषयों पर समाधान प्राप्त किए थे। यहाँ ही उपाध्याय श्री की प्रेरणा से 'मर्यादा की रक्षा' पुस्तक का प्रकाशन कराया गया था।

पद्मपुरा से चलकर संघ निवाई पहुँचा। वहाँ एकदिन पूज्य श्रुत सागर जी की समाधि के समाचार मिले। श्रावकों ने संघ के सान्निध्य में श्रद्धांजली सभा आयोजित की जिसमें उपाध्याय भरत सागर जी ने श्रुत सागर जी के विषय में मूल्यवान विचार रखें। उन्होनें बतलाया कि अभी कुछ दिन पूर्व ही उनसे वार्ता हुई तब श्रुत सागर जी ने कहा था-'साधु पर कैसी भी मुसीबत आए आगम निष्ठा नहीं छोड़ना चाहिए, न ही आगम को मोड़ने का दुष्प्रयास करना चाहिए।'

निवाई से अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी के दर्शन करते हुए संघ धौलपुर पहुँचा। उसके बाद कुछ समय मुरैना को दिया। फिर ग्वालियर को। वहाँ ही सन् 1988 का श्रुत पंचमी पर्व मनाया। बाद में सिद्ध क्षेत्र सोनागिर की ओर प्रस्थान किया।

सोनागिर (1988) - जयपुर से सोनागिर तक विहार निर्विघ्न सम्पन्न हुआ था; क्योंकि संघपति श्रीपाल जैन, श्री आर. के. जैन, विशाल श्रावक समूह के साथ छाया बनकर संघ के साथ चल रहे थे।

पूज्य विमल सागर जी एवं पूज्य भरत सागर जी वर्ष 1988 से लेकर सन् 91 तक अनेक नगरों में रहे; किन्तु वर्षायोग हर वर्ष सोनागिर में ही किया। प्रथम चातुर्मास में, सन् 1988 में संघ 43 साधु संत विराजित थे। जब सन् 1989 का समय चल रहा था, तब19 अप्रैल 1989 को इस लेखक सुरेश जैन सरल ने सोनागिर पहुँचकर संतद्वय के दर्शन किए थे। तब की थी गुरुद्वय से वार्ताएँ। उसी दिन से संतगण भी सरल

जी के हृदय कक्ष में आ गये। उनसे पूर्व महान संत आदि पूर्व से ही वहाँ विराजमान मिले संत -द्वय को सन् 89 में ही श्री आर. के.जैन ने घोषणा की। आगामी वर्ष आचार्य विमल सागर की 75वीं वर्षगाँठ पर पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी की आशीष छाया में 'हीरक-जयंती महोत्सव' के रूप में मनाया जायेगा और 75 आदर्श ग्रंथों का प्रकाशन-संपादन किया जाएगा। श्री जैन के प्रस्ताव की उपाध्याय श्री ने अनुमोदना की एवं सामग्री चयन करने तथा उसका संपादन करने आर्यिका 105 श्री स्याद्वादमति माताजी की सेवाएँ लीं। उपाध्याय श्री के मार्ग दर्शन में ग्रंथों का कार्य शुरु हुआ एवं हीरक जयंती महोत्सव की योजनाओं का कार्य विविध-समितियों को सुपुर्द किया गया।

सोनागिर वर्षायोग -1990 -

सोनागिर के महिमा मंडित क्षेत्र पर कुछ साल पूर्व शुरु की गई योजना पूर्णता ले रही थी। विक्रम संवत् 2047 आश्विन कृष्ण सप्तमी, सन् 1990 का महान दिवस गुरुदेव विमल सागर जी के 'हीरक-जंयती महोत्सव' का दिन सिद्ध हुआ, जब उपाध्याय श्री के मार्गदर्शन में आयोजन संपन्न किया गया। 75 दीपों से आरती, 75 ग्रंथों को गुरुवर के कर कमलों में भेंट विशेष आकर्षण रहा। उस अवसर पर देश के अनेक साधु संत एवं भक्तगण क्षेत्र पर उपस्थित रहे और अपने नेत्रों से रसपान किया है।

सन् 1991-यह वर्ष भी सोनागिर और समीपस्थ क्षेत्रों में विहार करते हुए संघ ने व्यतीत किया। चातुर्मास सोनागिर जी में ही सम्पन्न हुआ। इस वर्ष भी पूज्य उपाध्याय श्री के मार्गदर्शन में आचार्य विमल सागर जी का अवतरण दिवस मनाया गया भक्तों ने उत्साह पूर्वक आचार्य श्री को 'कलिकाल सर्वज्ञ' की उपाधि से अलकृत किया। उपाध्याय भरत सागर जी के मार्गदर्शन में दो वर्ष पूर्व शुरु किया गया

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

ग्रंथराज वात्सल्य रत्नाकर विमलसागर का कार्य पूर्णता की ओर था कि वह साधारण कार्य नहीं किया था, विशेष कार्य था, जिसे देश के अनेक वरिष्ठ-विद्वान संपन्न कर रहे थे। 500 से अधिक पृष्ठ वाले विराट ग्रंथ कुछ काल बाद 'वात्सल्य रत्नाकर' के रूप में प्रकाश में आए भी।

उपाध्यायश्री में आचार्यत्व का बीज वपन -

पू. विमल सागर जी का यह प्रसंग स्पष्ट करता है कि वे निमित्तज्ञान के आधार पर चल रहे थे, उन्हें सोनागिर के इस वर्षायोग 1991 में आत्मानुभूति हुई कि उनका जीवन तीन वर्ष से अधिक नहीं बचा है अतः वे उपाध्याय श्री को उन ग्रंथों की शिक्षा देने लगे जिन्हें आचार्य-पद देने से पूर्व गुरु द्वारा शिष्य को अध्ययन कराया जाता है। उन ग्रंथों में प्रायश्चित-शास्त्र एवं रहस्य-शास्त्र प्रमुख होते हैं। वे अपने शिष्य को एकांत में, कभी मंदिर जी के कक्ष में, कभी अपनी सूनी वसतिका में, भारी गम्भीरता एवं मनोयोग से पढ़ाते थे शिष्य से प्रश्न पूछकर उत्तर सुनते थे। कतिपय भक्तों को जो गुरु-शिष्य से बहुत अधिक जुड़े थे, ज्ञात हो गया था, अतः वे मुख से बतलाते कि ऐसा लगता है कि गुरुदेव निकट भविष्य में अपने शिष्य को आचार्य पद प्रदान करेंगे।

बड़ी बात यह थी कि गुरु-शिष्य किसी को नहीं बतलाते थे कि वे उन ग्रंथों का अध्ययन-अध्यापन क्यों कर रहें हैं, पर ज्ञानवान श्रावकों को आभास होता जा रहा था।

चातुर्मास समाप्ति के बाद गुरु-शिष्य संघ शिखर जी की ओर प्रस्थित हुआ। उस समय संघ में 28 साधु-संत विराजते थे। संघपति के रूप में श्रावक रत्न श्रीपाल जी एवं श्री आर. के. जैन छाया की तरह चलते रहे। थे साथ अनेक भक्तगण। जिस दिन संघ विहार कर रहा था उस दिन उपाध्याय श्री भरत सागर जी के संकेत से संघपति द्वय का

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

भावभीना सम्मान किया गया मध्याह्न 2 बजे संतों के चरण उठ पड़े। पूज्य उपाध्याय भरत सागर अपने गुरुदेव का हाथ पकड़ कर चले, कुछ मिनिट तक। वह दृश्य 29 नवम्बर1991 का था। संघस्थ संतों के नाम थे- आचार्य विमल सागर जी, उपाध्याय भरत सागर जी,मुनि अरह सागर जी, मुनि श्रवण सागर जी, मुनि मधु सागरजी, मुनि निरंजन सागर जी, मुनि विष्णु सागर जी, मुनि अजित सागर जी, मुनि चिदानंद सागर जी एवं मुनि वीर्यभूषण महाराज जी। आर्यिकाएँ थीं- श्री आदिमति जी,पार्श्वमति जी, श्री नंदामति जी, श्री स्याद्वादमति जी, श्री मोक्षमति जी एवं श्री मुक्तिमति जी। क्षुल्लक थे- श्री रत्न सागर जी, श्री अकंपन सागर जी, श्री अनेकांत सागर जी एवं श्री जितेन्द्र सागर जी। क्षुल्लिकाएँ थी- श्री मति माताजी, श्री धैर्यमति जी, श्री विवेकमति जी, श्री उदार मतिजी, श्री शीलमति जी एवं भरतमति जी।

साधु का मार्ग कोई तय नहीं करता वे स्वत: निर्धारित करते हैं। फिर भी भक्तों को अंदाज हो गया कि यात्रा-संघ बुंदेलखण्ड के तीर्थ, मध्यप्रदेश के, फिर उत्तर प्रदेश की ओर, फिर बिहार प्रदेश के तीर्थ के दर्शन करते हुए जहाँ निकलेगा मार्ग स्वत: बन जावेगा। चूंकि साथ में उपाध्याय भरत सागर जी थे अत: श्रावकों को मार्ग या दिशा पूछने की सुविधा बनी रहती थी।

उक्त अंदाज सही निकला और संघ विभिन्न जनपदों के तीर्थ स्थानों के दर्शन करता हुआ नित-नित यात्रा पर रहा । 29 नवम्बर 1991 से जो चरण तीर्थ यात्रा पर चल रहे थे, वे 21 मई 1992 को शिखर जी की पावन भूमि का पावन स्पर्श पा सके थे सुबह 7 बजे।शिखर जी में अवस्थित संतों ने श्रावक समूह के साथ, गुरु-शिष्य की अगवानी की। जब दोनों पक्ष के संत समाचारी कर शोभा यात्रा के साथ क्षेत्र परिसर में प्रवेश कर रहे थे तब 60 पिच्छियाँ धर्म प्रभावना के लिए साधुओं के

हाथों में हिल रही थीं।

विशाल शोभा यात्रा तलहटी स्थित मंदिरों के दर्शन करते हुए बीसपंथी कोठी में पहुँची। कार्यकर्ताओं के अनुरोध पर उपाध्याय श्री भरत सागर महाराज ने सारगर्भित प्रवचन प्रदान किए। उसी दिन मध्याह्न 3 बजे के बाद, उपाध्याय श्री ने गुरुदेव के साथ पहाड़ की वंदना करनी चाही। वे संघ सहित आधा किलोमीटर भी नहीं चढ़ पाए कि बादलों ने दौड़कर आकाश ढक लिया तेज वर्षा हुई। तपी हुई सड़कें शीतल होने लगीं, मगर किसी श्रावक को सिर छुपाने के लिए कोई छाया नहीं थी। वर्षा की तेजी और पर्वतराज का लम्बा मार्ग देखते हुए श्रावकों ने उपाध्याय श्री ने गुरुदेव की थकावट और साध्वियों की व्यवस्था देखते हुए लौटना उचित समझा, अतः वापिस होकर धर्मशाला में विराम लिया। 22मई से पुनः गुरु-शिष्य का संघ सहित क्रम बन गया वंदनाओं का।

शिखर जी वर्षायोग - 1992 -

कुछ ही दिन बाद, श्रुत-पंचमी पर्व मनाया गया, फिर आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को चातुर्मास की विधिपूर्वक स्थापना की गई। श्री शिखरचंद जैन पहाड़िया सपरिवार को वर्षा योग कलश स्थापना का शुभ-संयोग मिला। इस वर्षायोग में गुरुदेव ने उपाध्याय श्री के प्रवचन करने की आज्ञा दी थी, अतःवे प्रातः रोज अपने प्रवचनों से भारी ध र्म-प्रभावना करते रहे। माह भर में ही उनके प्रवचनों की श्रृंखला चारों ओर धूम मचा रही थी। जप-तप और संयम की त्रिवेणी साधुओं की चर्चा में समा चुकी थी, अतः उसके शुभ लक्षण श्रावकों में भी परिलक्षित हो रहे थे।

दीप पर्व के साथ ही चातुर्मास निष्ठापना विधि पूर्वक संपन्न की। तपस्वियों को हर क्षण ध्यान मग्न देखा जाता था। क्रम ऐसा बना कि

वर्ष बीत गया, फिर वर्ष से 2 वर्ष बीत गए। साधना निरंतर चलती रही, फलतः सन् 1993 का चातुर्मास भी उपाध्याय श्री के प्रवचनों से महकता रहा। धीरे-धीरे सन्1994 का समय शुरु हो गया।

गुरुदेव के पैरों में कमजोरी महसूस हो रही थी। उपाध्याय श्री लगातार उन पर ध्यान दे रहे थे। एकदिन उपाध्याय श्री ने गुरुदेव से पूछा- आज मात्र तीन ग्रास लिए हैं आपने, क्या तकलीफ है ? कैसा लग रहा है। कुछ बतलाएँ ? तब वे राज की तरह शांत-भाव से बोले- 'कुछ नहीं हुआ बेटा, मैं ठीक हूँ। आप लोग अधिक चिंता न करें, मैं भवितव्य देखकर चल रहा हूँ।' उनके उत्तर से उपाध्याय श्री चुपचाप किन्तु चेहरे से चिंता नहीं गई। तभी दिल्ली स्थित श्री आर. के .जैन को दूरभाष पर जानकारी दिलाई गई, फलतः वे दूसरे दिन शिखर जी पहुँच गए।

उस रात 28 दिसम्बर को आचार्य श्री नित्य की तरह सुबह 3 बजे उठकर जाप देने बैठ रहे थे तभी उपाध्याय श्री ने उनके हाथ एवं माथा छूकर देखा। उन्हें आभास हुआ कि ज्वर हो गया है। आचार्य श्री सम्मेद शिखर की भाव वंदना में लीन हो गए।

सुबह गुरुदेव बिना किसी सहारे के बैठे, अभिषेक देखा। उपाध्याय श्री ने गंधोदक दिया। गुरुदेव ने भारी विनय पूर्वक अपने मस्तक पर लगाया। फिर पुनः गंधोदक लेकर उपाध्याय श्री के मस्तक पर तीन बार लगाया। आत्मा मैत्री और वात्सल्य से भरे वे क्षण अतिविशिष्ट हो गये थे। ऐसा लगा जैसे एक पिता अपने शिशु को गंधोदक लगा रहा हो। जब उनके हाथ उपाध्याय श्री के मस्तक पर थे तब वे वरदहस्त घोषणा कर रहे थे - हे देशवासियो, तुम्हारे आगामी आचार्य ये ही हैं, इनके माथे और चर्या में वह सब मिलेगा जो मैंने गत 26 वर्षों में उन्हें प्रदान किया है। उपाध्याय श्री श्रद्धा से अभिभूत होकर गुरुदेव के

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चरणों में झुक गए थे।

विमल वियोग - 29 दिसम्बर1994 -

29 दिसम्बर1994 पूज्य आचार्य प्रवर 108 श्री विमल सागर जी की समाधि का चित्रण अनेक ग्रंथों में हो चुका है, अतः विस्तार से चर्चा नहीं की गई है। पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी ससंघ के सान्निध्य में पौष कृष्ण द्वादशी, विक्रम संवत् 2051, दिन गुरुवार तदनुसार 29 दिसम्बर 1994 को सायंकाल बेला में पूज्य आचार्य श्री की निर्विघ्न समाधि संपन्न हुई। उस अवसर पर श्री आर. के. जैन, श्री शिखरचंद जी पहाड़िया आदि देश के महान समाज सेवी गण उपस्थित थे। सभी जन स्तब्ध थे, उनकी नजरें आचार्य श्री के चेहरे पर टिकी थीं। शून्य में कहीं आचार्य श्री की आवाज सुनाई नहीं दे रही थी -

मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण, पर की मुझ में कुछ गंध नहीं।
मैं अ-रस अरूपी अ-स्पर्शी , पर से कुछ भी संबंध नहीं।।

दूसरे दिन 30 दिसम्बर 1994 को पूज्य उपाध्याय श्री के सान्निध्य में गुरुदेव के पार्थिव शरीर को चंदन चिता पर विदाई दी गई। उस विशेष अवसर पर संतों का जमघट गुरुदेव के महल को प्रतिपादित कर रहा था। उपाध्याय श्री ने बतलाया था कि उनके साथ-साथ वहाँ आचार्य संभव सागर जी, आचार्य सन्मति सागर जी, मुनि चंद्र सागर जी, मुनि चैत्य सागर, मुनि श्रवण सागर जी,मुनि निरंजन सागर जी, मुनि मधु सागर जी, मुनि अनेकांत सागर जी, मुनि जितेन्द्र सागर जी, मुनि वीर्य भूषण सागर जी, मुनि अजित सागर जी और मुनि मोक्ष सागर जी उपस्थित थे।

अंतिम यात्रा के समय आर्यिका सुपार्श्वमति माता जी, आर्यिका सुप्रभामति माता जी, आर्यिका विद्यामति माता जी, आर्यिका भक्तिमति माता जी, आर्यिका नेममति माता जी, आर्यिका निर्मलमति

माता जी, आर्यिका आदिमति माता जी, आर्यिका पार्श्वमति माता जी, आर्यिका कल्याणमति माता जी, आर्यिका नंदामति माताजी, आर्यिका सुरत्नमति माता जी, आर्यिका स्याद्वाद मति माता जी,आर्यिका मोक्षमति माताजी,आर्यिका मुक्तिमति माता जी, आर्यिका सम्मेदशिखरमति माता जी, आर्यिका कैलाशमति माता जी, आर्यिका श्रेष्ठमति माता जी, सल्लेखनामति माता जी,आर्यिका अजितमति माता जी भी उपस्थित थी। क्षुल्लकों में श्री रत्न सागर जी, श्री अकंपन सागर जी, श्री सम्मेदशिखर जी,श्री स्वंयभू सागर जी, श्री धैर्य सागर जी एवं क्षुल्लिकाओं में श्री श्री मति माताजी,श्री शीतलमति माता जी, श्री ध ैर्यमति माताजी,उद्धारमति माता जी, विवेकमति माताजी, आनंदमति माता जी, चेतनमति माता जी एवं विजय मति माता जी के नाम उल्लेखनीय हैं।

परम पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी की गरिमा पूर्ण उपस्थिति में 31 दिसम्बर को श्रद्धांजलि सभा का आयोजन मध्याह्न 1 बजे बीस पंथी कोठी में किया गया। उस दिन किसी के मुख से शब्द नहीं निकल पा रहे थे, बस नेत्रों से आँसूओं की अविरल धारा बहती हुई दिख रही थी, हर चेहरे पर जैसे शोक की कविता लिखी गई हो। क्षेत्र पर उपस्थित सैकड़ों भक्तों में से कुछ ही प्रबुद्धजन बोलने का साहस जुटा पाए। जिनमें श्री निर्मल जी सेठी, श्री चैनरूप बाकलीवाल,पंडित नरेन्द्र प्रकाश जैन, पं. धर्मचंद जी शास्त्री, के नाम प्रमुख हैं। हर उपस्थित साध ु ने विनयांजलि प्रस्तुत की। मध्याह्न 1 बजे से 4 बजे तक सभा चली। फिर भी बहुत से लोग छूट गए , अतः दूसरे दिन भी 1 बजे से श्रद्धांजलि सभा रखी गई। दोनों सभाओं में परम पूज्य उपाध्याय भरत सागर जी के उद्बोधन अति विशेष रहे। जिनका आशय यह था- मेरे ऊपर से गुरु की छत्रछाया उठ गई, मुझे गुरुदेव ने जो ज्ञान दिया था उसे में जन-जन तक प्रसारित करूँ और आत्मसाधना करते हुए उन्हीं की तरह समाधि

मरण पाऊँ, यही है भावना मेरी। वैसे न ही कोई जन्म का मुहूर्त, न मरण का मुहूर्त निकाल सका है। शुभ और अशुभ का उदय कब आ जाए किसी को पता नहीं अत: वैराग्य-पथ पर साधना करते चलो परिणाम स्वत: दिख जायेगा। उपाध्याय श्री ने आगे बतलाया कि श्रावक को अपना लोटा छान लेना चाहिए, क्योंकि पूरे कुएँ को नहीं छान सकते, स्वयं को सुधारो, दुनियाँ अपनेआप सुधर जायेगी, यही आचार्य श्री का संदेश।

उपाध्याय श्री का आचार्य-पदारोहण -

सारे देश में भक्तों के मन में एक ही भावना थी कि पूज्य भरत सागर जी को शीघ्रता से आचार्य पद पर आरूढ़ किया जावे। पू. गुरुदेव विमल सागर जी प्रकाश-पुंज बनकर चले गये; किन्तु देश में अंधकार न हो पावे यह विचार रखते हुए अपने लाखों भक्तों के मध्य में एक प्रकाश-स्तम्भ स्थापित कर गये थे, वे हैं गुरुवर भरत सागर जी महाराज। आचार्य श्री के निधन के ठीक 1 माह 12 दिन बाद, चतुर्विध-संघ ने विशाल समारोह के मध्य 10 फरवरी 95 को, मधुवन में एक विशाल समारोह में आचार्य श्री के पट्ट शिष्य उपाध्याय रत्न भरत सागर जी महाराज को विधि-विधान पूर्वक आचार्य-पद पर प्रतिष्ठित किया। फिर वात्सल्य- पूर्वक **'शिष्योत्तम'** की पदवी से अलंकृत करने का क्षण आया। पूरे दृश्य का वर्णन इस तरह है-शिखर जी के गरिमामय क्षेत्र में जितने भी साधु संत उपस्थित थे, सभी भारी उल्लास के साथ उपाध्याय श्री को आचार्य-पद पर देखना चाहते थे जिनमें लगभग वे सभी नाम थे जो अंतिम यात्रा के समय रेखांकित किए गए हैं।

सहस्रों श्रावकों के मध्य उपाध्याय श्री के धर्म के माता-पिता के रूप में श्री आर. के .जैन एवं श्री मधु जैन उपस्थित थे। पं. धर्म चंद जी

शास्त्री विधि- विधान से संपन्न करा रहे थे और पूज्य आचार्य संभव सागर जी उपाध्याय श्री के समीप खड़े होकर आचार्य-पद दे रहे थे श्रावकों ने 5 विशेष कलशों से पूज्य भरत सागर जी का पादप्रक्षाल किया। कलशों के नाम इस तरह थे- दर्शनाचार-कलश, ज्ञानाचार-कलश, चारित्राचार-कलश, तपाचार-कलश, एवं वीर्याचार-कलश। विशिष्ट झलक यह थी कि भक्तों के कलशों की धाराएँ भरत सागर जी के पद पंकज पर गिर रहीं थीं; किन्तु भरत सागर जी की आँखों की धाराएँ उनके कपोलों पर, लोग चकित थे कि वैराग्यमूर्ति गुरुदेव विमल सागर का महान आचार्य-पद पाते हुए भी भरतसागर जी प्रसन्न नहीं थे। उनकी निष्पृह छवि स्पष्ट कर रही थी कि उन्हें पद की उत्सुकता नहीं है, वे तो गुरु-पद चरण में ही सुखी और संतुष्ट थे। उस दिन श्री सुरेश कुमार झांझरी कोडरमा, अशोक पाण्ड्या गिरीहडीह, श्री प्रभुलाल गंगवाल, श्री हिम्मत सिंह, सुश्री निर्मला जी आदि समाजसेवी उपस्थित थे, विद्वानों में डॉ फूलचंद प्रेमी, पं. बाबूलाल फागुल, श्री लीलामणि जैन आदि।

पहले सभा की ओर से भरत सागर जी को 'मर्यादा शिष्योत्तम' की गरिमा -प्रधान उपाधि प्रदान की गई। फिर प्रदान किया गया **'आचार्यपद'**। श्रेष्ठ श्रावक श्री महेन्द्र कुमार जी पाण्ड्या अमेरिका प्रवासी ने नूतन आचार्यश्री को नूतन पिच्छिका भेंट की। हजारों श्रेष्ठीगण स्वर से स्वर मिलाकर जयघोष कर रहे थे। तभी आचार्य संभव सागर जी ने मंत्रोच्चार के साथ समाधिस्थ गुरुदेव विमल सागर जी का पावन कमण्डलु नूतन 'आचार्यश्री' को भेंट किया पुनः तीव्र तालियों के साथ जोर-जोर से जयकार किया गया। प्रमुख वक्ताओं ने आचार्य भरतसागर जी के विषय में अनमोल बोल बोले, यदि उनका अभिप्राय समाहित कर यहाँ प्रस्तुत किया जावे तो आशय यह होगा-'संत शिरोमणि भरत सागर जी महाराज रात्रिकाल में सदा अल्प

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

निद्रा लेते हैं और स्वाध्याय तथा सामायिक में लगे रहते हैं। दिन में अध्ययन करते हुए अध्यापन कार्य करते हैं। निज चर्या तथा धर्म के संरक्षण हेतु प्राण तक न्यौछावर कर सकते हैं वे पल-पल अनाशक्त रहते हैं, परिषहों को हँसते मुस्काते सह लेते हैं तथा उपसर्गों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। पूर्ण रूपेण निष्पृही संत हैं।'

अंत में आचार्य भरत सागर जी ने प्रवचन किया 'परम पूज्य गुरुदेव के समक्ष मेरा कुछ भी अस्तित्व नहीं है।' वाक्य कहते हुए उनका गला रुँध गया, नेत्र आर्द्र हो गए, फिर खुद को सम्भालते हुए आगे बोले-'गुरुदेव संघ का बोझ उठाने के लिए गजराज जैसा बल और पराक्रम रखते थे, उनके महान साहस के समक्ष मैं एक लघु मूषक चूहा जैसा हूँ।

संघ का अनुरोध देखकर, समाज से उठते स्वरों को समझकर और यह विचार कर कि गुरुदेव की गद्दी सिंहासन खाली न रह पावे, इन तीन बिन्दुओं पर ध्यान देते हुए मैंने आचार्य पद स्वीकार किया है। मैं सच्चे पुरुषार्थ, लगन और निष्ठा से उनके सिद्धांतों का निर्वाह करूँगा; क्योंकि यह आसन उनका है, पिच्छिका उनकी है, कमण्डलु उनका है और यह शिष्य भी उनका है। सो प्राणों की तौल पर भी उनका गौरव कम नहीं होने दूँगा। जब मैं क्षुल्लक था तभी से उनके निर्देशन में जैनधर्म के सिद्धांतों के अध्ययन का लाभ मिला है। वैराग्य क्षेत्र में व्यवस्थित रहने का ज्ञान मिला है। मेरे जीवन में दर्शन ज्ञान चारित्र की त्रिवेणी उन्होनें तरंगित की है। उनके साथ वैराग्य पथ पर चलते हुए हमें अपूर्व शांति का अनुभव हुआ है। में सदा उनका ऋणी रहूँगा।

विशाल संत समूह और श्रावक समूह के समक्ष कार्यक्रम पूर्ण हुआ, भारत देश को 'विमल का प्यार' मिला, नए आचार्य परमेष्ठी के रूप में। ऐसे मर्यादा शिष्योत्तम परम पूज्य आचार्य भरत सागर जी

महाराज को सभी ने सिर आँखों पर लिया, वे सदा जयवंत हों।

आचार्य श्री का प्रथम विहार - देश के अनेक शहरों के लोग उन्हें अपने नगर की ओर विहार करने को मना रहे थे और श्रीफल चढ़ा रहे थे, करीब माह भर यह क्रम चला। पूज्य आचार्य श्री संघस्थ 22 संतों सहित मंगल विहार करने का मन बना रहे थे तभी झूमरी तलैया-समाज के कर्मठ कार्यकर्ताओं ने संघपति श्री शिखर चंदजी पंचुलाल जी पहाड़िया बम्बई से मंत्रणा की। पहाड़िया जी ने विनयपूर्वक आचार्य श्री से चर्चा की फलतः 24 मार्च 1995 को संघ का बिहार झूमरी तलैया की ओर हो गया। उनके विहार में झारखण्ड, बिहारएवं पश्चिम बंगाल के कार्यकर्तागण झूम उठे, जिनमें पवन कुमार सेठी कोलकाता, श्री महावीर प्रसाद सेठी सरिया, श्री तारा चंद देवधर, श्री सुरेश चंद राउरकेला, श्री प्रभुदयाल गंगवाल गिरिडीह, श्री मानमल झांझरी, श्री सुरेश कुमार झांझरी कोडरमा, श्री अशोक पाण्ड्या गिरिडीह, श्री छीतरमल पाटनी हजारीबाग, श्री कमल कुमार पाटौदी प्राणम, आदि प्रमुख थे।

झूमरी तलैया प्रवास -

सारे नगर में समाचार पहुँच चुका था कि पूज्य भरत सागर जी पधारे रहे हैं अतः लोगों ने प्राणपण से समय-सीमा में पूरे नगर को सजाया। वंदनवार तोरणद्वार देखते ही बनते थे। सड़कों पर रंगोली अल्पना हर दरवाजे के साथ मुस्करा रही थी। गुरुदेव का विशाल - संघ ज्यों ही नगर सीमा में पहुँचा सारा नगर जन बल, बाल-बच्चे, पुरुष-नारी अगवानी के लिए पहुँचे। सुहागवती- औरतों के सिरों पर मंगल कलश समय को मंगलमय बना रहे थे। पुरुषों और महिलाओं के हाथों में नीरांजन दोलायमान हो रहे थे। सोने,चाँदी, पीतल, ताँबा, स्टील की बड़ी-बड़ी थालियाँ चौरस्तों पर गुरुदेव क पाद प्रक्षाल की प्रतीक्षा

कर रही थीं। वाद्ययंत्र दल मधुर-ध्वनि गुंजायमान कर रहा था। छोटी-छोटी बालिकाएँ स्वागत-गीत गा रही थीं-'बहारो फूल बरसाओ महामुनिराज आये हैं।' तभी आचार्य भरत सागर जी सीमा पर भीड़ देखकर क्षण भर को रुके तो सर्व समाज ने उत्साह और भक्ति पूर्वक अगवानी की सभी क्रियाएँ पूर्ण की। आचार्य श्री को विशाल शोभा यात्रा के साथ जैन मंदिर परिसर मे लाया गया।

47वाँ जन्मोत्सव - संपूर्ण नगर में गुरुजी की जन्मतिथि राम नवमी को भरत नवमी में परिवर्तित कर दिया और विशाल स्तर पर 'जन्मोत्सव' मनाया गया। उसी दिन उन्हें उत्साही भक्तों ने 'प्रशांतमूर्ति' का मनोहर संबोधन दिया फलतः पूरा कार्यक्रम प्रशांतमूर्ति महोत्सव के रूप में प्रभावी हुआ।

एक कार्यक्रम पूर्ण हुआ तो दूसरा समक्ष खडा़ था, वह था 'महावीर जयन्ती महोत्सव' उस वर्ष 13 अप्रैल को महावीर जयन्ती मनानी थी, किन्तु आचार्य श्री के संघस्थ वरिष्ठ एवं वयोवृद्ध मुनि 108 श्री अजित सागर जी महाराज की समाधि चल रही थी । संयोग ऐसा बना कि ठीक महावीर जयंती के दिन ही उन्होंने अपनी देह का त्याग किया, फलतः संघ और समाज ने महावीर जयंती सादे तरीके से मनाते हुए समाधि महोत्सव को भारी श्रद्धा के साथ मनाया गया। नगर में विभिन्न प्रकार की चर्चा से लोग धार्मिक विचारों का आदान-प्रदान करते रहे ।

दीक्षा संस्कार:1995- झूमरी-तलैया के लोगों को आचार्य श्री से नित नई प्रभावना मिल रही थी। तभी एक दिन आचार्य ने संघस्थ क्षु.105 श्री स्वयंभू सागर जी को 'मुनिदीक्षा' प्रदान की । सारा नगर दीक्षा देखने एकत्र हुआ। आचार्य श्री ने विधि- विधान पूर्वक दीक्षा संस्कार संपन्न कर दीक्षार्थी का नाम करण किया- मुनि 108

स्वयंभूसागर जी महाराज। जन समूह ने काफी देर तक जयघोष कर आकाश -क्षेत्र भर दिया। सबसे बड़ी बात यह जो झूमरी तलैया के इतिहास में कभी नहीं हुई थी। कि 'एक दिवसीय लघु पंचकल्याणक' बगैर किसी पूर्व तैयारी के अनायास ही किया गया, जो विशेष शुभ माना गया। लोगों को सुरेश झांझरी का उत्साह और इच्छा शक्ति समझ में आई सभी ने स्वीकारा कि झांझरी जी की प्रतिभा बहुआयामी है, उनकी प्रेरणा और तत्परता से ही पंचकल्याणक संपन्न हो सका था।

चूँकि आचार्य श्री विराजे हैं, इसलिए कार्यकर्त्ताओं को अनेकानेक कार्यक्रम आयोजित करने की ऊर्जा मिली फलतः ध्यान शिविर का आयोजन किया गया। फिर प्रभावनाकारी विधान। मंदिर के शिखरों पर धर्म पताकाएँ लगाईं गईं । प्रतिदिन गुरुदेव के प्रवचन का लाभ। महिलाओं द्वारा गीत-संगीत की झर। युवक-युवतियों द्वारा अंताक्षरी, आरती, भजन आदि रोचक सांस्कृतिक कार्यक्रम। कहने को आचार्य श्री ने सोलह दिन का समय प्रदान किया था वह तो सोलह मिनट की तरह बीत गया था ।

कोडरमा का प्रबुद्ध समाज अतिथि सत्कार में बहुत आगे है, अतः बाहर से आने वाले श्रावकों को किसी भी प्रकार की परेशानी नहीं हुई। नगर के हर कार्य की भारी सराहना हुई। जब कार्यकर्तागण अपनी तारीफ सुनते तो विनयपूर्वक कहते हैं- हमारे वरिष्ठ श्रेष्ठी श्री मानमल महावीर प्रसाद झांझरी के श्रेष्ठ परिवार के युवा रत्न श्री सुरेश झांझरी को धन्यवाद दीजिए, हम सब उनका साथ पाकर ही कुछ सेवा कर पाए हैं। जहाँ श्री झांझरी हो वहाँ स्मारिका को आकार न मिले ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि 16 दिन जो कार्यक्रम हुए उनके दृश्य झांझरी जी के श्रम से प्रकाशित स्मारिका 'प्रशांतमूर्ति' में देखने मिलते हैं। मगर जब झांझरी जी से वार्ता होती तो वे संपूर्ण श्रेय अपने मित्रों को देते,

कहते – 'ये न होते तो मैं अकेले क्या करता।'

गुणावा जी- विहार -

आचार्य भरत सागर जी ससंघ विहार कर गुणावा जी पहुँचे। झूमरी तलैया के अनेक भक्त साथ बने रहे। संघ ने मंदिर के मूलनायक भगवान कुन्थुनाथ स्वामी के दर्शन करते हुए वंदना पूर्ण की। वहाँ करीब 8 दशक पूर्व, विक्रम संवत् 2474 में प्रतिष्ठित मानस्तंभ की वेदिकाओं में तीर्थंकर की खड्गासन प्रतिमा विराजमान है, आचार्य श्री ने 77वर्ष बाद वि .सं. 2551 में अपना सान्निध्य प्रदान करते हुए मानस्तंभ पर विराजित प्रतिमा का अभिषेक कराया और त्रिदिवसीय महाआयोजन को सफल बनाया। हजारों नर-नारियों ने अभिषेक की धाराएँ दे दीं और सैकड़ों भक्तों ने अपने हाथों से कलश ढारकर खुद को धन्य किया।

आचार्य-संघ यहाँ भी अधिक समय नहीं दे पाया क्योंकि लक्ष्य था कोल्हुआ पहाड़ ।अत: विहार करते हुए कुछ दिन कुण्डलपुर, कुछ दिन पावापुरी और कुछ दिन राजगृही में दिए, फिर पहुंचे कोल्हुआ पहाड़।

सिद्धक्षेत्र कोल्हुआ पहाड़ -

भक्तगण जानते हैं कि दसवें तीर्थंकर शीतलनाथ भगवान के तपकल्याणक और ज्ञान कल्याणक उसी पहाड़ पर सम्पन्न हुए थे इसलिए इसे सिद्ध भूमि कहते हैं। आचार्य श्री ने समूचे क्षेत्र की वंदना की। क्षेत्र पर स्थित पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर की एक वेदी कुछ समय से सूनी पड़ी हुई थी जिसे देखकर शुभ प्रतीत नहीं होता था। आचार्य श्री ने ऐसी प्रेरणा प्रदान की कि देखते ही देखते वेदी प्रतिष्ठा संपन्न हो गई और उस पर भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा विराजमान कर दी गई। प्रेरणा का चमत्कार यह भी कि भक्तों ने मंदिर में शोभनीक

घंटा लगाया, मंदिर के ऊपर पताका और शिखर कलश। गया, हजारीबाग, कोडरमा आदि के भक्तगण निरंतर क्षेत्र पर थे। इस बीच आचार्य श्री के आशीष से हजारी बाग गया के संस्कारवान युवकों ने कोल्हुआ पहाड़ की वंदना करने का संकल्प लिया। उनके अलावा सैकड़ों जैनेत्तर भाइयों से आचार्य श्री ने मद्य-मांस और मधु का आजीवन त्याग कराया।

प्रथम चातुर्मास शिखर जी -1995 -

भले ही अभी तक पूज्य भरत सागर जी 27 चातुर्मास संपन्न कर चुके थे; किन्तु आचार्य के बाने में उनका पहला चातुर्मास सन् 1995 में सम्पन्न हुआ था। कोल्हुआ पहाड़ से चलकर गया पहुँचे थे, फिर दिया था हजारीबाग को समय मगर वर्षायोग के लिए तीर्थराज सम्मेदशिखर ही उचित लगा, अतः विहार करते हुए वे महातीर्थ पर पहुँच गये, जो-जो कार्य पूज्य विमल सागर जी की प्रेरणा से पूर्ववर्ती वर्षों में शुरु किए गए थे, उन्हें तीव्रता से पूर्ण कराया गया जिनमें प्रमुख थी 'तीस चौबीसी की रचना' और शांतिपूर्वक ढंग से विभिन्न साधनाओं के साथ संपूर्ण संघ ने सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास पूर्ण किया। शीतकाल के समय में कुछ समय क्षेत्र पर ही दिया और 29 दिसम्बर 95 को समाधिस्थ संत आचार्यप्रवर 108 श्री विमलसागर जी महाराज का प्रथम स्मृति-महोत्सव संघ-सानिध्य में सम्पन्न किया। दूसरे दिन ही विहार कर दिया।

ईसरी का मानस्तंभ - आचार्य भरतसागर जी की प्रतीक्षा में पलक पाँवड़े बिछाकर प्रतीक्षा कर रहा था ईसरी का समाज। जैसे ही संतवर वहाँ पहुँचे कार्यकार्त्ताओं ने उनके सान्निध्य का पूरा-पूरा लाभ लिया और मानस्तंभ पर स्थित जिनबिम्ब का अभिषेक महोत्सव सम्पन्न कराया, तिथि थी 1 जनवरी 1996।

आचार्य श्री ससंघ वहाँ से भी विहार कर गए। बोकारो नगर पहुँचे। ग्रीष्मकाल के सभी माह राह में निकल गए अतः बोकारो वालों को अप्रैल 96 में सौभाग्य मिला गुरुदेव का 48 वाँ अवतरण दिवस मनाने का। ठीक भरत नवमी के दिन देशभर के भक्त बोकारो पहुँच गये थे, सब की भावना देखते हुए समाज ने उन्हें 'ज्ञान-दिवाकर' की पदवी प्रदान की। लोग बताते हैं कि उस दिन बोकारो शहर में नगर- रथयात्रा का दृश्य अद्भुत था। शोभायात्रा 2 कि.मी से अधिक लंबी थी। नगर की हर गली में प्रभावना की ज्योति जल रही थी। कुछ समय बाद आचार्य श्री ने विहार कर दिया।

सराकोद्धार-

विहार करते हुए आचार्य श्री ने पहले पुरलिया और फिर पाकवीरा गाँव को समय दिया। पाकवीरा में पुराने मंदिरों की निर्माण सामग्री गाँव और खेतों में बिखरी पड़ी है जिससे यह सिद्ध होता है कि सौ दो सौ वर्ष पूर्व यहाँ जैनियों का बाहुल्य रहा है। कालान्तर में सामान बिखर गया लोग धर्माचरण भूल बैठे फलतः धीरे-धीरे जो श्रावक वहाँ शेष रह गये थे वे सराक कहलाने लगे । आचार्य श्री ने उन सब की ओर ध्यान दिया और मंदिरों के संरक्षण की प्रेरणा प्रदान की। एक मंदिर में नई वेदी का निर्माण कराया गया फिर वेदी प्रतिष्ठा के बाद आचार्य श्री के सान्निध्य में तीर्थंकर प्रतिमाएँ स्थापित की गईं। पाठकों को याद दिलाते हुए खुशी हो रही है कि सराकों के उद्धार के लिए कुछ वर्ष पूर्व आचार्य विमल सागरजी एवं आचार्य सुमतिसागर जी उस क्षेत्र के अनेक ग्रामों में सुधारसूत्र वपन कर आए थे, बाद में उपाध्याय ज्ञान सागर जी ने भी भारी प्रयास किया और अच्छे परिणाम भी पाए।

अनाइजामबाद नगर - पुरलिया से चलकर संघ कुछ दिन इस नगर में रुका और यहाँ भी सराकों को श्रावक बनने की प्रेरणा की।

पेटरवार नगर ग्रीष्मकाल की तपन को शिथिल करते हुए आचार्य श्री नगर पेटरवार पहुँचे । उनके निष्पृह दृष्टिकोण को उस क्षेत्र के श्रावक समझ चुके थे, अतः वे श्रद्धापूर्वक आचार्य श्री को कुछ देना चाहते थे, वस्तु और वैभव तो संत लेते नहीं, अतः वहाँ प्रबुद्ध जनों ने 'भुवनभास्कर' उपाधि से उन्हें अलंकृत किया और हृदय की श्रद्धा चरणों में रख दी । आधि-व्याधि-उपाधि से परहेज रखने वाले आचार्य श्री विहार करते समय, केवल पिच्छि और कमण्डलु साथ लेकर निकले, उपाधि वहीं मंदिर में चिपकी रह गई।

कुछ समय बाद भ्रमण करते हुए ग्राम सादम एवं गोमया भी गए और ज्ञान ज्योति प्रज्ज्वलित करते हुए गिरीडीह की ओर बढ़े।

गिरीडीह प्रवास -

गिरीडीह समाज - भगवान बाहुवली की नवीन प्रतिमा की प्रतिष्ठा आचार्य श्री के सान्निध्य में ही सम्पन्न कराना चाहता था, फलतः उनका आमंत्रण स्वीकार कर ज्यों ही आचार्य श्री नगर में पहुँचे कार्यक्रम शुरु कर दिया गया फलतः उनके सान्निध्य में पंचकल्याणक महोत्सव निर्विध्न संपन्न हुआ। यहाँ भक्तों के अनुरोध पर आचार्य श्री ने कुछ अधिक समय प्रदान किया फलतः लोगों को रोज प्रवचन-लाभ मिला। उसी क्रम में णमोकार मंत्र शिक्षण शिविर की आयोजना भी की गई । धर्म प्रभावना बलबती होती गई। महिलाओं के बीच जैन वर्ग पहेली प्रतियोगिता काफी चर्चित रही, उससे ज्ञान वर्धन भी हुआ । एक और दृश्य चर्चा लायक है- आचार्य श्री के प्रवचनों के पश्चात् प्रश्नमंच कार्यक्रम होता था जिसमें युवक -युवतियों के साथ -साथ वृद्ध लोग उत्तर देते थे और अपने सही या गलत उत्तर पर भी प्रसन्न होते थे। एकदिन महासभा अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार सेठी दर्शन हेतु पहुँचे, उन्होनें अनुरोध किया कि मंदारगिरी मंदिर में 17 वर्षों से विराजित

प्रतिष्ठित प्रतिमा को उचित वेदी पर विराजित करायें।

मंदारगिरि विवरण -

विहार करते हुए आचार्य श्री देवधर पहुँचे। दूसरे दिन ही श्रुत-पंचमी थी अतः श्रुत-पंचमी महोत्सव को सान्निध्य प्रदान किया और पुनः विहार करते हुए मंदारगिरि पहुँचे। यह सिद्धक्षेत्र है और चम्पापुर से जुड़ा हुआ है, भागलपुर के समीप है। जैनागम में इस क्षेत्र का महत्त्व इसलिए है क्योंकि यहाँ बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य स्वामी के तप, ज्ञान और मोक्ष कल्याणक सम्पन्न हुए थे।

आचार्य श्री ने दूसरे दिन ही भगवान वासुपूज्य की 7 फुट ऊँची खड्गासन प्रतिमा के दर्शन किए, जो उस समय तलहटी में एक स्थान पर रखी गई थी। इसे ही पर्वत पर बने शिखर मंदिर में स्थापित कराए जाने की योजना थी। कार्य कठिन था और कतिपय विधर्मी लोगों द्वारा उसे कठिनतर निरूपित किया जा रहा था। कार्यकर्ताओं ने समाज एवं प्रशासन के सहयोग से 3 जून 1996 दिन सोमवार को मूर्ति को उठाने का प्रयास किया; किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिल पाई। कार्यकर्तागण उदास होकर आचार्य श्री के पास पहुँचे, दिन-भर के प्रयासों की चर्चा की। उनकी खेद जनक बातें सुनकर आचार्य श्री ने सभी को सांत्वना दी और बोले कल विचार करेंगे। दूसरे दिन प्रातः बेला में आचार्य श्री ससंघ तलहटी में गए और मूर्ति के समक्ष खड़े हो गए। उनके तेज को देखकर विधर्मी जनों में सहयोग की भावना उत्पन्न हो गई। फलतः वे स्वतः ही उनके चरणों में झुक गए। वे क्या झुके कि तुरंत मजदूर दल, कारीगर, मिस्त्री आदि उपस्थित हो गए। सभी ने गुरुदेव को नमोस्तु कर मूर्ति को उठाया और चल पड़े मंदिर की ओर। तुरंत ही लघुयात्रा शोभायात्रा में परिणित हो गयी। सबसे आगे आचार्य-संघ उनके पीछे आचार्य विमलसागर जी के चित्र से सज्जित झाँकी , उनके पीछे महिला

वर्ग उनके पीछे काँधें के सहारे मूर्ति लिए मजदूर गण उनके पीछे कार्यकर्तागण थे। कुछ ही समय में पहाड़ की दुर्गम चढ़ाई पूरी हो गई, सकरे मार्ग किसी को रोक नहीं पाए, ऊबड़-खाबड़ रास्ते किसी को गिरा नहीं पाए, न किसी को कांटे चुभे। शोभायात्रा में उपस्थित समस्तजन पसीना से तरवतर हो रहे थे, यह देख शायद मेघदल को करुणा आई हो सो वह अपना कार्य शुरु कर बैठा, बादलों से दिगम्बर संत के आशीर्वाद की तरह पानी की पूरी बूँदें सभी पर बराबरी से गिर रहीं थीं। दूसरे दृष्टिकोंण से ऐसा लगा कि मेघदल कार्यकर्ताओं से पहले ही भगवान वासुपूज्य का अभिषेक करने में सफल हो गया है। तीसरा दृष्टिकोंण यह था कि वे सभी मेघ शिष्योत्तम भरत सागर जी का पाद- प्रक्षाल कर रहे हैं। ज्यों ही प्रतिमा जी क्षेत्र के दक्षिणमुखी दरवाजे पर पहुँची, कार्यकर्ता चिंता में पड़ गए कि मूर्ति बड़ी है दरवाजा छोटा दिख रहा है प्रवेश कैसे होगा। प्रबुद्ध जनों ने विचार किया कि दरवाजे के बगल की पुरानी दीवाल तोड़ दी जावे तो प्रवेश संभव हो जावेगा। मगर तोड़ें कैसे ? न सब्बल, न कुदाली, न फावडा़, तभी उत्साही युवकों की दृष्टि समीप ही रखे बाँसों पर पड़ी, भिड़ गए। देखते ही देखते दीवारें टूट गई, रास्त सुलभ हो गया और दिन के 12:30 बजे भगवान की प्रतिमा विराजमान हो गई। वह मंगलवार का दिन था, जो कि भगवान वासुपूज्य जी का दिन कहलाता है।

कार्यक्रम कर पूर्णता पर ध्यान दिया तो कार्यकर्ताओं के साथ-साथ अनेक नगरों के भक्तों का योगदान सराहनीय रहा। बड़ी बात यह है कि जिला प्रशासन बाकां को भी समाज ने धन्यवाद ज्ञापित किया। आचार्य श्री के मंगलमय प्रवचनों के साथ कार्यक्रम पूर्ण हुआ।

प्रवास सिद्ध क्षेत्र चम्पापुर -

जिस तरह आचार्य विमल सागर जी सिद्ध क्षेत्रों की यात्रा के प्रति

रुची रखते थे उसी तरह शिष्योत्तम भी एक सिद्ध क्षेत्र से दूसरे को लक्ष्यकर विहार करते थे।

8 जून 96, शनिवार को सिद्ध क्षेत्र मंदारगिरि से प्रस्थान कर दिया, उस समय संघ में 16 पिच्छियाँ थी 7 मुनिराज, 6 आर्यिका, 9 क्षुल्लिका आचार्य श्री सिद्धक्षेत्र चम्पापुर पहुँचे। आगम में वर्णन है कि यहाँ तीर्थंकर वासुपूज्य के समय-समय पर पाँचों कल्याणक सम्पन्न हुए थे। यहाँ के मंदिरों के साथ-साथ विशाल प्रवेश द्वार भी दर्शनीय है। इसी तरह मानस्तंभ भी अतिविशेष है।

क्षेत्र के मंत्री श्री रतनलाल जैन विनायक जी अपने सेवाभाव एवं कर्मठता के लिए प्रसिद्धि पा चुके हैं, उनके साथ-साथ संपूर्ण कार्य कर्तागण एवं भागलपुर समाज ने आचार्य श्री से चातुर्मास करने की प्रार्थना की, स्वीकार भी हुई।

वर्षायोग 1996 - आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को निर्वाण भूमि चम्पापुर के पावन परिसर में ससंघ वर्षयोग की स्थापना की। नित-प्रति उनकी चर्या और प्रवचन हर मन में मंगल प्रभावना करने करने लगे। गुरुदेव की प्ररेणा से लोगों ने फिल्मी गीत गाना बंद कर दिया। टेलीविजन से परहेज कर लिया। उनका मंगल प्रवेश 11 जून 96 को हुआ था, ज्यों ही वर्षायोग की अवधि पूर्ण हुई, भक्तगण मनाने बैठ गए कि 29 दिसम्बर को पूज्य विमल सागर जी का स्मृति दिवस मनाने का क्षण इसी क्षेत्र को दीजिए। आचार्य श्री ने उनकी इच्छा पूर्ण की ।

'स्मृति दिवस' भी समय पर मनाया गया फिर 16 जनवरी 1997 को चम्पापुर से विहार कर दिया। भक्तगण अश्रु बहाते हुए विदाई दे रहे थे वे सब अचल तीर्थ पर खड़े रह गए और आचार्य श्री 'चल तीर्थ' के रूप में विहार कर गए।

कुछ समय दिया सुल्तानगंज को, फिर खड़गपुर और नवादा को

पहुँचे फिर गुणावा जी, यह है गौतम स्वामी की निर्वाण भूमि उनके पहुँचने से प्रेरणा की तरंगे भक्तों के मन को उत्साहित कर गयीं फलतः कार्यकर्ताओं ने 'विमल भरत त्यागी निवास' का शिलान्यास आचार्य श्री के सान्निध्य में किया। पुण्यार्जक बने श्री एस .पी. जैन धनवाद और उनके पारिवारिक जन।

पावापुरी जी - गुणावा से चलकर पावापुरी जी पहुँचे, यह तीर्थंकर -महावीर की निर्वाण भूमि है। कार्यकर्ताओं ने गुरु सान्निध्य का लाभ लेते हुए मानस्तंभ निर्वाण की योजना बनाई और आचार्य श्री के सान्निध्य में शिलान्यास समारोह सम्पन्न किया। फिर आचार्य श्री ने अपने गुरुणामगुरु समाधिस्थ संत आचार्य महावीर कीर्ति जी की पुण्य तिथि को समारोह पूर्वक मनाया।

शीतलहर प्रवल हो चुकी थी भक्तों के शरीर ही नहीं कलेजे कांपने लगे थे। इस बीच आचार्यश्री को भी शीतलहर ने परेशान किया ।उन्हें हाथ पैरों में पीड़ा होने लगी। दैनिक क्रियाएँ करने के लिए पर का सहारा आवश्यक हो गया। संघस्थ साधु विचार करने लगे मगर आचार्य श्री सब कुछ सहते रहे। एक लेप ओर औषधि का उपयोग मात्र दो सप्ताह तक कराया गया। किंचित लाभ भी हुआ। लोगों ने उन्हें 'परीषहजित' घोषित किया और अपनी श्रद्धा को उनके चरणों में पल-पल उलीचा।

ऐसे ही रोग- ग्रस्त हालत में आचार्य श्री ने एक दिन केशलोंच किया, भक्त दौड़े-दौड़े आए और समझाने लगे- गुरुदेव यह कार्य तो बाद में भी हो सकता था। वह 14 फरवरी का दिन था। भक्तों के श्रद्धा युक्त वाक्य सुनकर गुरुदेव विचलित नहीं हुए, समझाते हुए अपने हाथों से कुछ संकेत किया, 'जैसे कह रहे हों -'शरीर की कमजोरी या बीमारी चलती रहती है तो भला व्रत, संयम, नियम क्यों रोके जावें,

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

उन्होंने पुरुषार्थ-पूर्वक चलाते रहना चाहिए।' भक्तगण समझ गए । गुरुदेव का मौन यथावत रहा वैसे भी आचार्य श्री हर दो माह में केशलोंच करते रहे हैं, फलतः वह क्रम बना रहा।

तृतीय आचार्य दिवस- भक्तगण अपने गुरुदेव के आचार्य -पद की तिथि कभी नहीं भूलते, वे हफ्ते- भर पहले से उत्सव का ताना-बाना बुनने लगते हैं, अतः माघ शुक्ल दशमी 16 फरवरी 1997 को सभी ने 'तृतीय आचार्य पद प्रतिष्ठापनोत्सव' मनाया। भक्तों ने सामूहिक रूप से पाद प्रक्षालन किया, मंगल आरती उतारी और अष्ट द्रव्य से गुरुदेव की पूजा की। परम मुनिभक्त श्रेष्ठी श्री मानमल जी, महावीर प्रसाद जी झांझरी कोडरमा परिवार की ओर से श्रीकल्याण मंदिर विधान संपन्न किया गया। गुरुदेव ने सान्निध्य दिया। इस अवसर पर अनेक नगरों के भक्त उपस्थित हुए थे जिनमें ईसरी, गिरीडीह, कोडरमा, रफीगंज, भागलपुर, गया , पटना कलकत्ता आदि के भक्त अलग ही दिख रहे थे।

शीतकाल की अवधि पूरी न हो पाई तभी आचार्य श्री ने संघ सहित वहाँ से विहार किया। चरण थे राजगृही की ओर। रास्ते में कुण्डलपुर कुण्डग्राम के जिनमंदिर के दर्शन किए और दूसरे दिन पुनः चल पड़े। 1 मार्च 1997 को राजगृही के कार्यकर्त्ताओं ने क्षेत्र की सीमा पर पहुँचे हुए आचार्य श्री की भव्य अगवानी की और शोभा यात्रा के साथ प्रवेश कराया। तभी समीपस्थ वीरायतन से सतीचंदना जी ससंघ जुलूस के समीप पहुँची और आचार्य श्री को सविनय नमन किया फिर निवेदन किया वीरायतन पधारने का। आचार्य श्री ने उनकी ओर आशीष देते हुए हाथ उठाया और आगे बढ़ गए।

आचार्य श्री के सान्निध्य में क्षेत्र पर उपस्थित भक्तों ने 6मार्च 97 को तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ का निर्वाण कल्याणक सोत्साह मनाया।

यह फाल्गुन कृष्ण द्वादशी का दिवस था।

आचार्यश्री की चर्चा से राजगृही शोभायमान हो रही थी। वे पंच पहाड़ी की वंदना की भावना भा रहे थे तब लोगों ने बतलाया कि चतुर्थ पहाड़ी जिसे स्वर्णगिरि कहा जाता है, पर आना-जाना मना है। यह व्यवस्था प्रशासन द्वारा 15 वर्ष से चल रही है। शाम तक एस.पी. पुलिस अधीक्षक आचार्य श्री के दर्शनार्थ आए, उन्हें आशीर्वाद भी मिला। जब वे लौटने लगे तो कार्यकर्ताओं ने आचार्य श्री की भावना बतलाई, वे क्षण भर को सोच में पड़ गए, फिर पूँछा वंदना कब करेंगे? भक्तों ने बताया कल सुबह। एस.पी.ने सहजता से कहा -अवश्य कराइए मेरे प्रतिनिधि साथ रहेंगे।

दूसरे दिन आचार्य श्री ने ससंघ वंदना की एस.पी. महोदय ने स्वर्णगिरि पहाड़ का आवागमन खोलकर, धर्मगुरु के प्रति अपनी श्रद्धा स्पष्ट कर दी। वंदना के दौरान आचार्य श्री ने देखा कि पहाड़ पर स्थापित शांतिनाथ प्रतिमा वाली वेदी रिक्त पड़ी है। प्रतिमा चोरी चली गई थी। तब उनकी प्रेरणा से उस स्थान पर तीर्थंकर शांतिनाथ के चरण प्रतिष्ठापित कराए गए। लोगों को धर्म के क्षणों में भी आत्मिक आमोद मिलता रहा।

गया की यात्रा -

गया का सौभाग्य आया आचार्य श्री ससंघ वहाँ से प्रस्थान कर 11 मार्च 97 को गया शहर पहुँचे । विशाल समाज ने भव्य आगवानी की। गया के लोगों को एक अनचाहा सौभाग्य मिला जब उन्हें याद आया कि चैत्र सुदी नवमी, दिनांक 16 अप्रैल 97 आचार्य श्री का 49वां जन्मदिवस है कार्यकर्तागण विद्युतगति से सक्रिय हुए और त्रिदिवसीय 'आराधना-महोत्सव' के भव्य आयोजन की तैयारी की। तीन दिन तक अमृत वर्षा होती रही मगर गुरुदेव अधिक समय न दे

सके, विहार कर दिया।

हजारीबाग -

गया से चलकर संघ हजारी बाग पहुँचा तो भक्तों की भक्ति गंगा बनकर बहने लगी। संघ की आगवानी के बाद दूसरे दिन से ही उत्साही कार्यकर्ताओं ने आचार्य श्री के मार्गदर्शन में ध्यान शिक्षण शिविर का शुभारम्भ कर दिया। जो सात दिनों तक धर्म प्रभावना करता रहा। क्या वृद्ध और क्या युवक सभी जन तत्परता से भाग लेते रहे और अध्यात्म ध्यान का रहस्य समझा। आचार्य -संघ विहार करने लगा तब भक्तों ने बहुत अनुरोध किए रुकने के लिए, पर वे धर्म सरिता को नहीं रोक पाए।

कोडरमा प्रवास -

आचार्य श्री संघ सहित विहार करते हुए संस्कारों से सज्जित नगर कोडरमा पहुँचे,वहाँ भी भक्तजनों ने अपनी भक्ति सरिता बहाई और गुरु अर्चना की ।समाज ने आचार्य श्री का मंगल सान्निध्य प्राप्त करते ही तीस चौबीसी विधान सम्पन्न किया ।पं. रतन लाल हजारी बाग ने मीठे स्वरों में विधान पढ़ा। बाद में आचार्य श्री ने यहाँ भी भक्तों को ध्यान शिविर का लाभ दिया। मगर उनके पास समय अधिक नहीं था, वे सम्मेद शिखर जी जाने का भाव लिए थे।

शिखर जी : यात्रा और महायात्रा -

आचार्य श्री शिखर जी- यात्रा की ओर बढ़ रहे थे। किन्तु उनके परम भक्त श्री जयचन्द बगड़ा पहले से ही शिखर जी पहुँचकर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन धर्मानुरागी वयोवृद्ध श्रावक को शिखर यात्रा से महायात्रा के भाव हो चुके थे, वे आचार्य श्री से जैनेश्वरी दीक्षा लेकर ही महायात्रा पर निकलना चाहते थे। जब आचार्य श्री ससंघ

क्षेत्र पर पहुँचे तो बगड़ा जी के चेहरे पर चमक आ गई, वे आचार्य श्री के समक्ष पहुँचे और मन के विचार उनके समक्ष रख दिए। फिर श्रीफल चढ़ाकर यम-सल्लेखना प्रदान करने की प्रार्थना की। आचार्य श्री ने वात्सल्य पूर्वक उन्हें आशीर्वाद दिया फिर बोले-देखो, क्षेत्र पर चारों ओर कैसी प्यारी हरियाली है ? तब बगड़ा जी ने हाथ जोड़कर कहा- आचार्य श्री जिस तरह आपने मेरे इस जीवन में क्षेत्र की हरियाली दिखाई है, उसी तरह अब कृपा करके मुझे 'सिद्धालय' की हरियाली भी दिखलाइये।' आचार्य श्री उनका मर्म समझ चुके थे।

संघ ने क्षेत्र की वंदनाएँ कीं और अपनी दिनचर्या से भक्तों को कृतार्थ किया। क्षेत्र पर वृद्ध श्रावक बगड़ा जी के सुपुत्र डॉ. चिरंजीलाल बगड़ा सपरिवार पहुँच चुके थे। अत: उन्होंने भी आचार्य श्री के समक्ष अपने पिता की भावना का समर्थन किया।

मुनि अंतरात्मा सागर जी का प्रयाण-समय का स्वभाव समझते हुए आचार्य श्री ने ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी सन् 97 को श्री जयचंद बगड़ा को सादे समारोह में क्षु. दीक्षा प्रदान की और वैराग्य पथ की दिशा बतलायी। वे धर्म साधना में लीन हो गए।

कुछ दिन बाद आचार्य श्री ने वर्षायोग की स्थापना की और दैनिक कार्यक्रमों को गति प्रदान की। कहते हैं कि आचार्य श्री को सिद्धक्षेत्र ऐसे भाया कि 1997 में भी उन्होंने वहाँ ही वर्षायोग किया। लगातार तीन वर्षायोगों से क्षेत्र पर अनेक विकास कार्य हुए, साथ ही अनेक आत्माओं का भी विकास हुआ, इतना अधिक विकास कि एक-एक कर पाँच आत्माएँ धरती से चलकर मोक्ष मार्ग तय कर सकीं। उनका वर्णन रोचक तो है ही वैराग्य - सूत्रों से प्लावित भी है।

जयचंद जी जो क्षु. अंतरात्मा सागर का बाना धारण कर समाधि साधना में प्रवृत हुए थे कि भावना और चर्या को मान्यता देते हुए आचार्य

श्री ने उन्हें जैनेश्वरी दिगम्बर मुनि दीक्षा प्रदान कर दी। हो गए वे मुनि श्री 108 अंतरात्मा सागर जी। उनके भाग्य इतने प्रबल थे कि वे लगभग 100 दिनों तक आचार्य श्री के संघ में श्रमण धर्म की उपासना करते रहे, पिच्छि और कमण्डलु संस्कृति की गरिमा बढ़ाते रहे, बाद में 19 नम्बर 1997 को उन्होंने आचार्य श्री के समक्ष देह-त्याग कर सिद्धालय की राह पकड़ी।

आचार्य श्री बतलाते थे कि वे क्षपक के रूप में बहुत सफल रहे, मेरा निर्यापकाचार्य बनना सफल कर गये, सब कुछ कर्माधीन जो होता है। आत्मा की महायात्रा हो जाती है।

आत्म विकास की कहानी में दूसरी कहानी है क्षुल्लिका श्री विजयमति माता जी की उन्होंने भी कठोर-साधना की, आचार्य श्री को अपना निर्यापकाचार्य माना और आशीष छाया तले यम सल्लेखना का निर्वाह किया। आचार्य श्री ने उचित समय पर उन्हें आर्यिका दीक्षा प्रदान की नामकरण किया आर्यिका 105 श्री निर्विकल्पमति माता जी ।वे भी अपने गुरु के समक्ष सुन्दर एवं शांत समाधि की अधिकारी बनीं और देह त्यागकर अदृश्य की ओर विहार कर गईं।

तीन चातुर्मासों का समय किसी के लिए लंबा हो सकता है किन्तु पावन-क्षेत्र शिखर जी में संतों को उसका पता ही नहीं चल रहा था, उन्हें तो अपनी चर्या और साधना का ही पता था । तभी तीसरी समाधि की कथा शुरु हो गयी। आचार्य श्री के संघ में उनके गुरुदेव आचार्य विमलसागर जी की अंतिम शिष्या पूज्य आर्यिका सल्लेखनामति माता जी संघ का गौरव बढ़ा रही थीं। देह की मजबूरियाँ और उम्र की खामोसी देखते हुए उन्होंने भी एक दिन गुरु भाई पूज्य भरत सागर जी से यम-सल्लेखना प्रदान करने की प्रार्थना की। आचार्य श्री उनका ध्यान सदा रखते थे, उन्होंने एक दिन सल्लेखना व्रत दे दिया।

माता जी साधना में लीन हो गईं। गुरुदेव सुबह शाम उपदेश देते रहे। माता जी का कषाय तो क्रश पहले से ही था, अब देह भी क्रश हो गई थी, फलतः उन्होंने आचार्य श्री से आज्ञा लेकर त्रिदिवसीय उपवास किया, अंतिम दिन जब वे भगवान जिनेन्द्र देव का अभिषेक देख रहीं थीं तभी उन्हें लगा मन-पंछी उड़ने वाला है अतः समीप ही खड़े आचार्य भरत सागर जी के चरणों की ओर झुक गईं। कोई उन्हें उठाता, उसके पूर्व आचार्य श्री ने आशीर्वाद दिया। जब उनके बाजूवाली आर्यिका श्री ने उनका सिर घुमाया तो ज्ञात हुआ कि प्राण रूपी परेवा उड़ चुका है, शरीर में कुछ नहीं बचा है, केवल चेहरे पर स्मित मुस्कान बिखरी हुई है। सभी ने उनकी जय बोली और चिता सजाने की तैयारी होने लगी।

श्रावकों की साधना तीन-तीन समाधियों के समाचार से क्रमशः उत्कृष्ट हो रही थी। लोग आचार्य श्री के चरणों में सुख शांति का निवास देख रहे थे। कुछ माह बाद आचार्य विमल सागर जी के संघ की प्रसिद्ध संचालिका वयोवृद्ध नारी रत्न ब्र. चित्रा बाई का क्रम आया। वे पूज्य भरतसागर जी से कई बार सल्लेखना-व्रत देने की प्रार्थना कर चुकी थीं। भरतसागर जी हर बार उनसे कहते थे, अभी समय है, जब मुझे कुछ प्रतीत होगा तब मैं दे दूँगा। चित्रा बाई सुनकर प्रसन्न हो जाती थीं। एक दिन वे 'भरतेश-वैभव' नामक ग्रंथ का स्वाध्याय सुन रहीं थीं। एक आर्यिका जी उन्हें ध्यान से सुना रहीं थीं, जब चक्रवर्ती भरत जी एवं बाहुबली जी की वृद्ध-माताओं का सल्लेखना व्रत धारण करने का प्रसंग सुना तो चित्रा बाई अपनी भावनाओं में अभिभूत हो गईं। बस तुरंत सल्लेखना व्रत के लिए वे पूज्य भरतसागर जी की ओर चली गईं। उनके चेहरे की शांति देखकर भरत सागर कुछ सूत्र पकड़ सके अतः उन्होंने उसी दिन, श्रावण शुक्ला सप्तमी (सन् 1998) को उन्हें जैनेश्वरी-आर्यिका-व्रत प्रदान कर दिया। उनका नाम करण किया

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

आर्यिका 105 श्री विचित्रा मति माता जी।

माता जी समाधि-साधना में लग गईं। पल-पल पिच्छी का धर्म कमण्डलु का संयम उन्हें देखने लगा। अपने गुरु द्वय की गरिमा बढ़ाते हुए उन्होंने 11 दिन तक समाधि साधना की एवं उनके समक्ष देह त्याग कर दिया। संघ समाज ने चंदन चिता पर उन्हें अग्नि प्रदान की।

मुनि निर्विकल्प सागर जी-बीत गया वह वर्ष, संघ रूपी 'यायावर' की डायरी में समय सम्राट पाँचवी सल्लेखना की कथा लिखने की तैयारी कर रहा था। सामने से श्रावकरत्न श्री मानमल जी झांझरी, वे कोडरमा से आए थे। अतःसंत धनाढ्य परिवार में रहते हुए भी अनेक वर्षों से गृह सन्यास का जीवन जी रहे थे, उन्होंने आचार्य श्री से प्रार्थना की हे गुरुदेव श्रावक बनकर देख लिया, अब संत का जीवन चाहता हूँ, उम्र का शेष भाग आपके चरणों मे बीते यह कामना है।

- आप तो घर में ही वैरागी हैं, अतः घर में रहकर ही साधना कीजिए।

- नहीं गुरुदेव, मैं संघ में रहकर ही साधना करना चाहता हूँ।

आचार्य श्री ने उनकी दृढ़ता और पारिवारिक सदस्यों की अनुमोदना देख लेने के बाद, उन्हें 17 मई 1998 को क्षु. दीक्षा प्रदान की। वे संघ के समीप ही एक वसतिका में आत्म चिंतन करने लगे। देह की असमर्थता और जीवन की नश्वरता की चर्चा करते हुए क्षुल्लक जी ने दो माह बाद, आचार्य श्री से मुनि दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की।

आचार्य श्री सचेत थे, उन्होंने निर्यापकाचार का पद धारणकर अपने क्षपकराज को जैनेश्वरी दिगम्बर मुनि दीक्षा 16 जुलाई को प्रदान कर दी , नाम रखा मुनि श्री 108 निर्विकल्प सागर जी महाराज।

यम सल्लेखना ग्रहण करने के 3 दिन बाद 22 जुलाई को मुनिवर

ने देह त्याग कर दी। आचार्य श्री अंतिम क्षण तक उनके समीप थे। जय हो जैन धर्म, की जैन शासन की। श्रद्धांजलि सभा के दौरान वक्ताओं से ज्ञात हुआ कि उनका जन्म 10 जून 1910 को हुआ था। समाज की सेवा करते हुए 88 वर्ष की उम्र में समाधि का साफल्य भी पाया।

चरण धनवाद की ओर -

वर्षायोग निष्ठापना के बाद आचार्य भरतसागर ससंघ धनवाद गए। धनवाद के लोग धन्य हुए, उनका उत्साह देखते ही बनता था। आचार्य श्री की प्रभावना रूपी सरिता में जन-जन स्नान कर रहा था। कुछ ही समय बीता कि प्रबुद्ध लोगों की योजना आचार्य श्री का स्वर्ण-जयंती-महोत्सव मनाने की बनी। देखते ही देखते चैत्र शुक्ल नवमीं, अप्रैल 99 को विशाल पांडाल में आचार्य श्री का 50वाँ जन्म जयंती महोत्सव स्वर्ण जयंती के रूप में मनाया। दो माह पूर्व से 50 ग्रंथों के प्रकाशन की योजना समाज ने आर्यिका स्याद्वादमति माता जी के गरिमा पूर्ण निर्देशन में और ब्र. प्रभा जी पाटनी के संयोजन में शुरु की थी, 50 ग्रंथ समय पर तैयार हो गए अतः समारोह में पचासों ग्रंथ, श्रावकों द्वारा बारी-बारी से शास्त्र के रूप में भेंट किए गए।

समारोह के पूर्व विशाल शोभा यात्रा निकाली गई थी जिसमें आगे-आगे सुसज्जित 'ज्ञानरथ' चल रहा था, रथ में सद्यः प्रकाशित पचास ग्रंथ सजाकर रखे गए थे। हर व्यक्ति जुलूस से अधिक ज्ञानरथ पर आँखें गड़ा रहा था। अनेक भक्तों को सोनागिर क्षेत्र की याद आई जब गुरुदेव विमल सागर जी के 75वें जन्मोत्सव पर 75 ग्रंथ प्रकाशित किए गए थे।

पुनः शिखर जी -

समारोह की चर्चा पहले शहर में फिर धीरे-धीरे सम्पूर्ण देश में फैल गई। सभी को स्वर्ण जयंती अच्छी लगी। चूँकि शिखर जी में पूज्य

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

विमल सागर जी द्वारा निर्दिष्ट विभिन्न कार्य अंतिम चरण की ओर थे अतः आचार्य भरत सागर जी कुछ समय बाद पुनः ससंघ शिखर जी पहुँचे। तीस चौबीसी जिनालय का निर्माण कार्य लगभग पूर्ण हो गया। अनेक क्षेत्रों के भक्तगण पंचकल्याणक- प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए तत्पर हो गए, फलतः पंचकल्याणक समिति का गठन किया गया और गुरुदेव के सानिध्य में तैयारियाँ शुरु कर दी गईं। मुनि स्याद्वाद सागर कुछ काल पूर्व समाधियों की चर्चा जोर पकड़े थी, तो अब दीक्षाओं की चर्चा ने जोर पकड़ा। आचार्य श्री ने संघस्थ साधुओं को दीक्षा देने का विचार किया। आषाढ़ शुक्ल द्वितीया को क्षु. स्याद्वाद सागर को दिगम्बर मुनि दीक्षा प्रदान कर नाम करण किया -मुनि 108 श्री स्याद्वाद सागर जी। इसी तरह माघ शुक्ल दशमी को ब्र. कमला बाई को आर्यिका दीक्षा प्रदान कर नामकरण किया- आर्यिका 105 श्री पावापुरी माता जी। दो दीक्षाओं से तीर्थ क्षेत्र का परिदृश्य सुखद हो पड़ा । तब तक प्रतिष्ठा महोत्सव की तिथियाँ आ गईं।

पंचकल्याणक 1999 - तीव्र गीष्म की तपन को भुलाकर, वैशाख शुक्ल तृतीया से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का शुभारंभ पूज्य आचार्य श्री के सान्निध्य में हुआ। सम्पूर्ण भक्तगण तीस-चौबीसी जिनालय का अवलोकन कर रहे थे और गुरुदेव पंचकल्याणकों के कार्यक्रम साध रहे थे। जिस दिन उन्होने प्रतिमाओं को सूर्यमंत्र प्रदान किया, उस दिन भक्तों का उत्साह चरम सीमा पार कर गया। मोक्ष कल्याणक के बाद गुरुदेव के प्रवचन से कार्यक्रम का समापन हुआ।

कुछही दिन बाद पुनः माहौल बदला, आर्यिका नंदामति माता जी की ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा को समाधि हो गई।

वर्षायोग स्थापना-1999 - समय के प्रहरी और मुहूर्त के विशेषज्ञ आचार्य भरत सागर जी ने आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को चातुर्मास

की विधि विधान पूर्वक स्थापना की। इस वर्ष भी स्थापना कलश लेने का सौभाग्य भक्तराज श्री शिखर चंद पाँचुलाल पहाड़िया को प्राप्त हुआ। संघ की चातुमासिक क्रियाएँ शुरु हो गईं । तभी कुछ दिन बाद भाद्रपद शुक्ल अष्टमी को क्षुल्लिका विवेकमति जी की समाधि हो गई।

पुनः सल्लेखनाओं का क्रम सामने आया। कलकत्ता निवासी श्रीमति कंचन देवी सेठी आचार्य श्री के समक्ष आईं और यम सल्लेखना व्रत प्रदान करने की प्रार्थना की। तब आचार्य श्री ने समझाया- यह व्रत एक दम से नहीं दिया जाता, साधक की साधना देखते हुए बढ़ाया जाता है। हर क्रिया का एक क्रम होता है। कंचन देवी जी चरणों में झुक गईं चरणों में और बोलीं- आप जैसा कहेंगे वैसा करूँगी, मैंने अपना समर्पण आपके चरणों में कर दिया। गुरुदेव ने आशीर्वाद दिया। दो दिन बाद ही उन्हें आर्यिका दीक्षा प्रदान की नामकरण किया -आर्यिका 108 श्री मंदारगिरि माता जी ।

वे लगन की पक्की थीं। गुरुचरणों में साधना शुरु कर दी। उन्होंने उपवासों पर अधिक ध्यान दिया फलतः कुल 22 दिन में पाँच बार आहार चर्या हुई और अंत में यम सल्लेखना पूर्वक गुरुदेव के समक्ष देह त्याग दी समूचे क्षेत्र में जय जयकार हो गई।

वर्षायोग पूर्णता की ओर था तभी क्षु. 105 अकम्पन सागर जी ने आचार्यश्री से यम सल्लेखना व्रत ले लिया। कुछ ही दिन बाद आचार्य श्री ने उनका अनुरोध देखते हुए उन्हें मुनि दीक्षा प्रदान की नाम करण किया मुनि 108 श्री अकंपन सागर जी। माघ कृष्ण तृतीया को उन्होंने भी यम- सल्लेखना पूर्वक देह त्याग दी ।

शीतकाल कमेटी के लोग आचार्य श्री से क्षेत्र पर ही शीतकाल करने की प्रार्थना कर रहे थे तभी गोमिया के लोग वेदी प्रतिष्ठा को

सान्निध्य प्रदान करने हेतु प्रार्थना करने लगे और श्रीफल अर्पित किए आचार्य श्री ने आशीर्वाद दे दिया फिर विहार किया। पहले फुसरो नगर को समय दिया, फिर गए साणम। वहाँ उनके सान्निध्य में शांति विधान संपन्न हुआ। कुछ समय बाद पहुँचे गोमिया। पूर्व मंत्रणा के अनुसार आचार्य श्री के सान्निध्य में वेदी-शुद्धि हेतु लघु पंचकल्याणक सम्पन्न किया गया। फिर आचार्य श्री द्वारा बतलाए गए मुहूर्त में पार्श्वनाथ की सातफण वाली (सप्तफणी) प्रतिमा नूतन वेदी पर प्रतिष्ठित की गईं विशाल रथ यात्रा निकाली गई थी, जिससे सम्पूर्ण नगर का वातावरण आनंदमय हो गया।

संत-तन पर उपसर्ग - शीतकाल ही चल रहा था। प्रतिष्ठा हुए एक ही दिन बीता था कि आचार्य श्री को फेंफड़े में तकलीफ हुई, श्वॉस उठ खड़ी हुई। फेंफड़ा धोंकनी की तरह चल रहा था। भक्तों ने प्रार्थना की कि ऐसी स्थिति में विहार नहीं करें; किन्तु वे नहीं माने और हाँपते-काँपते हुए ससंघ चल पड़े। भक्तगण बैचेन सब आगे पीछे दौड़ते रहे चिंता एक ही, कहीं कुछ हो न जावे। आचार्य श्री 20 किमी. चलकर ईसरी पहुँचे । वहाँ आगवानी को उठे हाथ उपचार के लिए सक्रिय हो गये। रात्रि में आचार्य श्री की बैचेनी अधिक ही बढ़ गई। सुबह जब वैद्यराज ने परीक्षण किया तो नाड़ी की गति अत्यंत शिथिल पाई; किन्तु गुरुदेव अपनी दैनिक चर्याओं में समय देते रहे आहार चर्या के लिए भक्तों ने निवेदन किया तब वे चर्या को निकले। पर यह क्या, वे एक दो ग्रास भी नहीं ले पाए। साँसो का स्पन्दन बढ़ गया फलतः गुरुदेव वहीं बैठ गए। किसी तरह वस्तिका पहुँचे तब तक आचार्य विमल सागर जी का समाधि दिवस का स्मरण आया आचार्य श्री ने वैसी ही स्थिति में पंचम समाधि दिवस भक्तों के साथ धूमधाम से मनाया शरीर की शिथिलता आत्मा की निर्मलता को हानि नहीं पहुँचा सकी।

धनवाद पंचकल्याणक-2000 -

आचार्य भरत सागर जी धनवाद वालों को शांतिनाथ की प्रतिमा के पंचकल्याणक की स्वीकृति दे आए थे अतः उन्हें विचार आया कि मेरे अस्वास्थ्य के कारण कहीं धार्मिक कार्यक्रम विलम्बित न हो जावे अतः वे श्वॉस रोग के रहते हुए भी ईसरी में अधिक दिन नहीं रुक सके और विहार कर दिया धनवाद की ओर। उनकी उपस्थिति मात्र से पंचकल्याणक के सभी कार्यक्रम सोत्साह सम्पन्न हो गए।मगर आचार्य श्री की वेदना कम न हुई।सारे देश के भक्तगण समाचार सुनकर उन्हें देखने जा पहुँचे।सभी जन उनके दर्शन कर चकित होते थे कि अत्यंत वेदना के रहते हुए भी वे शांतिपूर्वक अपनी चर्या में मग्न रहते हैं ।सभी जन उनके पुरुषार्थ को बार-बार नमन करते थे।

सन् 2000 का जनवरी माह चल रहा था, शीत ने अपनी मार कम नहीं की थी, ठंडी हवा के झोंके शरीर को चाबुक की तरह लगते थे। तभी आचार्य श्री ससंघ विहार कर गए और धनवाद के समीप ही धैंया धनवाद में रुके।वहाँ के भक्तों ने गुरुदेव के सान्निध्य में वेदी प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई।रोग देह को अशाँत कर रहा था।

किन्तु भगवान शांतिनाथ का मंदिर आत्मा को शांति दे रहा था।धीरे-धीरे अप्रैल माह आ गया।रोग की वेदना कम हो गई तब भक्तों ने धूमधाम से आचार्य श्री का 52वां जन्मोत्सव मनाया और उसी क्रम में भगवान महावीर का जयन्ती पर्व भी भारी उत्साह के साथ मनाया। शरीर का रक्त वेदनाएँ लेकर बह रहा था। फिर भी आचार्य श्री अपनेआप को ठीक मानते रहे। ज्येष्ठ सुदी पंचमी को उसी नगर में आचार्य श्री के सान्निध्य में भक्तों श्रुत पंचमी पर्व मनाया और प्रातः बेला में रथ पर जिनवाणी विराजमान कर शोभायात्रा निकाली।फिर जिनवाणी पूजा, श्रुत- विधान-धवला-जयधवला एवं महाबंध जैसे

महान ग्रंथों की पूजा की गई। हर क्षण आचार्य श्री मार्गदर्शन प्रदान करते रहे। उस दिन आचार्य श्री ने श्रुत का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए महान प्रभावनाकारी प्रवचन दिया। फलतः सैकड़ों नर-नारियों ने नियमित स्वाध्याय का संकल्प लिया।

अनेक नगरों के लोगों ने वर्षायोग के निमित्त से आचार्य श्री के चरणों में श्रीफल अर्पित किए और प्रार्थना की। भक्तों के मन में लग रहा था कि आचार्य श्री धनवाद में वर्षायोग करेंगे; किन्तु जब आचार्य श्री की घोषणा का क्षण आया तो उन्होंने गिरिडीह का नाम लिया। वहाँ उपस्थित गिरिडीह के भक्तगण आनंद से झूम उठे ।

गिरिडीह प्रवास-2000 -

आचरण के चरण धैंया धनवाद से उठे तो गिरिडीह में रुके। सारा नगर आरती लेकर झूम उठा। गुरुदेव की प्रभावना शुरु हो गई। दूसरे दिन सिद्धचक्र विधान शुरु किया गया। प्रभावना पूर्वक विधान पूर्ण हुआ । आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को आचार्य श्री ने ससंघ वर्षायोग की स्थापना की। यहाँ भी भाग्योदय का क्षण आया श्रीमंत सेठ शिखर चंद जी, पाँचुलाल पहाड़िया एवं उनके परिवार के समक्ष। कलश की बोली उन्होंने ली। वर्षायोग का शुभारम्भ हो गया।

आचार्य श्री ने अनेक भक्तों को सवालाख जाप करने का संकल्प दिया।

गिरिडीह समाज आचार्य श्री के सान्निध्य में अनेक कार्यक्रम आयोजित करता रहा, आचार्य श्री नित-प्रति समय देते रहे; किन्तु श्वांस रोग ने कभी पीछा नहीं छोड़ा दिन में एक-दो बार तो तड़प ही जाते थे।

आचार्य श्री की कर्मठता पर आँच नहीं आई, वे परम प्रतापी आचार्य थे, उन्होंने दूसरे दिन से ही 'पुरुषार्थ सिद्धुपाय' ग्रंथ का

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

स्वाध्याय शुरू कर दिया। उन्हें महिला वर्ग की भी चिंता थी अत: उनके निमित्त से दोपहर में तत्त्वार्थ सूत्र का वाचन करते थे। चार माह तक शहर ज्ञान का सागर बन गया था। धार्मिक जन मन भर के गोता लगा रहे थे। वर्षाकाल अपने उच्च अंदाज में था, तभी एक दिन आचार्य श्री आहार के लिए पाटे पर खड़े हुए तो उन्हें चक्कर आ गया। गिरते शरीर को भक्तों ने थामा और बैठने की प्रार्थना की। वे बैठे,किन्तु उनकी गर्दन एक तरफ लटक गई। भक्त उन्हें पकड़े रहे, कुछ वैद्यों की ओर दौड़े सम्पूर्ण नगर में उदासी की परत चिपक गई। गुरुदेव को वस्तिका में ले आए। वे तखत पर लेटे रहे। दो दिन बीत गए तभी जयपुर से एक सज्जन दर्शनार्थ आए, उन्होनें भक्तिपूर्वक उनके गले की नस बैठाल दी। आचार्य श्री सामान्य हो गए। कुछ पल बाद उठकर बैठ गए। पुन: नगर में प्रसन्नता का रंग हिलौरें लेने लगा।

नगर के लोगों ने अनुभव किया कि आचार्य श्री परीषह को परीषह नहीं मानते, कष्ट सहते हुए नियम से चलते हैं,तभी तो शारीरिक कमजोरी के बाबजूद भी उसी दिन केशलौंच कर लिए। वे दो माह का नियम सिद्धांत पालते हैं फलत: वह केशलौंच आगम के अनुसार 'उत्कृष्ट-केशलौंच' कहलाता है। कुछ संतगण तीन या चार माह में करते हैं जिसे प्राचीन आचार्यों ने मध्यम, जघन्य बतलाया है।

परीषह और धार्मिक कार्यक्रम का क्रम पूरे माह चला, देखते ही देखते भाद्रपद शुरु हुआ, फिर पर्यूषण पर्व। आचार्य श्री को मानसिक कार्य बढ़ गया। सुबह तत्त्वार्थसूत्र पर सार्थक प्रवचन करते दस धर्मों में से क्रमश: एक धर्म की व्याख्या करते, फिर दोपहर में कक्षा, मगर आहार नाम मात्र को लेते। भक्तगण उनका श्रम देखकर चिंतित थे कि कहीं पुन: कोई रोग हमला न कर दे। अगले माह, आश्विन कृष्णा सप्तमी को समाधिस्थ आचार्य विमल सागर जी का जन्मोत्सव मनाया गया।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

इस प्रसंग पर पूज्य भरत सागर जी ने अपने उपदेश में कहा- गुरुदेव तो दसों धर्मों से ओत-प्रोत थे, मगर मार्दव-धर्म उनके स्वरूप में हर पल झलकता रहता था। वे हृदय से ही नहीं, शरीर से भी सुकोमल थे। कोई सुपारी की तरह ऊपर से भीतर तक कठोर होता है, कोई नारियल की ऊपर से तो कठोर; किन्तु भीतर से सहृदय। कोमल होता है, किन्तु हमारे गुरुवर तो किसमिस की तरह बाहर से अंदर तक कोमल ही कोमल थे। आज उनकी जयंती मनाकर हम उनके गुणों को अपने जीवन में लाने का प्रयास करें।

पूज्य भरत सागर जी ने आगे बतलाया-'मुझे क्षु. अवस्था में ही वमन होते थे, पूरा आहार भी नहीं चल पाता था और उल्टी हो जाती थी, मुँह में छाले रहते थे आचार्य श्री ने एक दिन कहा था- मुनि दीक्षा ले लो सब बीमारियाँ भाग जायेंगी। मुझे आश्चर्य है कि जब मैंने दीक्षा ली तो मेरे दोनों कष्ट समाप्त हो गए। इससे सिद्ध होता है कि पूज्य गुरुदेव को वचन सिद्धी प्राप्त थी।'

भारी प्रभावनाओं के साथ दीप पर्व पर चातुर्मास की निष्ठापना की गई। श्री सूरजमल जयकुमार गंगवाल की प्रार्थना पर अष्टाह्निका पर्व में 'चारित्र-शुद्धि' विधान सम्पन्न किया गया। आचार्य श्री फिर रोग ग्रस्त हो गए।

पौष माह चल रहा था अचानक क्षु. चम्पापुर सागर जी का स्वास्थ्य बिगड़ गया। उनकी हालत देखते हुए, उनके अनुरोध पर आचार्य श्री ने ' मुनि-दीक्षा' प्रदान की यम सल्लेखना के साथ कुछ घंटों बाद मुनिवर 108 चम्पापुर सागर जी ने देह त्याग किया।

आचार्य श्री शिखर जी को विहार करना चाहते थे। स्वास्थ्य ठीक नहीं था; इसलिए भक्तगण रोक रहे थे; किन्तु वे नहीं रुके और विहार कर सिद्ध क्षेत्र के प्रांगण में पहुँच गए। 29 दिसम्बर 2000 को गुरुदेव

विमल सागर जी का 'स्मृति दिवस महोत्सव' मनाया गया। हजारों मुनि भक्तों ने समाधिस्थ संत की प्रतिमा का अभिषेक किया, फिर अष्टद्रव्य से पूजा। पूज्य भरतसागर जी ने मंगलमय सान्निध्य दिया कार्यक्रम को।

शिखर जी में विराग सागर जी पहले से ही विराजे हुए थे अतः वे पूज्य भरत सागर जी से मिलने आए। लोग जानते थे कि भरत सागर जी न केवल श्री उर्जयन्त सागरजी के; बल्कि श्री विरागसागर जी के प्रारंभिक शिक्षा-गुरु हैं। दोनों आचार्यों का विनय सहित मिलन सारे आकाश में मिश्री घोल गया।

उस समय शिखर जी में सभी संघों की 65 पिच्छियाँ साधना में लीन थीं। सभी ने एक साथ पर्वतराज की वंदना का भाव बनाया। आचार्य भरतसागर के पथानुगामी बनकर सभी पर्वत पर गए। चौपड़ा कुण्ड पर चतुर्दशी का प्रतिक्रमण किया। आचार्य श्री भरतसागर जी ने प्रमुख आचार्य की चर्या का निर्वाह करते हुए सभी साधुओं को प्रायश्चित दिया। भारी भक्तिपूर्वक पर्वतराज की वंदना पूर्ण कर साधुगण अपनी वस्तिकाओं में लौटे। जब वे चौपड़ा कुंड पर एक साथ आहार ले रहे थे उस समय का दृश्य कोई भी दर्शक नहीं भूल सकता। हर चेहरे से वात्सल्य बरस रहा था।

शिखरजी - 2000 -

आचार्य श्री शिखर जी में ही थे, माह शुक्ल दशमीं को समस्त संतो और भक्तों ने उनका 'आचार्य-पदारोहण दिवस' धूमधाम से मनाया। आचार्य श्री संभवसागर जी एवं आचार्य श्री विराग सागर जी कार्यक्रम के मुख्य सूत्रधार थे। दोनों वरिष्ठ संतों ने आचार्य भरत सागर जी के सम्मान में सुंदर उद्बोधन दिया। अवसर पाकर श्री महावीर सेठी सरिया ने आचार्य भरत सागर को श्रीफल भेंट किया

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

और 'सरिया पंचकल्यालणक' में सान्निध्य प्रदान करने की प्रार्थना की। उन्हें आशीर्वाद मिल गया।

सरिया की ओर -

इस नगर में मात्र ग्यारह जैन परिवार बसते हैं। मगर वे पंचकल्याणक महोत्सव का विशाल आयोजन तय कर चुके थे। प्रतिष्ठाचार्य श्री धर्मचन्द्र शास्त्री मार्गदर्शन दे रहे थे। आचार्य भरत सागर जी ने फाल्गुन माह की अष्टाह्निका के मध्य ही, सरिया के लिए विहार कर दिया। विशाल स्तर पर आगवानी हुई। सुनिश्चित समय, दो मार्च से नौ मार्च 2001 तक महोत्सव के कार्यक्रम चले। श्री कन्हैया लाल सेठी औरंगाबाद विहार ने सौधर्म इंद्र का पद प्राप्त कर अपनी भक्ति का परिचय दिया।

मुनि भक्त श्री महावीर प्रसाद सेठी जी ने महावीर जयंती और 'भरत-नवमी' के तालमेल का अध्ययन करते हुए दोनों पर्व आचार्य श्री के सान्निध्य में सम्पन्न करने की मंत्रणा की फिर सभी जन आचार्य श्री से प्रार्थना करने पहुँचे, श्रीफल भेंट किए और आशीष पाया।

अप्रैल माह में आचार्य श्री भरत सागर जी की 53वीं जयंती और भगवान महावीर की 2600वीं जयंती एक साथ मनाने का मन बनाया। 1 अप्रैल से 6 अप्रैल 2001 तक कार्यक्रम चले। छोटे से ग्राम में हजारों गुरु भक्त उपस्थित हुए, सभी ने धूमधाम से दो जयंतियाँ मनाईं। आचार्य श्री की वेदनाएँ देखते हुए भक्तों के मुख पर एक ही वाक्य था-**'धन्य विमल के लाल, जियो हजारों साल।'** जब भक्तगण उत्साह से भरत नवमी मना रहे थे तब आचार्य भरत सागर जी शांत-भाव से राम-नवमी मना रहे थे, हाँ आत्म नवमी। उस दिन उन्होंने प्रवचन में राम ओर भरत के विषय में जानकारी देते हुए महाराज दशरथ के न्याय की सराहना की थी। वे बोले-'दशरथ जी ने रामचंद्र जी को वन जाने को

कहा था और भरत को अयोध्या का राज दे दिया था, इसका अर्थ यह नहीं कि राम के साथ अन्याय हुआ था। विचार करें तो दशरथ जी ने न्याय का विराट उदाहरण प्रस्तुत किया था भरत को अयोध्या का छोटा-सा राज्य दिया था और रामचन्द्र को विशाल वन प्रदेश का राज्य सौंपा था। तीनों पात्रों ने आदर्श का पालन भी किया आप इसी आदर्श का पालन करें।'

आचार्य श्री ने भगवान महावीर के जन्म कल्याणक पर्व पर भी विशेष प्रवचन किया था- 'मनुष्य को जोश में नहीं, होश में जीना चाहिए और ढोंग से नहीं, ढंग से रहना चाहिए। इस बीच जीवन भर पाप से घृणा किन्तु पापी के प्रति करुणा करना चाहिए। जीवन के अंत तक महावीर के सिद्धांतों पर चलने का संकल्प लेना चाहिए। आचार में अहिंसा, विचार में अनेकांत, वाणी में स्याद्वाद, और जीवन में अपरिग्रह भगवान महावीर के मूल सिद्धांत हैं। यदि लोग अपना जीवन इन सिद्धांतों की छाया में चलाए तो वास्तविक शाँति का अनुभव करेंगे। हम सब समाधिमरण की भावना करतें हैं, अतः ध्यान रखना। चाहिए कि जो व्यक्ति शाँतिपूर्वक जीवन नहीं जीता, वह शाँतिपूर्वक मरण कैसे पाएगा।'

जितने माह आचार्य श्री नगर में रहे, घर-घर अमृत बरसता रहा, जैन-अजैन सभी उनकी सराहना करते रहे, मगर तभी 21 अप्रैल 2001 को आचार्य श्री ने वहाँ से ससंघ विहार कर दिया।

कोडरमा - 2001 -

मूलरूप से यह औद्योगिक नगरी है; किन्तु अपने संस्कारों के कारण धर्म नगरी कहलाती है। यहाँ के श्रावकों ने आचार्य श्री के आगमन के पूर्व नगर को अयोध्या नगरी की तरह सजाया था। गलियों में धर्म-चर्चा की तरह वंदन बार सजे हुए थे, चौराहों पर मुनियों के

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चरणों में झुके श्रावकों की तरह स्वागत द्वार सज्जित थे। बड़ों से लेकर बालकों तक में उत्साह देखने को मिल रहा था। सबकी नजरें आचार्य श्री का पथ बुहार रही थीं। ज्येष्ठ माह की गर्मी शरीरों से, शरबत बनकर वह रही थी। तभी एक दिन गुरुदेव ससंघ पधारे। नगर-सीमा पर भव्य आगवानी ।शोभायात्रा के साथ नगर प्रवेश हुआ।

आचार्य श्री को आए दो दिन ही न बीते कि उन्हें तेज ज्वर और सिरदर्द हो आया, आहार पूरा न ले पाते और वमन हो जाता। एक हफ्ते बाद स्थिति यह हुई कि तीन दिन में एक बार आहार ले पाते। भक्तगण भयभीत हो गए । मगर आचार्य श्री ने प्रभावना कम नहीं होने दी। संघस्थ मुनियों द्वारा बच्चों, युवकों, महिलाओं की कक्षाएँ शुरु करा दीं फलतः दिन भर चहल-पहल बनी रहती थी। किसी कक्षा में जैन ध र्म भाग 1 से 4 पढ़ाया जा रहा था तो किसी में तत्त्वार्थसूत्र, किसी में द्रव्य संग्रह और किसी में छहढाला। समस्त नगर धर्म-शिक्षा की सरिता में स्नान करने लगा।

ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को आचार्य श्री के सान्निध्य में नगर वासियों ने 'श्रुत-पंचमी-पर्व' धूमधाम से मनाया। देश के विभिन्न नगरों से भक्तगण आ पहुँचे। महान गुरुभक्त एवं संघपति श्रेष्ठी श्री शिखर चंद जी पहाड़िया एवं उनकी भार्या श्रेष्ठ गृहणी श्रीमति प्रेमलता देवी पहाड़िया ने आचार्य श्री से श्रुत-स्कंध-विधान की प्रार्थना की। आचार्य श्री के सान्निध्य में वह सम्पन्न हुआ । संघपति ने सपरिवार षड्खण्डागम ग्रंथराज की पूजा भी की। फिर उन्होंने अनेक कार्यकर्ताओं के साथ चातुर्मास हेतु श्रीफल अर्पित करते हुए प्रार्थना की। आचार्य श्री कुछ समय तक मौन रहे, सो भक्तगण घोषणा सुनने लालायित रहे, अंत में आचार्य श्री ने कोडरमा के लिए स्वीकृति दे दी। भक्तगण नाचने लगे। गुरुदेव की जयकार करने लगे।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

निश्चित समय पर चातुर्मास स्थापना के क्षण आ गए। आचार्य श्री ने आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को ससंघ स्थापना की। मंगलबेला में मंगल-कलश का मंगल-शुभयोग संघपति श्री शिखरचन्द जी पहाड़िया एवं श्री प्रदीप जी छावड़ा को मिला। लोगों ने उनके पुण्य की सराहना की।

कार्यक्रम के अंत में समस्त श्रावकगण आचार्य श्री के उद्‌बोधन की प्रतीक्षा कर रहे थे। संघपति के अनुरोध पर उन्होनें प्रवचन दिए- मैं अपना चातुर्मास अकेले ही कर सकता हूँ किन्तु मेरे चातुर्मास में आप सब ने अपना चातुर्मास जोड़ दिया है, अतः हमारे साथ-साथ आप सबको भी किंचित् नियमों में बंधना चाहिए। यह चातुर्मास साधना का पर्व बने, ऐसा प्रयास करो। नित्य इंद्रिय-दमनकर इच्छाओं पर नियंत्रण करो। चार माह ब्रह्मचर्य से रहो। भाद्‌पद में तो अनिवार्य रूप से। आपने जिस तरह साधु को बाँध लिया है उस तरह अपने आप को भी चार माह के लिए बाँधिए। यह साधना का उत्सव है सो साधना से नहीं साधनों से बचना है। धर्म के दो तट होते हैं, एक पर साधु अवस्थित है, दूसरे पर समाज। अतः दोनों के मध्य से धर्म सरिता पल-पल प्रवाहित होती रहे।

सम्पूर्ण कार्यक्रम भक्तों को भारी प्रेरणाप्रद सिद्ध हुआ, उसी दिन से सम्पूर्ण नगर में मंदिर जैसा वातावरण बन गया। जय हो गुरुदेव भरत सागर जी की।

आचार्य श्री ने धवल,महाबंध का अध्यापन संघ की कक्षाओं में शुरु किया और समाज के मंच पर ज्ञानार्णव सागार धर्मामृत, भक्तामर-सार्थ, तत्वार्थसूत्र एवं जीवकाण्ड आदि प्रमुख ग्रंथों का सुबह और मध्याह्न में परायण किया। पूरा परिसर महाविद्यालय प्रतीत होने लगा और श्रावकगण विद्यार्थी। उस समय संघ में 9 पिच्छियाँ थीं जिनमें

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

मुनि108 श्री श्रवण सागर जी, मुनि 108 अनेकांत सागर जी, मुनि 108 श्री स्वयंभू सागर जी, आर्यिका 105 स्याद्वादमति माता जी, 105 श्री मोक्षमति माता जी एवं क्षुल्लिका 105 चेतनमति माता जी के नाम हैं।

पर्यूषण पर्व मनाते हुए भाद्रपद निकल गया। आचार्य श्री ने प्रतिदिन ज्ञान का लाभ प्रदान किया, सुंदर प्रवचन दिए फलतः समाज को सुधापान का अभीष्ट अवसर मिला। पर्व में श्रीमति हेमलता देवी झांझरी; मुनि भक्त सुरेश जी झांझरी की धर्म पत्नि सहित पन्द्रह महिलाओं और पुरुषों ने दस-दस उपवास किए। गुरुदेव की प्रभावना ऐसी हुई कि 40 बच्चों ने तेला के व्रत किए। भाद्रपद की धर्म प्रभावना से प्रभावित होकर श्री प्रदीप जी छाबड़ा ने रत्नत्रय की माला ली।

धार्मिक कार्यक्रमों का क्रम बढ़ता ही गया। फलतः आसोज माह के शुक्ल पक्ष में मुनि भक्त श्री महावीर प्रसाद जी, सुरेश कुमार जी झांझरी ने सपरिवार सोलह दिवसीय शांति विधान कराया। पूज्य आचार्य श्री ने मंगलमय सान्निध्य दिया।

पुण्य लूटने के लिए भक्तगण प्राण-पण से क्रियाओं में लगे थे, तभी महावीर प्रसाद सेठी (सरिया) एवं श्री प्रदीप कुमार जी छाबड़ा ने ग्यारह दिवसीय सर्वतोभद्र विधान का आयोजन आचार्य श्री के सान्निध्य में किया। नगरवासियों ने विधान में स्थापित 527 प्रतिमा जी के दर्शन किए। संघस्थ ब्र. प्रभा जी ने 8 उपवास कर अष्टाह्निका की गरिमा बढ़ा दी।

उपसर्ग - 2001 - कोडरमा में धार्मिक कार्यक्रम प्रभावना का उच्च स्तर स्पर्श कर रहे थे तभी छठवें दिन, 28 नवम्बर 2001 को प्रातःकालीन बेला में, करीब 3:45 बजे आचार्य श्री का गला रुंध गया। आवाज चली गई। कुछ बोलते तो केवल हवा ही निकलती

महसूस होती। भक्तगण घबरा गए। कुछ लोग फोन से संपर्क करने लगे और देखते ही देखते दो वैद्य और डॉक्टर उपस्थित हो गए। उन्होंने गंभीरता से अवलोकन किया किन्तु तुरंत निदान नहीं कर पाए।

आचार्य श्री के संकेतानुसार विधान के कार्यक्रम चलते रहे; किन्तु भक्तगण भगवान के समक्ष होते हुए भी, गुरु के विषय में सोचते रहे।

वर्षायोग की अवधि आनंद के साथ-साथ वेदनाओं से भी जुड़ गई। विधान पूर्ण हो जाने पर संघ को बड़े मंदिर परिसर में विराजित कराया गया। भक्तगण आचार्य श्री के परिषह से विचलित होकर घंटों तक जाप देते रहते थे।

नहीं बोलते थे आचार्य श्री, किन्तु मुखमण्डल पर मुस्कान लाना नहीं भूले थे अतः घबराए हुए भक्तों को उनकी मुस्कान संबल प्रदान कर देती थी। मगर सत्य तो यह था कि सारे नगर के चेहरे विषाद-ग्रस्त हो गए, मुस्कानें- पक्षियों की तरह उड़कर कहीं दूर चलीं गईं थीं। भक्तगण आचार्य श्री की सुधा सिंचित वाणी सुनने के लिए व्यग्र थे, किन्तु उनके वश में कुछ नहीं था। कई दिन बीत गए परन्तु गुरुदेव ने ध ार्मिक कार्यक्रमों में शिथिलता नहीं आने दी। एक के बाद एक, कार्य कराते गए, ऋषि मण्डल विधान, पंचपरमेष्ठी विधान, भक्तामर विध ान, कल्याण मंदिर विधान आदि प्रमुख रहे।

इन सब के बावजूद भक्तों का मन शाँत नहीं हो पा रहा था, अतः कुछ लोग एकदिन में सवालाख जाप कर रहे थे, सहारा था णमोकार मंत्र का। धार्मिक-कार्यक्रमों के बाहुल्य के बाद भी जब आचार्य श्री की आवाज नहीं आई तो भक्तगण पश्चाताप करते और कहते हम सबके पापोदय से गुरुदेव की वाणी कुंठित हुई है। उधर साधु संघ के सदस्य कहते- हमारे पापोदय से गुरुदेव की वाणी गई। एक मायने में सभी जन अपने गत कर्मों को कोस रहे थे।

एकदिन पूज्य स्याद्वादमति माता जी ने आचार्य श्री से पूछा- गुरुदेव वाणी के बिना क्या होगा ? और उदास हो गईं, तब गुरुदेव ने मुस्कराते हुए संकेत किया, जिसका आशय था, सब ठीक होगा, घबराओ नहीं। तब माता जी विचार करने लगीं कि जीवन के प्रारंभ काल से ही समय ने गुरुदेव की बहुत परीक्षाएँ ली हैं।

बनारस की ओर -

शीतकाल चल रहा था, तभी आचार्य श्री ने ससंघ विहार कर दिया। भक्तगण रोते-विलखते रह गए, किसी की प्रार्थना न सुनी। वे एक परम प्रतापी योद्धा की तरह चलते रहे। उन्हें देख लोग जैन-धर्म की जय बोल रहे थे। धन्य है धर्म और धन्य हैं गुरु।

रास्ते में सैनी गाँव सामने था। वहाँ परम विदुषी 105 श्री ज्ञानमति माता जी अवस्थित थीं। उन्होंने ससंघ काफी दूर तक चलकर आचार्य श्री अगवानी की। श्रावकों ने पाद- प्रक्षालन किया। भक्तों ने आरती उतारी। दोनों संघों ने शोभायात्रा के साथ नगर प्रवेश किया। चूँकि माता जी को मालूम था अत: वे आचार्य श्री के पास काफी समय तक रुकीं। चौबीस घंटे में कई बार माता जी आचार्य श्री से वार्ता करने, उनके मन की बात समझने गईं, किन्तु आचार्य श्री कुछ भी बोल नहीं पाए, संकेत ही करते रहे। जब संघ चलने लगा तो ज्ञानमति माताजी ने एक यंत्र दिया, जिसे श्री मृत्युंजय यंत्र कहते हैं,फिर बोलीं-यह शुद्ध है अत: इसे यदि गिलास भर पानी में स्पर्श करा दोगी तो वह जल दवा तुल्य हो जावेगा। जिस तरह आहार के पहले दो-चार चम्मच काढ़ा दिया जाता है, उसी तरह यदि कुछ चम्मच दिया जाए तो लाभ हो सकता है।

आचार्य श्री ससंघ प्रस्थान कर गए। रास्ते में स्याद्वादमति माता जी एवं ब्र. प्रभा पाटनी जी निरन्तर यंत्र के पानी का ध्यान रखती थीं

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

और समय पर व्यवस्था रखती थीं।

बनारस पहुँचने पर अनेक रास्ते खुल गये, अनेक लोग उपचार करने आगे आये, किन्तु जब सुना कि वैद्यराज श्री विश्वनाथ जी कलकत्ता, और डॉ. डी. सी.जैन दिल्ली की मंत्रणानुसार आचार्य श्री का इलाज चल रहा है तो लोग संतोष कर चुप हो जाते। यह पृथक बात है कि कुछ अवसर-परस्त लोगों ने देश भर में अफवाह फैला दी थी कि एक माता जी ने आचार्य श्री को कुछ खिला दिया है इसलिए उनकी आवाज चली गई। भ्रम पूर्ण बातें करने वाले अपने जीवन को पाप के कुंड में उतार रहे थे क्योंकि जो सत्य था वह भक्तगणों से छुपा नहीं था। सत्य के धरातल पर चल रहे, सही समाचार देशभर ने स्वास्थ्य लाभ हेतु कई दिनों तक जाप दी। उनमें से कुछ नाम यहाँ देकर यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि संतों के हृदय में वात्सल्य की गंगा पल-पल बहती है- पूज्य आचार्य 108 श्री विद्यानंद जी महाराज, आचार्य विराग सागर, पूज्य आचार्य श्री कुन्थु सागर जी महाराज, गणनी आर्यिका रत्न सुपार्श्वमति माता जी एवं गणिनी आर्यिका रत्न विजयमति माता जी। आहार के समय आचार्य श्री को ऋषिमंडल यंत्र जल, णमोकारमंत्रित जल, भक्तामर मंत्रित जल की व्यवस्था की जाती रही। संघस्थ साधुगण निरंतर शाँति मंत्र एवं दिन में तीन बार सहस्र नाम का पाठ करते रहे।

शीतकाल चला गया। गीष्मकाल का शुभारंभ हो गया। आचार्य श्री विहार करते हुए शहर कानपुर पहुँचे, संघस्थ साधुगण एवं संघपति आदि पग-पग पर साथ थे। आचार्य श्री के दोनों पैरों में सूजन आ गई, धीरे-धीरे घुटने फूल गये, एक पग उठाना मुश्किल हो गया। देहत्व ने गंभीर स्थिति बना दी ऊपर से ज्येष्ठ माह की धूप। संघस्थ साधु विचार करने लगे, आगे बढ़ें या यहीं रुकें? तभी संघपति ने समीप के एक

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

सज्जन से अनुरोध किया कि संध को कुछ दिन यहाँ ठहराइये और हमारे साथ मिलकर सेवा कीजिए। उन सज्जन ने आचार्य श्री की तबियत को देखते हुए स्पष्ट स्वीकृति नहीं दी, फिर झिझकते हुए बोले-'महाराज अधिक बीमार हैं, अगर कुछ हो गया तो लोग हमें क्या कहेंगे। अतः मैं कैसे हाँ कहूँ।' उत्तर सुनकर बहादुर साधुओं के चेहरे पर मुस्कान आ गई, वे जानते थे कि जब कर्म वेदना दे रहे हैं, तो यह श्रावक कैसे सहयोग देगा? यह भी तो कर्माधीन है। वे सज्जन नहीं जानते थे कि साधुओं की वैयावृत्ति और उपचार के क्षण भाग्य से ही मिलते हैं। संघस्थ साधुगण और संघपति अनुकूल समय देखकर आचार्य श्री के साथ विहार कर गए।

बराबंकी का गौरव - 2002 -

ज्यों ही संघ बाराबंकी की सीमा पर पहुँचा, सम्पूर्ण नगर बादलों की तरह बरसा मानो हाथ में कलश लिये हों, लोगों ने पग-पग पाद-प्रक्षालन किया। डग-डग आरती की। वह 18 जुलाई 2002 का धर्म वर्धक दिवस था। आचार्य श्री ने ससंघ श्री चंदप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर पहुँचकर तीर्थंकर चंद्रप्रभु की प्रतिमा के दर्शन किए। संघ के साथ-साथ श्रावकों को भी साता का अनुभव हुआ।

दूसरे दिन से वहाँ के भक्तों ने स्वप्रेरणा से मंदिर में बैठकर प्रतिदिन चालीसबार भगवान चंद्रप्रभु के चालीसा का पाठ शुरु कर दिया। पूज्य आर्यिका स्याद्वादमति माता जी को भक्तों का उपक्रम बहुत अच्छा लगा, उन्हें विश्वास हो गया कि इसी नगर में उपसर्ग टलेगा।

एक दिन आचार्य श्री को चक्कर आ गया। साधुओं ने उन्हें संभाला, अनुभव हुआ दोनों हाथों में कंपन है। स्थिति अधिक गंभीर हो गई। दूसरे दिन आहार नहीं हो पा रहा था। धीरे-धीरे 4 बज गए, जब साधुओं ने मिलकर उनका सहयोग किया तो आचार्य श्री खड़े तो हुए किन्तु

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

जल न गटक सके, मुश्किल से चार-छह चम्मच जल पेट में पहुँचा, ऐसी स्थिति में समाज के समक्ष घबराने और प्रभु नाम जपने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। संघपति की व्यवस्था से वैद्य श्री सुशील कुमार जयपुर से एवं डॉ. डी. सी. जैन दिल्ली से आ गए। भारी सोच-विचार चला। जब पानी ही नहीं ले रहे तो दवा कैसे पेट में जाए- सबके आगे एक ही सोच था वैद्यराज जी की सलाह से वैयावृत्ति का नया सूत्र अपनाया गया, तब जाकर सातवें दिन आचार्य श्री ने थोड़ा-सा जल लिया। तब कहीं जनता को संतोष हुआ कि भीषण तपन में कुछ तो आधार बना।

आचार्य श्री सोलह दिन तक आहार नहीं ले सके, पर किसी-किसी दिन थोड़ा बहुत जल अवश्य ले पाए। इस बीच वर्षायोग स्थापना की तिथि आ गई। आचार्य श्री की आज्ञानुसार संघस्थ साधुओं ने विधिपूर्वक स्थापना की। तब तक वहीं महासभा अध्यक्ष श्री निर्मल जी सेठी एवं पं. श्रेयांस कुमार दिवाकर पहुँचे उन्होंने भी विचार विमर्श किया।

उपसर्ग का क्रम दूर हुआ, समुचित चिकित्सा चलाई जा रही थी किन्तु उतना लाभ नहीं मिल रहा था। भाद्रपद शुक्ल पंचमी को जलाभाव के कारण आचार्य श्री के पेट और मस्तक में गर्मी चढ़ गई, बैचेनी ने उनके चेहरे पर वेदना का रंग चढ़ा दिया। भक्तगण सोच कर रह जाते। कुछ लोगों को गंदोधक के सद्प्रभाव का ध्यान हो आया अतः आचार्य श्री के ऊपर वे गंधोदक छिड़कने लगे। उनकी श्रद्धा ने विश्वास को जन्म दिया, आचार्य श्री पर गर्मी का प्रकोप कम हो गया। सारे शहर में खुशी की लहर दौड़ गई तभी मध्याह्न वेला में आचार्य श्री को आहार के लिए उठने की प्रार्थना की गई। वे उठे, मगर आहार न ले सके, कुछ जल ही पेट तक पहुँचा।

भक्तों को कुछ संतोष हुआ। तब तक कलकत्ता वाले वैद्यराज आ गए। उन्होंने दवा देते हुए कहा आहार के समय जल देने के पूर्व दवा देना, फिर जल देना। भाग्यवश प्रथम खुराक से ही आचार्य श्री ने किंचित शाँति अनुभूत की। इसी तरह 20 दिन और बीत गए, तब जाकर गुरुदेव के निर्विघ्न-आहार हुए। मगर आवाज न आई अतः भक्तों की खुशी क्षणिक सिद्ध हुई। इतनी भारी व्याधियों के बाद भी आचार्य श्री निर्भीक और निश्चिंत दृष्टिगोचर होते थे। समय पर सामायिक, प्रतिक्रमण और स्वाध्याय करते रहे।

चमत्कार नहीं तो क्या है- आचार्य श्री की वेदना देखकर आर्यिका स्याद्वादमति माता जी सर्वाधिक चिंतित रहती थीं। एकाएक कार्तिक कृष्ण एकादशी को रात्रि की कालिमा में से कोई आवाज अवश्य आयी, भक्तामर स्त्रोत के 48 पाठ करो। सुबह माताजी ने आचार्य श्री को घटना बतलाई, फिर पाठ करने हेतु आज्ञा माँगी। आचार्य श्री! आचार्य श्री क्या बोलते हैं, सो विचार करने लगे। तब तक माताजी ने कहा कि मुझे आठ घंटे लगेंगे, इस बीच पं. श्रेयांस कुमार जी लगातार आपके पास रहेंगे और आपको समय पर सामायिक पाठ, स्तुति पाठ, सुनायेंगे और स्वाध्याय पूरा करेंगे। उस दिन ऐसा हुआ ही हुआ 48 पाठ आठ घंटे में पूर्ण हो गए।

दुख भरे दिन बीते रे श्रावक - आचार्य श्री को केशलोंच किए दो माह पूर्ण होने जा रहे थे अतः वैसी ही कमजोर दशा में उन्होंने, सबके अनुरोध ठुकराते हुए, कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को पाँच त्यागियों सहित प्रसन्न मुद्रा में केशलोंच संपन्न किए। भक्तगण धन्य हैं धन्य हैं, कहते हुए रह गए। मगर उसी दिन लोगों के मन में यह भाव उठा कि गुरुदेव की वाणी शीघ्र लौटेगी। भक्तों ने लाखों जापें फेरीं, संघस्थ साधुओं ने उपसर्ग निवारण की दिशा में धर्मध्यान किया, बड़ों-बड़ों

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

ने अपने विचार शक्ति लगा दी, पूज्य माता जी ने अखण्ड भक्तामर पाठ किया है,सो किसी न किसी का पुण्य कार्य करेगा।

चार दिन ही बीते थे कि दीप -पर्व मनाने का दिवस आ गया, वर्षायोग निष्ठापना का। भक्तों ने विशाल मंच पर सुंदर सजावट की। आचार्य श्री के लिए सुसज्जित सिंहासन रखा और श्रद्धावश सिंहासन के सामने माइक रख दिया। अनेक लोग माइक देखकर विचलित हो गए, वह पूँछ बैठे भाई साहब, जब गुरुदेव की आवाज ही नहीं है तो माइक क्यों रख दिया? कार्यकर्त्ताओं ने विनयपूर्वक उत्तर दिया, बन्धुवर आशा से आसमान है, पता नहीं क्यों हम लोगों के मन में भावना उठी माइक रखने की, सो रख दिया माइक यूँ विगत कई माह से दूर ही रहा है।

निश्चित समय पर महावीर के निर्वाणोत्सव के मंगल प्रभात पर प्रातः 4 बजे साधुगण आ गये। विशाल पांडाल लाडू समर्पित करने वाले हजारों भक्तों से भरा हुआ था। मौन रहते हुए गुरुदेव ने ससंघ निर्वाणोत्सव मनाया और विधिपूर्वक वर्षायोग निष्ठापना की। गुरुदेव सहज भाव से सिंहासन पर बैठे तभी कुछ प्रमुख कार्यकर्त्ताओं ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की- हे धरती के देवता, सुधा-बिन्दु छलकाइए, कुछ बोलिए। आचार्य श्री ने उन पर ध्यान देते हुए, बोलने का प्रयास किया। पहला वाक्य निकला ओम् नमः सिद्धेभ्यः। बस फिर तो गुरुदेव ने धीरे-धीरे पूरा मंगलाचरण कह दिया और कुछ देर प्रवचन भी किए।

उनकी वाणी सुनकर भक्तों में अद्वितीय उत्साह हो आया। वे नाचने लगे, तालियाँ बजाने लगे। सभी को आश्चर्य हो रहा था किन्तु जो देख और सुन रहे थे वह एक महान सत्य था। गुरु की साधना थी, भक्तों की उपासना थी। सारे नगर में शुभ समाचार विद्युत-गति से फैल गया। सैकड़ों भक्तों को सूचना दी। सभी को चमत्कार प्रतीत हो रहा था।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चूँकि बहिन ब्र. प्रभा पाटनी ने भावना की थी जिस दिन गुरुदेव की आवाज आएगी उसी दिन सप्तम प्रतिमा के व्रत आचार्य श्री से प्राप्त करूँगी। उन्होंने हाथ जोड़कर आचार्य श्री को स्मरण दिलाया। आचार्य श्री का स्वाध्याय और अध्ययन, अध्यापन पूर्ववत् चलने लगा।

बाराबंकी कारागार- नगर के कारागार में बंदीगण को जब ज्ञात हुआ कि गुरुदेव आ गये तो उन्होंने गुरुदेव का प्रवचन सुनने की भावना की। कार्यकर्त्ताओं ने व्यवस्था बनाई और आचार्य श्री ससंघ प्रवचनार्थ जेल गए। वहाँ कैदी भाईयों के मानस के अनुरूप गुरुदेव ने बहुत प्रभावक वार्ता सुनाई - महानुभावो, आप तो जन्म से अच्छे पुरुष रहे हैं; किन्तु गलत संगत या अन्य किसी कारण से आपको कारागार में आना पड़ा इससे आपका सम्मान तो गया ही, आपके परिवार के लोगों का मान भी घटा है। आपके माता-पिता या भाई-बहिन या संतान को आपके कारण नीचा देखना पड़ा। उन्हें समाज के समक्ष कैसी ठेस लगती होगी, आप खुद कल्पना करो। ठेस तो आपको भी लग रही है। एक बुरी आदत ने या एक छोटे से अपराध ने आपको कलंकित कर दिया। मगर आप अभी भी सम्भल सकते हैं। सजा का समय पूर्ण होने के बाद आप घर पहुँचें तो सामान्य व्यक्ति बनकर पहुँचें और नये सिरे से अपने चरित्र को चमकाएँ। खान-पान सात्त्विक करें। होटलों और टॉकीजों से बचें। अपनी दैनिक चर्या से अपने समीपी लोगों को प्रभावित करें। मानवता का वास्तविक-स्वरूप धर्म धारण करें,व्यवहार और वाणी सुधारें, किसी को दुख न पहुँचावें तो आप धीरे-धीरे उत्तम पुरुष बन सकते हैं।

गुरुदेव की प्रेरणा प्रधान करुणामय शब्दावली से अनेक कैदी भाईयों के अश्रु आ गए। लगभग सभी भाईयों ने गुरुदेव की बात

मानते हुए मधु, मद्य और माँस का त्याग किया, जीवनभर शाकाहारी रहने का संकल्प किया।

कारागार का कार्यक्रम श्रोताओं और अधिकारियों द्वारा बहुत सराहा गया। सभी अधिकारियों ने बंदियों के साथ आचार्य श्री की आरती उतारी।

बाराबंकी में कार्यक्रमों की साधना बढ़ गई फलतः कार्तिक अष्टाह्निका में जिन-सहस्रनाम विधान गुरुदेव के सान्निध्य में संपन्न किया गया और मानस्तंभ पर विराजित प्रतिमाओं का अभिषेक किया गया।

मुनि सौरभ सागर जी धार्मिक जनों को पहले देख लेते हैं और अपनी चर्या तदनुकूल कर लेते। मुनि 108 श्री सौरभ सागर जी तक पहले दुख फिर सुख के समाचार पहुँच चुके थे, अतः वे ससंघ दर्शनार्थ पधारे। दोनों संघों में प्रगाढ़ वात्सल्य देखा गया। उसी दिन कार्यक्रम के दौरान बाराबंकी समाज ने आचार्य श्री भरतसागर जी को 'चारित्र रत्न' अलंकरण से अलंकृत किया।

मुनि स्वयंभू सागर जी का वियोग- समय के साथ-साथ संयोग और वियोग के क्षण अपनेआप सामने आ रहे थे। इस क्रम में निन्यानवे वर्षीय वृद्ध साधक पूज्य 108 श्री स्वयंभूसागर जी मुनि महाराज की वेदना बढ़ गई, फलतः रात्रि में ही वैद्यों को बुलाया गया, एक डॉक्टर साहब भी आए। सभी ने अवलोकन किया पर वे वेचारे चुप रह गए क्योंकि रात में औषधि नहीं दी जा सकती थी। मुनिवर का स्वास्थ्य अधिक खराब हो गया था। आचार्य श्री ने उनके समीप जाकर संबोधन दिया तब मुनि श्री ने हाथ जोड़कर यम सल्लेखना व्रत माँगा। आचार्य श्री ने उनके निर्दोष चेहरे को देखते हुए व्रत प्रदान कर दिया। मुनिवर हो गए क्षपक। आचार्य श्री निर्यापकाचार हो गए।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

दिन एक ही बीता कि तपो भावना से अपरिचित कतिपय जैन और अजैनों ने आपत्ति उठाई कि समाधिमरण देने के बदले, उनका उपचार किया जावे , वे लोग नहीं जानते थे कि मुनिवर ने अपना उपचार अपने हाथ में ले लिया है। शाम तक कुछ पत्रकार बंधु आचार्य श्री के पास आये और आचार्य श्री से मुनिवर के उपचार के बारे में पूछने लगे, तब उन नादान लोगों को यथार्थ दर्शन कराने के लिए आचार्य श्री ने कहा- आप लोग स्वत: मुनिवर के पास जाइए और पूँछिए। पत्रकार लोग मुनिवर के समीप पहुँचे, संकोच करते हुए पूँछ बैठे-आप दवा क्यों ग्रहण नहीं करते, अभी स्वस्थ हो सकते हो। समाधि-साधक मुनिवर स्वयंभूसागर जी ने उन ना समझ पत्रकारों को समझाते हुए कहा-हमारी औषधि यही है, बहुत दिन से विहार कर रहे थे, अब निज घर की ओर जा रहे हैं, जहाँ केवल वे लोग जाते हैं जो कभी मरते नहीं, अमर रहते हैं। उनके वाक्य सुनकर पत्रकारों को अपने ज्ञान पर तरस हो आया। सभी ने हाथ जोड़कर नमन किया और उल्टे पैर लौट गये।

समाधि का क्रम तीन दिन तक चला, सहस्रों भक्तगण दर्शनार्थ आए। अंत में मुनिवर ने गुरुदेव के चरणों में रहकर देह का त्याग कर दिया। हजारों लोग देखते रह गए। फिर चंदन चिता की तैयारी हुई।

गुरुदेव की दृष्टि- भगवान सबको देखते हैं यह तो सुना था; लेकिन भगवान को गुरुदेव देखते हैं यह बाराबंकी में ज्ञात हुआ, जब एक दिन मंदिर जी में दर्शन करते-करते आचार्य श्री कुछ सोचने लगे। वस्तिका में आए तो समाज-सेवियों को बतलाया ' भगवान बाहुबली की प्रतिमा का स्थान उचित नहीं है, इस पर ध्यान दीजिए।' अध्यक्ष और मंत्री सहित पूरी कमेटी गुरुदेव से मार्गदर्शन प्रदान करने हेतु प्रार्थना करने लगी। तब उन्होंने नूतन वेदी बनाने का स्थान बतला दिया। शीघ्रता से नई वेदी के निर्माण का निर्णय लिया गया और आचार्य श्री के

सान्निध्य में शिलान्यास कराया गया, उस पर बाहुबली भगवान की प्रतिमा भी प्रतिष्ठित की गई।

दीक्षा : क्षु. ओमसागर- अगहन कृष्णा एकादशी (30 नवम्बर 2002) को औरंगाबाद निवासी ब्र. अभय सेठी का सौभाग्य कमल खिला, जब उनकी प्रार्थना सुनकर आचार्य श्री ने उन्हें दीक्षा प्रदान की। नामकरण किया- क्षु. श्री 105 ओमसागर जी। तब महसूस हुआ कि आचार्य श्री भरत सागर जी अपने हर क्रियाकलाप में प्राचीन संतों के कथन का ध्यान रखते हैं। उनका दीक्षा प्रदान करने का कर्तव्य, ग्रंथ 'सागार धर्मामृत' के आलोक में है जिसमें चर्चा आती है-'जैसे श्रावक अपने वंश की परम्परा चलाने के लिए संस्कार-संपन्न बच्चे को गोद में लेकर उसको गुणी बनाने का प्रयास करते हैं, उसी तरह लोकोपकारी जैनधर्म की परम्परा निरंतर बनाये रखने के लिए, नवीन त्यागियों को उत्पन्न करने का और वर्तमान त्यागियों को श्रुतज्ञान, चारित्र आदि से उत्कृष्ट बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

लखनऊ प्रवास -

शीतकाल की ठंड चरम पर थी, आचार्य श्री ससंघ विहार करते हुए लखनऊ की सीमा पर पहुँचे। वहाँ आर्यिका श्री चंदमति एवं दक्षमति जी हजारों भक्तों के साथ अगवानी के लिए तत्पर थीं। भव्य अगवानी के बाद, शोभायात्रा के साथ संघ का नगर प्रवेश हुआ। संघ दिगम्बर जैन बड़े मंदिर में ठहरा। एक दिन महासभा अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार जी सेठी कुछ कार्यकत्ताओं के साथ आए और आचार्य श्री से महासभा- कार्यालय में चरण धरने का अनुरोध किया। आचार्य श्री ससंघ उन लोगों के साथ गए और कार्यालय की गतिविधियाँ तो देखीं ही नूतन मशीनों को भी देखा । कुछ दिन बाद, अगवानी करने वालीं आर्यिका-द्वय पधारी उन्होंने दर्शन एवं चर्चा की। उस दिन सामूहिक

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

प्रवचन संपन्न हुए। फिर एक दिन सेठी जी के अनुरोध पर आचार्य श्री उनके निवास परिसर में स्थित चैत्यालय में शांति विधान में सान्निध्य दिया।

क्षुल्लिका अयोध्यामति जी- गुरुदेव जीवन निर्माण पर भी सदा ध्यान रखते थे। अतः जब एक ब्रह्मचारिणी ने क्षुल्लिका दीक्षा हेतु निवेदन किया तो उन्होंने न केवल उसे, बल्कि उसके नगर लखनऊ को भी, धन्य कर दिया। नाम करण किया क्षुल्लिका 105 श्री अयोध्यामति जी। पुनः संघ ने विहार किया, कतिपय ग्रामों एवं नगरों को समय देते हुए आचार्य श्री कानपुर पहुँचे

पूर्व में जब आचार्य श्री कानपुर आए थे तो एक ना समझ सज्जन के उत्तरदायित्व -हीन उत्तर से वहाँ नहीं ठहरे थे, जिसका खेद बाद में सारे शहर को हुआ था। अनेक समाज सेवियों ने उक्त सज्जन से बहुत सवाल जवाब भी किए थे। अतः जब इसबार गुरुदेव वहाँ नहीं पहुँचे तो समग्र समाज सेवार्थ उपस्थित हुआ। संत तो किसी के अच्छे-बुरे व्यवहार को अधिक समय तक याद नहीं रखते, अतः आचार्य श्री पूर्ण उत्साह से धर्म प्रभावना पूर्वक पहुँचे, नित प्रति प्रवचन और धार्मिक कार्यक्रम चलने लगे।

आचार्य श्री ने संघस्थ साधुओं को आज्ञा दी कि प्रतिदिन एक संत प्रवचन करेंगे फलतः रोज श्रोताओं को भिन्न-भिन्न साधुओं के उपदेश सुनने मिलने लगे। आचार्य श्री तो उपदेश देते ही थे। उनके प्रवचन समाज ने टेप किए जिनमें सप्त तत्त्व की भूल, अनेकांत, स्याद्वाद, जैन-शासन आदि प्रवचन बहुत प्रसिद्ध हुए।

गुरु की पुण्यतिथि - पूज्य भरत सागर जी अपने गुरु की पुण्यतिथि मनाने बहुत उत्साहित दिख रहे थे, फलस्वरूप कार्यकर्ताओं ने पौष कृष्ण द्वादशी को गुरुदेव विमलसागर जी की पुण्य तिथि पर

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

अनेक कार्यक्रम किए। गरीब से लेकर अमीर तक और नादान से लेकर विद्वान तक, सभी भक्त सोत्साह उपस्थित रहे। अवसर विशेष पर पं. श्री नीरज जैन भी समारोह में शामिल हुए और प्रेरक वक्तव्य दिया।

सभी वक्ताओं के पश्चात् आचार्य श्री भरत सागर जी के प्रवचन हुए, उन्होंने अपने गुरु के सम्मान में अभूतपूर्व चर्चा की 'हमारे गुरुदेव रत्नत्रय से विशुद्ध और सद्पात्रों पर वात्सल्य रखने वाले थे। भक्तों के प्रति सजग रहते थे, उन्होंने मेरे अध्ययन की व्यवस्था पर सदा ध्यान रखा था, नगर या क्षेत्र बदल जाते थे किन्तु अध्ययन में अन्तराल नहीं आ पाता था । उनके कहने से योग्य पंडित गण मुझे समय देते थे। मैं उनका ऋणी हूँ। आचार्य श्री ने आगे बतलाया कि पूज्य विमलसागर जी सदा अपने नाम के अनुरूप रहे हैं। विमल मानें, मल रहित। मल मानें रागद्वेष। जो रागद्वेष रूपी मल से रहित थे प्राणियों पर साम्यभाव रखते थे, ऐसे थे हमारे गुरुदेव। मेरे जीवन में यदि कुछ अच्छाइयाँ हैं या कुछ विशेष है, तो वह सब उनका ही है।

जैसा होता है कि नदी और संत कभी गति नहीं रोकते, वैसा यहां भी हुआ। जब हर व्यक्ति को गुरुवर का सान्निध्य आत्म रस प्रदान कर रहा था तब उन्होंने झाँसी की ओर विहार कर दिया।

करगुँआ जी -

भीषण शीत, शीतल वायु के थपेड़े और रास्ते के कंटक अपना प्रभाव बतलाते रहे; किन्तु आचार्य श्री उन्हें निष्प्रभाव करते हुए, विहार कर रहे थे। झाँसी शहर को स्पर्श करते हुए समीपस्थ अतिशय क्षेत्र करगुँआ जी पहुँचे और तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की प्राचीन प्रतिमा के दर्शन किए। यहाँ माघ कृष्ण षष्ठी को आचार्य श्री ने ससंघ अपने गुरुणामगुरु समाधिस्थ आचार्य परम पूज्य 108 श्री महावीर कीर्ति जी महाराज का समाधि दिवस मनोयोग से मनाया। उनके सान्निध्य से

उपस्थित सहस्रों शिष्यों को लाभ हुआ।

कुछ समय बाद आचार्य श्री ने वहाँ से विहार कर दिया और सिद्धक्षेत्र सोनागिरि जी पहुँचे। पूर्व में अनेक चातुर्मास, ग्रीष्मकाल, और शीतकाल अपने गुरु के साथ यहाँ संपन्न किए थे, वहाँ का कंकड़-कंकड़ परिचित था। उनके आत्मा में छुपा शिष्योत्तम अपने गुरु को पुकार रहा था। और पूरा पावन क्षेत्र पुकार रहा था। सोनागिरि के मंदिर अपने भक्त को आया देख मुस्करा उठे। उनका सूनापन अपनेआप समाप्त हो गया, जो हरियाली अब तक अनमनी सी थी वह अब आनंद से झूम रही थी। आचार्य श्री ने ससंघ क्षेत्र की वंदना की। कुछ दिन रुके। फलतः कार्यकर्ताओं ने ठीक माघ सुदी दशमी (फ. 2003) को भारी हर्ष और उमंग से आचार्य पदारोहण दिवस मनाया। उसी तारतम्य में तीर्थंकर अजितनाथ भगवान का जन्म कल्याणक महोत्सव मनाया गया और रथ यात्रा निकाली गई। संपूर्ण क्षेत्रवासी पूज्य भरत सागर जी को पाकर भारी खुश थे क्योंकि वे उस गुरु के शिष्य थे जिसे वे आत्मा से चाहते रहे हैं।

6 फरवरी 2003 माघ सुदी पंचमी को आचार्य श्री के सान्निध्य में मानस्तंभ पर विराजित प्रतिमाओं का मस्तकाभिषेक धूमधाम से संपन्न किया गया। कार्यक्रम की गरिमा तब और बढ़ गई जब उसी दिन क्षु. ओम सागर जी को आचार्य श्री ने मुनी दीक्षा प्रदान की, वे हो गए पूज्य मुनि 108 श्री ओम सागर जी महाराज।

सोनागिर में आचार्य श्री के कारण सुबह-शाम सोना सा बरसता प्रतीत होता था। जन-जन प्रसन्न थे। तभी गुरुदेव ने विहार कर दिया। वे ससंघ शिवपुरी बजरंगगढ़, गुना आदि क्षेत्रों पर होते हुए इंदौर की ओर बढ़ गए। ग्रीष्मकाल शुरु हो चुका था।

इंदौर की प्रभावना -

ज्यों ही संघ इंदौर नगर पहुँचा, समाज ने अद्वितीय उत्साह से अगवानी की। पाद प्रक्षाल, आरती, वंदनवार, तोरणद्वार आदि-आदि सब कुछ वहाँ उपस्थित था, जो हर शहर में होते रहे हैं। शोभा यात्रा के साथ नगर प्रवेश किया। प्रथम दिन ही भारी प्रभावना से कार्यकर्ताओं में उत्साह की लहर दौड़ पड़ी थी। तभी उन्होंने आचार्य श्री का जन्म-जयंती समारोह मनाया, भरत-नवमीं, रामनवमीं और समय पर महावीर जयंती।

जब आचार्य श्री इंदौर पहुँचे तब गोम्मटगिरि के कार्यकर्ता शीघ्रता से उन्हें गोम्मटगिरि ले गए। वहाँ भी भारी धर्म प्रभावना हुई।

गणिनी-पद : आचार्य श्री को गोम्मटगिरि की गरिमा इतनी पसंद आई कि उन्होनें वैशाख कृष्ण चतुर्थी (20 अप्रैल 2003) को वरिष्ठ आर्यिका 105 स्याद्वादमति माता जी को गणिनी पद से संस्कारित किया। माता जी चकित हो गईं, उन्होंने कभी इस दिशा में विचार ही नहीं किया। यह था गुरु-प्रसाद।

गोम्मटगिरि की वंदना करते हुए आचार्य श्री ने विहार कर दिया। धीरे-धीरे बनेड़िया जी, मक्सी जी की वंदना करते हुए गनौड़ा राजस्थान का अतिशय तीर्थ क्षेत्र है। वहाँ के भक्तों ने आचार्य श्री के सान्निध्य में ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव प्रारंभ किया एवं गुरु-कृपा के चलते समय पर सफलता पूर्वक सम्पन्न किया।

संघ जब चलता है तो आवाज नहीं होती किन्तु आचार्य श्री के आगमन की शुभ खबर लोहारिया तक पहुँच चुकी थी अतः वहाँ के कार्यकर्तागण इंदौर पधारे और आचार्य श्री लोहारिया में चातुर्मास करने की प्रार्थना की। आचार्य श्री चुप रहे, न हँस सके न स्वीकृति दे सके, किन्तु आशीष दिया। कुछ दिन बाद गुरुदेव ने गनौड़ा से विहार

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

कर दिया, चरण थे लोहारिया की ओर।

लोहारिया वर्षायोग -2003 -

लोहारिया का जैन समाज 'लोहारिया के लाल' की प्रतीक्षा कर रहा था। आज-कल से नहीं 18 वर्ष से कर रहा था। उन्हें विश्वास हो गया था कि लोहारिया का लाल संघ नायक बनकर नगर का गौरव बढ़ायेगा। उनकी इच्छाएँ पूर्णता की ओर थी, समस्त कार्यकर्ताओं ने नगर को ऐसा सजाया कि वह स्वर्गपुरी प्रतीत होने लगा। हर द्वार मुस्कुरा रहा था, हर गली गुरु चरण के स्पर्श की प्रतीक्षा कर रही थी। तभी महापरिव्राजक के आगमन की भनक पड़ी। सारा शहर आरती और कलश लेकर नगर की सीमा पर जा खड़ा हुआ। वाद्ययंत्र लोहारिया के लाल को पुकार रहे थे। आचार्य श्री ससंघ पहुँचे, भव्य आगवानी हुई। विशाल शोभा यात्रा के साथ संघ मंदिर परिसर में पधारा। पूरा शहर शुरु से अंत तक सड़कों के किनारे खड़े होकर, जिन्हें सड़क पर जगह नहीं मिली वे छतों पर चढ़ गए और अपने गुरु को निहारने लगे।

दूसरे दिन से ही धार्मिक कार्यक्रम शुरु हो गए। कार्यकर्ताओं ने गुरुदेव के चरणों में बैठकर अनेक योजनाएँ बनाईं। तदनुसार प्रथम शुभकार्य था सात बहनों को दीक्षा दिया जाना, उनमें दो बेटियाँ लोहारिया की थीं, ब्रह्मचारिणी कुसुम दीदी एवं ब्र. उर्मिला दीदी। सातों की प्रार्थना सुनकर गुरुदेव ने आषाढ़ शुक्ल अष्टमी की तिथि तय कर दी। समाज सेवियों ने तैयारियाँ शुरु कर दीं, बड़ा मंच, बड़ा पांडाल आदि जैसा कि होता है, उस दिन लोहारिया नगर उन सातों बेटियों का पिता बन गया। सातों की बिन्दौरी निकाली गई, सातों के घर-घर निमंत्रण, सातों की घर-घर ओली भरी गई, फिर आषाढ़ शुक्ल षष्ठी को गुरुदेव के मंगलमय सान्निध्य में गणधर वलय विधान, अष्टमी को

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

भगवान नेमिनाथ का अभिषेक और नेमि-निर्वाण-लाडू-अर्पण हुआ। उसी दिन दोपहर में सप्त- दीक्षार्थियों को आचार्य श्री ने विधि पूर्वक आर्यिका- दीक्षा प्रदान की। वातावरण हर्षमय हो गया। सारे नगर में गुरुदेव का जय-जयकार हुआ, पांडाल में तो हो ही रहा था। फिर गुरुदेव ने दर्शकों की उत्सुकता शांत करते हुए सातों माताओं के नामों की घोषणा की। प्रथम क्रम में थीं आचार्य विमल सागर जी की शिष्या क्षुल्लिका सिद्धांतमति माता जी।

द्वितीय क्रम पर भी पूज्य विमल सागर जी की शिष्या ही थीं- क्षुल्लिका 105 उद्धारमति जी। नाम करण किया पूज्य105 उद्धारमति माता जी।

तृतीय क्रम पर संघस्थ ब्र. दीदी कुसुम नायक लोहारिया बनीं पूज्य आर्यिका श्री भरतेश्वर मति माताजी।

चतुर्थ , संघस्थ ब्र. दीदी मालती जैन सोलापुर बनीं, पूज्य आर्यिका 105 श्री गोम्मटेश्वरमति माता जी।

पंचम, संघस्थ ब्र दीदी उर्मिला नायक लोहारिया, पूज्य आर्यिका 105 श्री नंदीश्वर मति माता जी।

षष्टम, ब्र. दीदी रुपारी बाई बांसवाड़ा, पूज्य आर्यिका 105 श्री अन्देश्वरमति माता जी।

सप्तम, ब्र. दीदी कंकूबाई लोहारिया, पूज्य आर्यिका 105 श्री पंचमेरुमति माता जी ।

उस दिन धर्म-सभा में सहस्त्रों भक्त उपस्थित हुए थे और अपनी आँखों से वैराग्य का दृश्य देखा-सुना था। कार्यक्रम के पूर्व कुछ विद्वानों, समाज सेवियों और नेताओं ने भाषण दिए थे। समाज की व्यवस्था के अंतर्गत सात जैन कवि आमंत्रित किए गए थे जिन्होंने वैराग्य-वर्धन करने वाला काव्य-पाठ किया। बड़ी बात यह थी कि सारा कार्यक्रम

लोहारिया स्थित नव निर्मित तीर्थ क्षेत्र गोम्मटगिरि में संपन्न हुआ था। आचार्य श्री ने लोगों को इंदौर स्थित गोम्मटगिरि का स्मरण करा दिया।

आचार्य श्री के संघ में पहले मात्र 15 पिच्छियाँ थीं, आषाढ़ सुदी अष्टमी से 22 हो गईं। इतना ही नहीं, लोहारिया के आस-पास जो-जो साधुगण अवस्थित थे वे सब लोहारिया आ गए थे और आचार्य श्री की मंगल-छाया में प्रसन्न थे। उस दिन क्षेत्र पर संतों का भारी जमघट था।

आचार्य श्री सहित सर्वसाधुगण के सान्निध्य में सहस्रनाम विधान का आयोजन किया गया और अष्टाह्निका पर्व की अवधि धर्मध्यान से सज्जित की गई। इसी क्रम में आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को श्रावकों के विशाल समूह के समक्ष जिनाभिषेक किया गया। कलश शुद्धि एवं गुरु पूजा। रात्रि 8 बजे से वर्षायोग स्थापना का कार्यक्रम शुरू किया गया। आचार्य श्री के आशीष की छाया में प्रथम कलश संघपति श्री शिखर चंद जी पहाड़िया एवं द्वितीय कलश का गौरव प्राप्त किया कोडरमा के श्रेष्ठी परिवार श्री महावीर जी झांझरी ने तृतीय कलश बाँसवाड़ा के मुनि-भक्त परिवार ने पाया। क्रम आगे बढ़ा और आचार्य श्री ने वर्षायोग स्थापना की क्रियाएँ विधि-पूर्वक पूर्ण कीं। तदुपरांत हुए उनके प्रवचन। उन्होंने लोहारिया-समाज सहित, विभिन्न नगरों से आए हुए भक्त-समुदाय से कहा- हर गृहस्थ के घर में अभ्यागत के तीन पदार्थों का होना आवश्यक है, प्रथम मीठी वाणी, द्वितीय-आसन, तृतीय-शीतल जल। यदि एक सद् गृहस्थ समय पर अपने अतिथि को उक्त तीन वस्तुएँ विनय पूर्वक उपलब्ध कराता है तो वह, उसका परिवार और घर संस्कारों का ध्वजा रोहण करनें में सफल रहता है। श्रावक का अन्य उपक्रम है अपने संयम की रक्षा। संयम पालन से श्रावक का ही नहीं सम्पूर्ण समाज का गौरव वर्धन होता है।

फिर जो संयमी हैं, वह अन्य-अन्य संयमियों की साधना कराने में शुभ कारण बनता है। आज मंगलकलशों के रूप में संस्कारों की स्थापना की गई है। अतः हर भव्य आत्मा कम से कम वर्षायोग की अवधि तक कुछ न कुछ संयम अवश्य धारण करें और जैनधर्म की प्रभावना में सहयोगी बनें।

उसी दिन आचार्य श्री सहित संघस्थ सात साधुओं ने केशलोंच किया। केशलोंच के दृश्य से भक्तों के दिल विचलित हो गए और आत्मा से करुणा बहने लगी। वहाँ उपस्थित अन्य समाज के लोगों ने भी दृश्य का अवलोकन किया। जाते-जाते उनमें से कुछ लोगों ने कार्यकर्ताओं से प्रश्न किए कि केशलोंच क्यों किया जाता है ? इससे अनावश्यक पीड़ा होती है। यह कार्य तो किसी नापित से कराया जावे। तब कार्यकर्ताओं ने उनसे कहा कृपया आप दोपहर में आचार्य श्री के प्रवचन सुनने आईए आपको उचित समाधान मिल जावेगा। वे चले गए। कार्यकर्ताओं ने आचार्य श्री से चर्चा की।

दोपहर में जब गुरुदेव ने प्रवचन- सुधा छलकाई तो उन्होंने केशलोंच क्रिया पर प्रकाश डाला -

अंतर विषय वासना वरतें बाहर लोक लाज भय भारी।
यातैं परम दिगम्बर मुद्रा, धर नहिं सके दीन संसारी।।
ऐसे दुर्द्धर नग्न परीषह, जीते साधु शीलव्रतधारी।
निर्विकार बालकवत निर्भय, तिनके चरणों धोक हमारी।।
मूड़ मूड़ाय रखाय जटा सिरधूनि रमाय बने ब्रह्मचारी।
धर्म अधर्म को घूँट पिये, ममता मद मोह न माया बिसारी।।
बैठ रहे पट दे मठ भीतर, साथ मौन लगाये के तारी।
ऐसे भये तो कहा तुलसी, जिन आसन मारके आस न मारी।।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

आज तक अनन्त सिद्ध हो चुके हैं, सभी ने केशलोंचन किया है। केशलोंच किए बिना साधक मोक्षपथ पर नहीं पहुँच सकता है। केशलोंच भेद विज्ञान की परिभाषा सार्थक करता है। यह सहिष्णुता का आधार है, अहिंसा का संबल है, अयाचकवृत्ति का प्रेरक है और मोह रूपी ध्वजा को नीचे गिराने वाला अमोघ अस्त्र है, इसलिए जैन-धर्म में साधु के लिए प्रति दो माह में केशलोंच अनिवार्य है।

आचार्य श्री के धारा प्रवाह प्रवचन सुनकर उक्त जिज्ञासुओं को तो समाधान मिला ही, समस्त जैनाजैन श्रोताओं को भी प्रकाश मिला। जैसा कि आचार्य श्री हर चतुर्मास में भिन्न-भिन्न वर्गों के लिए जैन-ग्रंथों का परायण करते रहे हैं वैसा ही क्रम लोहारिया में देखने को मिला। उसके अलावा रत्नकरण्ड श्रावकाचार का शिक्षण प्रमुख रहा। हर रविवार को भिन्न-भिन्न विषयों पर सर्वसाधारण को उपदेश देते थे, उनमें नवधा भक्ति एवं दाता के गुण, मेरी भावना आदि विषय सर्वोपरि रहे। बड़ी बात यह है कि आचार्य श्री संघ के साधुओं से भी क्रमवार प्रवचन कराते थे। कुँवार माह में समाधिस्थ संत आचार्य विमल सागर जी की जन्म जयंती मनाई गई। इस अवसर पर श्री सूरजमल जयकुमार जैन गिरीडीह ने शांतिविधान संपन्न कराते हुए आचार्य श्री का सान्निध्य पाने का गौरव पाया।

आचार्य श्री ग्रंथराज अष्टपाहुड़ एवं स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षा का सामूहिक स्वाध्याय नित-प्रति संघस्थ साधुओं के साथ, क्रमशः सुबह और मध्याह्न करते थे, उसके बाद कतिपय साधुओं के लिए महा ग्रंथ (तीसरी पुस्तक) का स्वाध्याय कराते थे। ध्यान रखते थे कि समाज के छोटे-बड़े सभी जन संस्कारों का पालन करें। दीपावली के कुछ दिन पूर्व से ही बच्चों और युवकों को पटाखे न चलाने का ज्ञान प्रदान किया एवं पटाखों का त्याग कराया। इस कदम से पूरे नगर में

अहिंसा-व्रत की समुचित साधना की गई। प्रभावना का चरम तत्व देखने मिला जब जैनों के साथ-साथ वहाँ के अजैनों ने भी पटाखों का त्याग किया। उनके मध्य अनेक भील और आदिवासी भी थे। गुरुदेव की कृपा से अहिंसा का साम्राज्य स्थापित हो गया। नगर में शांति बनी रही।

दीपोत्सव के पश्चात लोहारिया - समाज ने आचार्य श्री का दीक्षा-दिवस **'संयम साधना दिवस'** के रूप में कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को धूमधाम से मनाया। नवम्बर का माह नगर में स्वयंवर जैसा उत्साह ले आया। दीक्षा दिवस के तारतम्य में आचार्य श्री ने समाज को उपदेश भी दिया जिसमें एक पुराना प्रसंग भावना पूर्वक दोहराया-मेरी दीक्षा के विषय में जो सलाह मेरे गुरुदेव कुछ वर्षों से मुझे दे रहे थे, वही परामर्श मुझे संघस्थ वरिष्ठ आर्यिका 105 सिद्धमति माता जी ने भी दी थी। सन्1972 की घटना है, उस समय संघ गुरुदेव की कृपा-छाया में शिखर जी में था। मैं क्षुल्लक अवस्था में था। अचानक प्रबल मलेरिया हो गया, शरीर से लगातार पसीना बहता। भक्तों के रूमाल गीले हो जाते। आहार करता तो मुश्किल से आधी मात्रा पेट में जा पाती और वमन हो जाता। मुझे मरण के मार्ग में जानकर माता जी ने समझाया, क्षुल्लक जी, आप का जीवन खतरे में दिख रहा है, मुनि दीक्षा ले लीजिए तो सभी रोग मिट जायेंगे। उनका आशय था कि मलेरिया तो मलेरिया जन्म मरण का रोग भी मिट जाएगा। उनके वाक्यों से मेरा चिंतन चल पड़ा-मरण तो कभी भी हो सकता है मगर मुनि अवस्था में समाधि मरण श्रेष्ठ कहा जाता है। मैंने शाम को ही माता जी से कह दिया कि उनकी आज्ञा शिरोधार्य है। माता जी ने गुरुदेव से अनुरोध किया। गुरुदेव शीघ्रता से मेरे कक्ष में आए, मेरी नाड़ी का स्पर्श किया और मुस्करा कर कहा- दीक्षा हो जाएगी और स्वस्थ भी हो जाओगे। उनके स्पर्श के प्रभाव से मैं कुछ ही दिन बाद ठीक हो गया, रोग विदा ले

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

गया। तब 6 नवम्बर को गुरुदेव ने मुझे दीक्षा प्रदान कर दी। मेरे साथ-साथ मेरे गुरु भाई क्षुल्लक सुमति सागर जी को भी मुनि-दीक्षा का पुरस्कार मिला। वे मुनि श्री 108 बाहुवली सागर जी बने। आचार्यवर्य गुरुदेव ने आगम के भरत बाहुबली की जोड़ी का स्मरण दिलाते हुए समाज से कहा था कि नूतन जोड़ी भविष्य में बहुत लोकप्रिय होगी ।

इस तरह श्रोताओं को नित-नूतन वार्ताओं से आचार्य श्री मंत्र मुग्ध कर देते थे। उसी दिन उन्होंने अपना और बाहुबली महाराज के मध्य हुए विनोद पूर्ण समझौते की चर्चा की पूज्य भरत सागर जी बोले कि दीक्षा के एक दिन पूर्व बाहुबली जी (सुमतिसागर) ने मुझसे कहा था- भैया मैं प्रवचन तो दे ना सकूँगा अतः दीक्षा लेकर क्या करूँगा ? तब भरत सागर जी ने उनसे मुस्कराते हुए कहा- आप समझौता कर लीजिए कि आप मेरा केशलोंच कर दिया करना, मैं प्रवचन कर दिया करूँगा। स्वाभाविक है कि इस वार्ता के बाद दोनों साधक देर तक हँसे होंगे। जिन्होंने हमें साथ-साथ देखा है वे भक्तगण आज भी कहते हैं कि वे दोनों भाई-भाई की तरह, एक दूसरे के पूरक बनकर रहते हैं।

पूज्य आर्यिका स्याद्वादमति माता जी आज भी अपना अनुभव बतलाती हैं कि दोनों संतों को समीप से देखा समझा है, बाहुबली महान तपस्वी थे और भरत सागर महान ज्ञानी। दोनों की अनोखी जोड़ी थी। गुरुदेव ने जैसा उन दोंनों को नाम दिया, वैसा ही उन्होंने काम करके दिखाया। उनके श्री चरणों में बार-बार नमन।

वर्षायोग की निष्ठापना समय पर हो ही चुकी थी, आचार्य श्री विहार के लिए चल पड़े। हजारों लोग गिड़गिड़ाए, माताएँ अश्रु बहाती रहीं, बच्चे आगे पीछे होते रहे, किन्तु प्राण-प्यारे गुरुदेव नहीं रुके। इस बीच उन्होंने एक सुंदर व्यवस्था बनाई मुनि श्री अनेकांत सागर जी की

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

समाधि चल रही थी, वे क्षपक थे, अतः उनकी धार्मिक क्रियाओं की पूर्ति के लिए आर्यिका स्याद्वादमति माता जी को कुछ पिच्छियों के साथ लोहारिया रुकने की आज्ञा दी। माता जी ने बहुत अच्छी देखरेख की, दोनों समय संबोधनार्थ आतीं, स्वाध्याय करातीं और हाल-चाल पूँछती। समाधि चलती रही। इस बीच आचार्य श्री ससंघ अन्देश्वर, कलिंजर, बागीदौरा, अर्थुना, आनंदपुरी, नागफणी पार्श्वनाथ आदि क्षेत्रों की वंदना करते रहे। ज्यों ही माता जी का संकेत मिला, वे शीघ्रता से लोहारिया आ गए और अपने क्षपक की सुध ली।

आचार्य श्री ने नगर प्रवेश के आस-पास अवस्थित चारों दिशाओं से अनेक साधु संतों को, क्षपक के दर्शनार्थ आमंत्रित किया। चारों दिशाओं से अनेक करुणामयी संतगण आ गए। श्रावकों की तो ऐसी भीड़ लगती थी जैसे कोई मेला भरा हो। सब लोग नित्य छपक के दर्शन करते थे। इस समाधि की प्रमुख विशेषता यह थी कि क्षपकराज ने बारह वर्ष पूर्व मरण-समाधि-व्रत लिया था, तदनुसार फाल्गुन शुक्ल अष्टमी को बारह वर्ष की अवधि पूर्ण होने वाली थी मगर अवधि से एक दिन पूर्व अपने जीवन और मरण को आदर्श बनाते हुए, मुनि अनेकांत सागर जी ने फाल्गुन शुक्ल सप्तमी (सन् 2004) को देह त्याग कर दिया। ऐसी अद्वितीय समाधि की समस्त संतों ने भूरि-भूरि सराहना की। मुनि अनेकांत सागर जी ने आचार्य श्री के समक्ष चारों प्रकार के आहार का आजीवन त्याग किया था और यम-सल्लेखना व्रत का निर्वाह करते हुए, जीवन-यात्रा पूर्ण की थी।

श्रद्धांजलि सभा के समय आचार्य भरत सागर जी ने क्षपकराज के संयम की सराहना करते हुए कहा था। कि उन्होंने जीवन भर पंच महाव्रतों का पालन किया, साथ ही छठवाँ अणुव्रत रात्रि-भुक्ति त्याग भी उन्होंने महाव्रत के रूप में पूर्ण किया, अतः वे हम सब से बड़े होकर

निकले हैं। वे धन्य हैं ।

इस महान प्रसंग को देखने क्षेत्र पर 52 पिच्छीधारी संतगण उपस्थित हुए थे, जिनका उल्लेख यहाँ आवश्यक है। समाधि-यज्ञ के अनुभवी निर्यापक मुनि108 श्री अमित सागर जी ससंघ। मुनि 108श्री सुकुमाल नंदी जी ससंघ। मुनि108श्री योगीन्द सागर ससंघ। आचार्य108 श्री रयण सागर ससंघ। मुनि108 श्री आज्ञा सागर जी। आचार्य 108 श्री विपुल सागर जी। आर्यिका 105 श्री सुप्रकाश मति माता जी ससंघ। उक्त संघों के कारण लोहारिया का अद्भुत दृश्य उपस्थित हो गया।

विहारों का क्रम - लोहारिया में अभूतपूर्व धर्म प्रभावना के बाद एक-एक करके संतों ने ससंघ विहार शुरू कर दिया। मगर समाज ने आचार्य श्री के पैर पकड़ लिए और प्रार्थना की हमें 'भरत नवमी' मना लेने दो फिर विहार कीजिए। वात्सल्य के देवता ने उन्हें स्वीकृति दे दी। फलतः सारे नगर में राम नवमी के दिन धूमधाम से भरत नवमी मनाई जैसा कि हर बार होता है आचार्य श्री राम नवमी मनाई हाँ आत्म नवमी ।

महामुनि विशद सागर जी का संयोग बना एक संदेश -

सन् 2004 का मई माह पूर्व ही, पू. आचार्य श्री भरत सागर जी ने जयपुर प्रवास कर रहे समस्त दिगम्बर संतों को एक संदेश भेजा कि इस वर्ष शीतकाल में, मैं जयपुर प्रवास पर रहूँगा, अतः आप सबको, प. पू समाधिस्थ गुरुदेव आचार्य 108 विमल सागर जी के 'समाधि दिवस' पौष कृष्णा द्वादशी पर जयपुर नगर भट्टारक नसिया के लिए आमंत्रित कर रहा हूँ। आप पहुँचकर स्मृति-दिवस पर विनयांजलि समारोह में धर्म-धारा प्रवाहित करें।

संदेश अनेक संतों को मिला। उसी क्रम में वह पूज्य मुनिवर विशद

सागर जी के पास पहुँचाया गया। वे तब जयपुर के शिवाड़ वाकलीवाल मंदिर में थे, समाज का अनुरोध था कि वहाँ ही वर्षायोग का निर्णय लें। हवा की दिशा की तरह संत की दिशा कब बदल जाये, भक्त नहीं जानते। मुनिवर वहाँ से विहार कर दिगम्बर जैन मंदिर जौहरी बाजार में विराम लिया। समाज के माह भर-पूर्व से अनुरोध चल रहे थे, अतः बाद में जौहरी बाजार मंदिर में वर्षायोग की स्थापना की। भक्त गद्-गद् थे।

एक दिन पुनः मुनिवर का ध्यान पू.भरत सागर जी के संदेश पर गया। वे विचार करने लगे कि चातुर्मास के बाद दिसम्बर माह में अवश्य नसिया जी के कार्यक्रम में पहुँचूँगा। उन्हें याद हो आया पू. भरत सागर जी उनके लिए अपरिचित नहीं हैं। जब वे ब्रह्मचारी थे, तब तीनबार तीर्थराज सम्मेदशिखर जी पर दर्शन करने गये थे। फिर हम तो कुल परम्परा में भी एक हैं, वे या मैं एक ही गुरु के गुरुकुल की बगिया के पुष्प हैं।

मूल कथा पर आयें। पूज्य भरत सागर जी लुहारिया में थे दूसरे दिन ही संघपति श्री शिखर चंद जी जैन ने आचार्य श्री को श्रीफल भेंट करते हुए कुचामन नगर धन्य करने की प्रार्थना की। आचार्य श्री की मुस्कान से जाहिर हो गया कि उन्हें स्वीकृति मिल गई। फिर विहार हुआ। आचार्य श्री पहले ससंघ पारसोला पहुँचे, वहाँ वरिष्ठ गणनी आर्यिका 105 सुपार्श्वमति माता जी ससंघ विराजमान थीं और आर्यिका सुप्रभामति जी की समाधि चल रही थी। संयोग से वहाँ आचार्य श्री वर्धमान सागर जी भी संघ सहित पहुँचे। आचार्य 108 रयण सागर जी ससंघ पहुँचे। संत समागम अभूतपूर्व हो गया। नगर में चारों ओर मुनि और आर्यिकाएँ दृष्टिगोचर होते थे। आचार्य भरत सागर जी ने क्षपक के दर्शन किए, समस्त साधुओं से यथायोग्य समाचारी की। फिर विहार

कर गए धरियाबाद।

चंद दिन का समय धरियाबाद वालों को मिला । बाद में आचार्य श्री तीर्थ क्षेत्र श्री अणिंदा पार्श्वनाथ गए। वहाँ भगवान पार्श्वनाथ की छत्रछाया मे योग्य श्रावक श्री जैन के अनुरोध पर उन्हें क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की, नामकरण किया क्षु 105 अणिंदा सागर जी । गुरुदेव जल्द-जल्द विहार कर रहे थे अतः भीलवाड़ा और नसीराबाद को कृतार्थ करते हुए, अपनी दीक्षा स्थली महानगर अजमेर पहुँचे, यहाँ ही सन् 1968 में विमल सागर जी ने क्षु. दीक्षा देकर 'छोटे' को 'बड़े' बनाया था। अजमेर समाज का भाग्य खिल उठा। कार्यकर्ताओं ने ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी को तीर्थकर शांतिनाथ के जन्म, तप एवं निर्वाण कल्याणक तो मनाए ही, गुरुदेव का क्षु दीक्षा दिवस भी मनाया और वर्षों पुरानी स्मृतियों को ताजा कर दिया। आचार्य श्री अक्सर जिस नगर में जाते थे, वहाँ स्थित सभी मंदिरों के दर्शन अवश्य करते थे, सो अजमेर में वही क्रम बना फिर वे किशनगढ़ की ओर चले गये।

किशनगढ़ प्रवास - 2004 -

आषाढ़ की श्रुत पंचमी - 2004 - मदनगंज किशनगढ़ नगर वासियों का सौभाग्य था कि आचार्य श्री ने वहाँ कुछ अधिक समय प्रदान किया। कार्यकर्त्ताओं ने आचार्य श्री के सान्निध्य में श्रुत पंचमी-महापर्व धूमधाम से आयोजित किया। पर्व को सारा नगर आज तक याद करता हैं क्योंकि उसी दिन उन्होंने एक संन्यासी को आर्यिका दीक्षा प्रदान कर समाज का गौरव और धर्म का प्रभाव बढ़ाया था। आर्यिका श्री को नाम दिया था105 श्री श्रुतपंचमीमति माता जी। यद्यपि संघ अधिक दिन अवश्य रुका किन्तु चातुर्मास का योग नगर को न मिल सका। वे रूपनगढ़ की ओर बढ़ गए। ग्रीष्म की तेज तपन धरती तो धरती, साधकों के देह-तत्त्व को भी तपा रही थी; परन्तु आचार्य

श्री तो मंदिरों में स्थित प्राचीन मूर्तियों के दर्शन कर शीतलता का अनुभव करते थे।

कुचामन चातुर्मास - 2004 -

पुनः विहारकर पहुँच गए कुचामन सिटी। वहाँ का समग्र समाज भी शिखरचंद जी पहाड़िया के साथ आगवानी कर धन्य हो गया, 8 जून का दिवस महान बन गया। सहस्रों श्रावक और श्राविकाओं युक्त विशाल शोभा यात्रा और वाद्ययंत्रों की ध्वनि विशेष प्रभाव उत्पन्न कर रही थी। उन सबके बीच श्री कुमावत जी, श्री सुमेर चंद जी पाण्ड्या, श्री आर. के. जैन मुंबई एवं श्री पन्नालाल सेठी भक्ति जल से स्नान करते प्रतीत हो रहे थे। विद्वत वर्ग में डॉ. चेतन प्रकाश पाटनी आदि प्रमुख थे। उस दिन प्रवचन सभा की प्रभावना अतिविशेष थी, क्योंकि स्थानीय नेता कुमावत जी सहित अनेक लोगों ने रात्रि-भोजन का आजीवन-परित्याग कर दिया था। दूसरे दिन से ही धार्मिक कार्यक्रम शुरु हो गए। समाज ने गुरु-सान्निध्य का लाभ लेते हुए अष्टाह्निका पर्व में जिनसहस्रनाम विधान भक्ति पूर्वक संपन्न किया। आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को आचार्य श्री ने ससंघ वर्षायोग की स्थापना की। कलश स्थापना में कर कमल लगे- श्री शिखरचंद जी पहाड़िया श्री मूलचंद जी रोहण्डी एवं श्री माणिकचंद जी गंगवाल के। तीन कलश तीनों के नाम। आचार्य भरत सागर जी का धार्मिक आयोजन मनाने का मानस कुछ विशेष ही रहता था फलतः उन्होंने आचार्य श्री शांतिसागर जी की 131वीं जयंती मात्र एक दिन नहीं मनाई, 18 जुलाई से 31 जुलाई 2004 तक मनाई जिसमें प्रशिक्षण-शिविर की आयोजना महती प्रभावनाकारी रही। 250 से अधिक शिविरार्थियों ने भाग लिया था। उनमें बनारस, मुरैना, सांगानेर, ललितपुर, टीकमगढ़, जबलपुर, मेरठ, नावा और कुचामन के बालक और बालिकाएँ समाहित थे। आचार्य श्री के कारण

वह शिविर ही नहीं ज्ञान-सिद्ध हुआ था। शुभारंभ के अवसर पर श्री निर्मल कुमार सेठी, श्री चैनरूप वाकलीवाल, श्री अशोक पाटनी, श्री मदन लाल वैनाड़ा एवं श्री धर्मचंद पहाड़िया आदि समाज सेवी सविनय उपस्थित थे। आचार्य श्री की कृपा से उक्त समाज सेवियों को ध्वजारोहण आदि का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। शिविर में द्रव्य संग्रह का अध्ययन कराया गया, तो प्रवचन-कला, वास्तुकला, प्रतिष्ठा विधि आदि की भी सही-सही जानकारी दी गई।

एक मायने में पूरा वर्षायोग ही शिविर का रूप धारण किए रहा क्योंकि नागोरी मंदिर में सागार-धर्मामृत का अध्ययन संघस्थ त्यागियों को कराया जाता था तो **'विमल-भरत स्याद्वाद भवन'** में भक्तामर स्तोत्र पर आचार्य श्री अन्य विषयों पर भी प्रकाश डालते थे। मध्याह्न काल एवं सायंकाल में भी कोई न कोई शिक्षण और स्वाध्याय का क्रम चलता रहता था। आचार्य श्री लगभग 5 माह कुचामन में रहे फलतः अनेक विधान भी समय-समय पर सम्पन्न किए गए। पूरा शहर एक विशाल-मंदिर प्रतीत होने लगा था। गुरुदेव निष्ठापना के बाद भी कुछ दिन और रुके, पश्चात जयपुर की ओर विहार किया।

जयपुर-प्रवास - 2004 -

महानगर के भक्तगण अपने गुरु की अगवानी हेतु मार्ग के दोनों ओर कतार में खड़े थे हाथ जोड़े हुए वे गुरुदेव की प्रतीक्षा कर रहे थे, तभी गुरुदेव ससंघ पहुँचे। भारी जयघोषों से आकाश भर गया। गली-गली आरती। कदम-कदम पाद प्रक्षालन। जयपुर प्रवेश में अगवानी के लिए मुनि विशद सागर जी ससंघ थे। विशाल शोभायात्रा। हाथी, घोड़े और वाद्य यंत्र। के साथ सब मिलाकर बन गया था दृश्य स्वर्ग जैसा। हर भक्त प्रसन्न। हर-घर विनत। हुआ भव्य-नगर प्रवेश। संघ शोभा यात्रा सहित नसिया जी पहुँचा ।

समाधि दिवस बना विशदसागर के उत्कर्ष का निमित्त-

ज्यों-ज्यों समाधि दिवस करीब आ रहा था, त्यों-त्यों जयपुर में विराजमान अनेक संघ, अपनी-अपनी कॉलोनी, बस्ती, नगरी छोड़ कर भट्टारक की नसिया जी की ओर विहार कर रहे थे। मुनिवर विशदसागर जी भी ससंघ नियत समय पर नसिया जी पहुँचे और गुरुदेव पू. भरत सागर जी के दर्शन किए, वंदना की। दोनों संघों में समाचारी हुई।

पुनः, जब विशद सागर जी, आहारोपरांत, वंदनार्थ पूज्य श्री के समक्ष पहुँचे तो भरत सागर ने हल्की मुस्कान से उन्हें समीप बैठाया। फिर एकाएक पूछ बैठे-'विशद सागर जी आपके साथ अनेक युवा-साधक देख रहा हूँ, कोई ब्र. भाई है तो कोई दीदी। आपने अभी तक इनका कल्याण नहीं किया? इन्हें दीक्षा क्यों नहीं देते? प्रश्न सुनते ही मनीषी-युवा-मुनि विशद सागर जी हँस पड़े, फिर विनय पूर्वक बोले-आचार्य श्री मेरे लिए कहाँ अधिकार है, ये आपके अधिकार का काम है। सभी आपके सेवक हैं। मेरी अभिलाषा है कि यह कार्य आपके कर कमलों से संपन्न होवे, सभी साधक दीक्षित होवें और सभी कल्याण का करें। मोक्ष- पथ के राही बनें।

आचार्य श्री ने विषय को नव सौंदर्य प्रदान करते हुए कहा-'चलो, यह अधिकार आपको ही प्रदान कर देंगे।' वाक्य सुनकर दोनों संघों के सदस्यगण प्रसन्न हो गये। मुनि विनत भाव से मौन हो गये।

ऐसा लग रहा था कि आचार्य श्री दीक्षादि का कार्य जयपुर में ही संपन्न करना चाहते हैं, किन्तु तिथि की अनुकूलता नहीं होने से, वहाँ न हो सका। फलतः उन्होंने बतलाया कि माघ शुक्ल पंचमी, जिसे बसंत-पंचमी कहा जाता है, 13 फरवरी 2005 को है। स्थान रहेगा मालपुरा। आप ससंघ वहाँ पहुँचेंगे विश्वास करता हूँ। मुनिवर ने स्वीकृति

जाहिर करते हुए नमोस्तु किया।

संसार में जिस तरह हर स्थान पर 'कर्म' पीछा नहीं छोड़ते श्रावकों-संतों का, उसी तरह हर शुभ कार्य के पूर्व कुछ विघ्न संतोषी पीछे पड़ जाते हैं और विघ्न उपस्थित करने का तन-मन से प्रयास करतें हैं। जयपुर में भी यही हुआ चार-छह तथाकथित समाज सेवी आलोचना प्रतिआलोचना का पंख घरों से लेकर मंदिर तक फैलाने लगे। कुछ तो मुनिवर से बहस करने पहुँच गये। उनके गरिमामय पद की मर्यादा समाप्त करते हुए अनुचित प्रश्न करने लगे। कुछ नामधारी भक्त शिष्टता और सभ्यता की सीमा पार कर गये। अनावश्यक तनाव बनाया जाने लगा। मगर परम प्रतापी धीर, वीर, गंभीर मुनिवर मौन रहे। उन्होंने दुष्ट जन से मध्यस्थता का भाव बना लिया। उलझे नहीं। विसमबाद में नहीं पड़े। उनका पूर्व समय देखा जावे तो वे सदा संघर्षों को ही झेलते रहे। उपसर्ग परिषह उनके साथी बने थे, मगर वे शांत भाव से सहते रहे। जयपुर में भी उनकी सहनशीलता, आगम में वर्णित सहनशक्ति की परिचायक बनी। कमठ उपद्रव करते रहे पार्श्वनाथ के भक्त सहते रहे।

विरोधी लोगों का वस जब मुनिवर पर नहीं चला तो वे आचार्य श्री भरत सागर जी के पास पहुँचे और उन्हें भड़काने का सुनियोजित प्रयास करने लगे। काफी समय तक विरोध बतलाया गया ताकि आचार्य श्री मुनिवर को आचार्य पद प्रदान न कर पावें। किन्तु आचार्य श्री तो परिपक्व-मति के श्रेष्ठ आचार्य थे, अतः उन्होंने किसी की नहीं मानी। उनका निर्णय चट्टान की तरह अटल रहा आया। कहें कि गुरु शिष्य दोनों ने विरोधियों की दलीलें अपने श्रेष्ठ मौन से खारिज करदीं। तब वे विरोधी लोग सीधे मालपुरा जा पहुँचे और समाज को गुमराह कर भयभीत करने लगे। मालपुरा-समाज के सीधे-सादे श्रावक डर कर, कार्यक्रम कराने से पीछे हटने लगे। तब तक आचार्य संघ मालपुरा

पहुँच चुका था।

मुनिवर विशदसागर आचार्य पद पर प्रतिष्ठित -

मुनिवर भी ससंघ मालपुरा की ओर विहार कर रहे थे, रास्ते में डिग्गी ग्राम में रुके। तब वहाँ भी एक क्षुल्लक जी और ब्रह्मचारी जी जा पहुँचे और मुनिवर को मालपुरा जाने से रोकने लगे। उनके खुले-विरोधी प्रलाप से कुछ भीड़ जमा हो गई। मुनिवर विरोधियों की चालवाजी समझ रहे थे, उन्होंने संयत स्वर में अपना निर्णय सुनाया- मुझे प. पू. आचार्य भरत सागर जी के आदेश का पालन करना है अतः मैं वहाँ अवश्य जाऊँगा। आपकी कानाफूसी में आकर यदि मालपुरा समाज कार्यक्रम का संयोजन नहीं करेगा, तो मैं किसी शिक्षा मंदिर (स्कूल) के प्रांगण में या सड़क पर किसी स्थान पर बैठकर आचार्य श्री की आज्ञा शिरोधार्य करूँगा।

मुनिवर पुनः चल पड़े और देखते ही देखते मालपुरा मंदिर जा पहुँचे। गुरुदेव के दर्शन किए।

विरोध करने वाले जब भी न माने और आचार्य श्री से बहस करने लगे, मगर उनका प्रलाप व्यर्थ गया, क्योंकि वे मूर्खगण, संयम-साधना-तप के हिमालय के समक्ष थे। वात्सल्य-शिरोमणि आचार्य श्री ने ज्ञानपूर्वक उन्हें समझाया तो वे शांत होकर बैठ गये। तब आचार्य श्री ने उनको संबोधन दिया 'मुनि विशद सागर जी विवेकवान मुनि हैं।' संघ संचालन का अनुभव उनके चेहरे से झलक रहा है, उनकी तपस्या संयम से सजी हुई है। विनम्र हैं। सिंहवृत्ति के धारक हैं। पूर्ण रूप से आचार्य के योग्य हैं। ऐसे उत्तम मुनि को आचार्य-पद पर प्रतिष्ठित किया जाना मेरी दृष्टि में उचित है ताकि वे भविष्य में अन्य साधकों को दीक्षा प्रदान कर मोक्षमार्ग पर जा सके और वृद्ध साधुओं की समाधि के समय सुयोग्य निर्यापकाचार्य की भूमिका भी विधि पूर्वक निभा

सकें। आप लोगों को दुविधा समाप्त करना चाहिए ।

उनके संबोधन से सभी के मुँह बंद हो गये। फिर भी नादान श्रावक खड़े होकर सविनय बोले- 'कम से कम' मुनिवर के गुरुदेव की लिखित सम्मति तो प्राप्त कर ली जावे। 'आचार्य श्री ने उन्हें निराश नहीं किया। संघपति को भेजकर सम्मति बुलवायी। विघ्नों का पटाक्षेप हो गया।'

दृढ़ संकल्प के धनी आचार्य श्री भरत सागर जी ने ठीक बसंत पंचमी के दिन, माघ शुक्ल पंचमी 13 फरवरी सन् 2005 को विधि विधान पूर्वक मुनिवर को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया साथ ही नव आचार्य पद प्रतिष्ठित आचार्य विशद सागर जी ने तीन अन्य साधक ब्र. सुधीर वन्टी भैया को मुनि दीक्षा देकर मुनि विशाल सागर नाम दिया। जो आचार्य विशद सागर जी का दाँया हाथ बनकर रहते हैं तथा ब्र. केशरी चंद को क्षु. विबुद्ध सागर एवं ब्र. दिनेश को क्षुल्लक विगुण सागर बनाया। आचार्य श्री ने घोषणा की- 'आज से मुनि विशद सागर आचार्य हुए, वे आज से सदा ही दीक्षाएँ दें और समाधियों को दिशा दें। जयवंत हों।' मुनिवर ने उनके चरणों की वंदना की। उसी दिन भारत देश में एक आचार्य-परमेष्ठी की संख्या बढ़ गई। बोलिए जैन शासन की जय।

अब यदि पाठकों को आचार्य विशद सागर जी का संक्षिप्त परिचय नहीं दिया, तो उन्हें कुछ खाली-खाली लगेगा। अत:वह महत्त्वपूर्ण चर्चा प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

आचार्य विशद सागर जी परिचय के गवाक्ष से -

मध्यप्रदेश का हृदयस्थल कहा जाता है जिला छतरपुर। उस रमणीक भूगोल के धनी जिले में एक ग्राम है कुपी (कुपी भी कहते हैं), वहाँ सहज सरल हृदय के धनी, उत्तम उदार श्रावक श्रीमंत नाथूराम

जी की सु-भार्या, गृहणी श्रेष्ठ श्रीमति इंदिरा देवी जी की पावन कुक्षि से द्वितीया चैत्र कृष्ण चतुर्दशी, वि.सं. 2021 (11 अप्रैल 1964) को जिस भाग्यवर्धक शिशु का जन्म हुआ था, वह कहलाया रमेश। चि. रमेश की जीवन यात्रा आगम के क्षितिज तक पहुँच कर रमेश का बाना-आचार्य विशद सागर के रूप में राष्ट्र के समक्ष उपस्थित करेगी, यह सब कोई नहीं जानता था।

माता इंद्रा जी के जीवनोद्यान में अनेक पुष्प खिले थे, जो रमेश के पाँच भाई और तीन बहिनें कहलाते थे। रमेश शिशु से किशोर और फिर युवा हो गये। कद-काठी सुंदर और आकर्षक। घर-परिवार के प्यार और अनुशासन में रह कर संस्कार सीखे तो शाला-विद्यालय जाकर एम .ए .(पूर्वार्ध) तक की उचित शिक्षा भी प्राप्त की। वे अपने लघु भ्राताओं और भगनियों को इतना लाड़ प्यार देते थे कि उन्हें माता-पिता की पूर्ति अपने ज्येष्ठ और श्रेष्ठ भ्रात में ही उपलब्ध हो जाती थी।

रमेश की तरुणाई में एक अभाव था, वे मंदिर जाने में नियमित नहीं थे। मतलब पूजा-पाठ-अभिषेकादि से अपरिचित। रमेश अपने मित्र राजकुमार गुप्ता के साथ एकबार सायं की सैर से वापिस आकर दिगम्बर जैन मन्दिर के द्वार कसे निकले तो स्वतः प्रेरणा प्राप्त हुई, रमेश! तुम जैन होकर भी जैन मन्दिर के दर्शन नहीं करते। और मन्दिर में दर्शन करके संकल्प कर लिया आज से दर्शन करने अवश्य आयेंगे। दर्शन का क्रम चलता रहा। लगभग 1 वर्ष हुआ होगा कि जब तब उसे साथ-साथ मंदिर ले जाते। यों रमेश बच्चे नहीं थे, पूर्ण युवक थे 22 वर्ष के। पर धर्म के मामले में शिशु। एक दिन जब मंदिर से लौट रहे थे, तभी गाँव के गणमान्य नागरिक श्री सेठ मोतीलाल जी की दृष्टि उन पर पड़ी। पूछ बैठे-क्यों बेटे, क्या मंदिर जी से लौट रहे हो ?

–जी हाँ।

–तो क्या वहाँ अवस्थित क्षुल्लक पदमसागर जी के दर्शन भी किए? जी नहीं ।

सेठ मोतीलाल जी – महाराज के दर्शन करना चाहिए, ठीक है।

रमेश सेठ जी के साथ चले गए। दर्शन किए। दूसरे दिन पुनः सेठजी मिल गये। उन्होंने देखा कि आज तो रमेश जी के साथ क्षु. जी के गृहस्थ अवस्था के भतीजे धनपाल भी हैं। तीनों दर्शनार्थ जा पहुँचे। रमेश जी नहीं जानते थे कि क्षुल्लक जी को अभिवादन में क्या बोलना पड़ता है। अतः हाथ जोड़ कर दर्शन किए और वहीं बैठ गए। कुछ ही मिनटों के पश्चात रमेश जी उठ कर जाने लगे, तब सेठ जी ने विनोद करते हुए ताना मारा–'जल्दी लौट रहे हो, क्या घर जाकर भोजन बनाना है? रमेश जी कुछ नहीं बोले, बड़ों को इज्जत देना बचपन से ही आचरण में समाहित हो गया था, अतः किंचित मुस्कान के साथ रहे। तब क्षुल्लक जी से वात्सल्य पूर्वक सेठ जी ने कहा–देखिए तो महाराज, इतने–इतने बड़े लड़के भी प्रभु के दर्शन और पूजन पाठ में रुचि नहीं लेते। तब क्षुल्लक जी ने प्रभावना करने के भाव से, सहज ही पूछ लिया –पूजन नहीं करते? पूजा करना नहीं आता कि पूजा का भाव ही नहीं है?

रमेश जी ने अपनी कमजोरी छुपाई नहीं, विनयपूर्वक क्षु.जी से बोले–ना तो पूजा की विधि जानता हूँ, ना पूजन की सामग्री। यहाँ तक की पूजा के वस्त्रों के विषय में भी समझ नहीं है। सो, दर्शन पूजन नहीं कर पाते।

सायं की सैर से वापिस आकर दिगम्बर जैन मन्दिर के द्वार से निकले तो स्वतः प्रेरणा प्राप्त हुई कि रमेश! तुम जैन होकर भी जैन मंदिर के दर्शन नहीं करते और मंदिर में दर्शन करने का संकल्प कर लिया। आज से दर्शन करने अवश्य आऊँगा। दर्शन का क्रम चलता

रहा लगभग एक वर्ष तक।

क्षुल्लक जी भूले को पथ बतलाने के लहजे में सांत्वना देते हुए बतलाने लगे-पूजन तो पीत शुभ धोती पहनकर की जाती है किन्तु सीखने की दृष्टि से सामान्य वस्त्रों में भी की जा सकती है। यदि धोती पहनना नहीं आता तो किसी श्रावक की मदद से सीख सकते हो। कुछ दिनों तक द्रव्य धोंने और पूजा की थाल में लगाने की कला मोतीलाल से सीख सकते हो। दस पन्द्रह दिन में ही तुम सीख जाओगे, पूजन में मन लगने लगेगा, फिर किसी की आवश्यकता नहीं रह जाएगी। हम तुमको पूजा करने का नियम देते हैं।

संकोच करके चुप रह गये महाराज का दिया नियम पालन नहीं करेंगे तो पाप लगेगा। यह मानकर सादा वस्त्रों में ही प्रतिदिन पूजा करने लगे। एकबार सर्विस करने के लिए इण्टरव्यू दिया था जिसका परीक्षा फल प्राप्त होना था अतः मन में आया आज अभिषेक पूजन करके ही परीक्षा फल लेने जाना चाहिए। किन्तु ज्ञात हुआ कि वेटिंग लिस्ट में नम्बर आया उस दिन से प्रतिदिन अभिषेक का क्रम जारी हो गया।

क्षु. जी के मार्गदर्शन ने रमेश जी को धर्म की दिशा में आगे बढ़ा दिया फलतः कुछ ही दिनों में वे सुयोग्य पूजक बन गये। सारे गाँव के लोग उनकी सराहना करते न थकते। एक बार सन् 1989 के आसपास मुनि विराग सागर जी ससंघ छतरपुर नगर पधारे, तब रमेश जी कुछ दिन छतरपुर में रहे और उनका सान्निध्य प्राप्त किया । कभी-कभी रमेश जी मुनिवर के कमण्डलु में प्रासुक-जल भर दिया करते थे, तब भी वे या अन्यजन नहीं जानते थे कि एक दिन रमेश जी स्वयं कमण्डलु के स्वामी हो जायेंगे। हो गया परिचय मुनिवर से अतः रमेश जी बाद में एक -दो स्थानों तक मुनिवर के दर्शन करने गये।

घर, फिर मंदिर, फिर मुनि पर श्रद्धा रमेश जी में जाने कब आ गई और वैराग्य भाव जाग पड़ा। सन् 1992 में दर्शन करने मुनिवर के समीप गये। रमेश जी का अंतरंग समझने में घर परिवार और मुनि को देर नहीं लगी फलतः तीर्थक्षेत्र द्रोणगिरि में 8 नवम्बर 1992 को कल्पद्रुम महामण्डल विधान के अवसर पर प. पू. मुनि श्री विरागसागर जी के आचार्य पदारोहण के अवसर पर ब्रह्मचर्य-व्रत ले लिया आचार्यश्री से। हो गया संघ प्रवेश।

ब्र. रमेश भैया की शिक्षा और सु-संस्कारिता देखते हुए, आचार्यश्री विराग सागर जी ने 13 माह बाद ही तीर्थक्षेत्र श्रेयांसगिरि में 18 दिसम्बर 1993 को ऐलक दीक्षा प्रदान की। ऐलक जी ने गुरु के पास रह कर उत्तम साधना और श्रेष्ठ अध्ययन किया फलस्वरूप मात्र 2 वर्ष, 2 माह बाद, 8 फरवरी 1996 को द्रोणगिरि में मुनि दीक्षा प्राप्त करने में सफल रहे। नामकरण किया गया 108 श्री मुनि विशद सागर जी महराज।

दृढ़-संयम के धनी मुनि विशद सागर जी, गुरु-संघ में श्रेष्ठ चर्या का निर्वाह करते हुए आत्म साधना करते हुए रहने लगे। धीरे धीरे मध्यप्रदेश के विभिन्न अंचलों में धर्म प्रभावना करते और तपाराधना करते बारह वर्ष बीत गये। जो कल नूतन मुनि थे, वे वरिष्ठ मुनि हो गए। इस बीच उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। कभी ज्वर, कभी नजला, कभी खाँसी और कफ कभी पेट दर्द तो कभी सिर दर्द। शरीर टूटने लगा। उनकी गिरती हालत देखकर भक्तगण निवेदन करते रहते थे कि एक बार जयपुर की ओर विहार कीजिए, वहाँ मुनि भक्त वैद्य श्रीसुशील जैन आपका सतत् इलाज कर, रोग-राई से मुक्त कर देंगे। वे वरिष्ठ हैं, मुनियों के विशेषज्ञ हैं।

एक दिन पू. विशद सागर जी मुनिराज को तीर्थक्षेत्र श्री महावीर

जी एवं श्री पदमपुरा जी की वंदना का भाव हुआ। उन्होंने विचार किया यदि वहाँ पहुँच पाऊँगा तो फिर जयपुर भी चला जाऊँगा। क्योंकि वैद्य जी वृद्ध हैं और अनेक संतों के लिए कार्य कर रहे हैं। उन्हें यहाँ बुलाया गया, तो एक-दो दिन रुक कर लौट जायेंगे, मगर जयपुर में सतत् समय दे सकेगें । फलतः उन्होंने ससंघ विहार कर दिया।

रास्ता बीमार राही के लिए लम्बा था, किन्तु मुनिवर चलते चले गये। पहले चमत्कार जी, फिर महावीर जी और फिर पदमपुरा के दर्शन वंदन किए। राजस्थान की रेत को अपना कोमल स्पर्श करते हुए, जा पहुँचे जयपुर जैन मंदिर शिवाड़, वह 30 मई 2004 का दिवस था। भक्तों ने वैद्य जी को सूचना दी। इलाज शुरु हुआ। भारी प्रभावना के पश्चात मुनिवर जौहरी बाजार स्थित जैन मंदिर जा पहुँचे। जन- जन में हर्ष व्याप गया। प्रभावना और साधना के साथ साथ उपचार भी चलते रहे। वर्षायोग जौहरी बाजार क्षेत्र में ही किया। (इसके बाद के प्रसंग आप पूर्ववर्ती पन्नों में पढ़ ही चुके हैं। अतः चलें पूज्य भरत सागर की कथा की ओर।)

प. पू.भरत सागर जी का दसवाँ आचार्य पदारोहण दिवस- जयपुर के पास एक ग्राम है। वहाँ के निवासी अपने नगर की गरिमा बढ़ाने के लिए पू. भरत सागर जी के चरणों में पहुँचे। फलतः आचार्य श्री के एक दिन उनके नगर भी पहुँचे। 'नगर' वासियों ने प्रेमचंद जैन के साथ भावभीनी आगवानी की। फिर संपन्न हुआ वहाँ शांति विधान ताकि जैन एवं अजैन समान रूप से लाभ ले सकें फिर केकड़ी विहार किया। आचार्य श्री के भक्त वहाँ चुप नहीं बैठे, उन्होंने तिथि का लाभ लेते हुए, पू. भरत सागर जी का 10वाँ आचार्य-पदारोहण- दिवस मनाया एवं मन की मुराद पूरी की। वह माघ शुक्ल दशमीं (सन् 2005) का पावन दिवस था। दो दिन ही नहीं बीते कि आचार्य श्री को ज्वर हो

आया, भक्तगण चिंता ग्रस्त हो गए। इस बीच लोहारिया के शिष्ट जन लगातार संपर्क करते रहे और आचार्य श्री से प्रतिष्ठा महोत्सव में पध ारने की अनुनय करते रहे।

पुनः लोहारिया-प्रवास - 2005 -

स्वास्थ्य- लाभ मिलते ही आचार्य श्री ने नगर से ससंघ विहार कर दिया और पहुँचे लोहारिया। समाजसेवीगण उनका सान्निध्य पाने तत्परता से धार्मिक क्रियाकलापों को पूर्ण करने में जुट गए। फलतः आचार्य श्री के पावन-आशीष से भक्तों ने भगवान बाहुबली की 21 फुट उत्तुंग प्रतिमा स्थापित की, समीप ही 24 तीर्थंकरों की खड्गासन प्रतिमाएँ भी पंचपरमेष्ठी मंदिर एवं पंचबालयति मंदिर का निर्माण कराया गया। फिर हुआ पंचकल्याणक महोत्सव भारी धूमधाम से।

वैशाख शुक्ल तृतीया से दशमी तक सभी कार्य संपन्न हो गए। इस अवसर पर देश के अनेक प्रांतों से भक्तगण उपस्थित हुए ही, साधु संत भी उपस्थित हुए। जिस दिन दीक्षा हो रही थी, उस दिन पू. भरतसागर जी ने देश को तीन मुनि और एक आर्यिका दीक्षा प्रदान की ।तब लगा मंदिर निर्माण के साथ-साथ आदमियों का निर्माण भी करते चले जा रहें हैं। दीक्षार्थियों को उन्होंने अपनी गरिमामय जिह्वा से जो नाम प्रदान किए थे वे थे- मुनि 108 श्री पंचकल्याणक सागर जी, मुनि 108 श्री तपसागर जी महाराज, मुनि श्री गिरनार सागर जी एवं अर्यिका 105 श्री गिरनारमति माताजी। मुनि भक्त सतीश कुमार जैन (जायसवाल) ने भगवान बाहुबली की प्रतिमा स्थापित करने का पुण्यार्जन तो किया ही था, सौधर्म इन्द्र भी बने थे।

जब भी आचार्य भरतसागर जी अस्वस्थ होते थे और चलने में कोई कमजोरी अनुभूत करते थे तो भक्तगण तुरंत डोली पर चलने का आग्रह कर बैठते थे, अतः भक्तों की दृष्टि साफ करने के लिए उन्होंने

पंचकल्याणक के समय प्रवचन के दौरान आजीवन डोली त्याग की भावना व्यक्त कर दी थी। फलतः सलाह- प्रेमी भक्तगण सचेत हो गए भविष्य के लिए।

आचार्य भरत सागर जी ने लोहारिया में वात्सल्य दिया तो समीपी ग्रामों को भी वात्सल्य प्रदान किया अनेक ग्रामों तक पहुँचे भी। गनाड़ा में मुनि 108 श्री उदय कीर्ति जी महाराज की समाधि हुई थी, वे पू. भरत सागर जी का सान्निध्य प्राप्त कर सके थे। वहाँ को विहार कर आचार्य श्री तीर्थक्षेत्र श्री अंदेश्वर- पार्श्वनाथ पहुँचे और ससंघ भावभीनी वंदना की।

बाँसवाड़ा चातुर्मास - 2005 -

नगर के भक्तगण अंदेश्वर पहुँच कर आचार्य श्री से बासवाड़ा आने की प्रार्थना करते रहे अतः भक्तों की भावना पूर्ण करने हेतु आचार्य श्री बासवाड़ा पहुँचे। समय आने पर चातुर्मास स्थापना की। 4 माह निरंतर महती प्रभावना की। चारों ओर धर्म प्रकाश। देखते ही देखते निष्ठापना की विधि भी समय पर संपन्न कर दी। गुरुदेव की चर्या से प्रभावित होकर स्थानीय युवक श्री रिपेश कुमार (सन्मति) ने आचार्य श्री से आजीवन ब्रह्मचर्य-व्रत-लिया था। पश्चात आचार्य श्री ने विहार कर दिया।

उदयपुर प्रवास-2006 -

चेतना के प्रतीक आचार्य श्री जब उदयपुर पहुँचे तो वहाँ समग्र श्रावकों में नव चेतना का प्रादुर्भाव हो पड़ा। भारी एकता के साथ समाज ने अनेक कार्यक्रम गुरुदेव के सान्निध्य में आयोजित किए। प्रथम कार्यक्रम था-आचार्य श्री का 58वाँ जन्मोत्सव। सदा की तरह भक्तों ने भारी भक्ति भाव से भरत-नवमी मनाई और सदा की तरह आचार्यश्री ने राम नवमी। किन्तु आचार्य के अस्वस्थ हो जाने से लोग

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

हँस गाकर उत्सव न मना सके। मन की मन में रह गई तब आचार्य श्री ने कांपती आवाज में बतलाया- यह उदासी का समय नहीं है, मेरे अपने कर्मोदय का फल है, उसमें समाज का क्या दोष ? लोग चुप रह गए मन ही मन आचार्य श्री के स्वास्थ्य-लाभ की कामना करते रहे।

श्रावकगण एक ही चर्चा में व्यस्त रहते थे कि आचार्य श्री को उदयपुर में ही स्वास्थ्य-लाभ हो जावे और वे उदयपुर में ही वर्षायोग करें। भक्तों की भक्ति व सेवा सफल हुई, आचार्य श्री क्रमशः स्वस्थ्य होने लगे। एक दिन जब भक्तों ने वर्षायोग के लिए कुछ अधिक ही प्रार्थना की तो आचार्य श्री ने भविष्य को देखते हुए उन्हें समझाया-मैं अस्वस्थ्य रहता हूँ मेरे साथ अत्यंत वृद्ध संत हैं, कब किसकी समाधि हो जाये कोई नहीं जानता, किन्तु समाधि की संभावना को नकारा नहीं जा सकता । संतगण सदा विचारते हैं कि किसी महान संत के समाधि स्थल के समीप ही उनकी समाधि हो तो वह मरण का वरदान सिद्ध होती है। अतःमुझे यहाँ रुके रहना उचित प्रतीत नहीं होता। आप सब महान साधु-भक्त हैं अतः मेरी मनोभावना को समझने का प्रयास करें।

पैरों में किंचित शक्ति का अनुभव करते ही आचार्य श्री ने वहाँ से ससंघ विहार कर दिया। चरण थे अणिंदा की ओर। रास्तें में ग्राम कानपुर को समय दिया फिर पहुँचे अणिंदा।

अणिंदा जी- 2006 -चातुर्मास से समाधि तक

अतिशय तीर्थक्षेत्र के पावन-प्रांगण में आचार्य श्री ने ससंघ प्रवेश किया। समीपवर्ती ग्रामों शहरों के अतिक्ति अन्य नगरों से भी भक्तगण जा पहुँचे और श्री शिखर चंद जी जैन पहाड़िया के साथ मिलकर भव्य अगवानी की। पहाड़िया जी की मनोभावना थी कि श्रुत-पंचमी के अवसर पर आचार्य श्री के सान्निध्य में श्रुतस्कंध पूजा एवं षट्खण्डागम पूजा करने का गौरव मिले। ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को जब गुरुवर के

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

समीप बैठकर श्रुत-पंचमी-पर्व मनाया तो न केवल पहाड़िया जी की बल्कि समस्त भक्तों की भावना पूर्ण हो गई। कार्यक्रम के अंत में भक्तों को आचार्य श्री से चातुर्मास हेतु प्रार्थना की, तब उन्होंने मौन रहते हुए क्षेत्र पर ही वर्षायोग करने का संकेत किया।

आचार्य श्री तो उदयपुर से ही अस्वस्थ्य शैथिल्य आत्मा की सजगता को परास्त करना चाहता था किन्तु वह ऐसा नहीं कर पाया। योग की बात कहें कि यहाँ भी आचार्य श्री का स्वास्थ्य बिगड़ गया, तब भक्तों ने प्रार्थना की हे गुरुदेव, गत कुछ माहों से आपकी तबियत बिगड़ती-सुधारती रहती है, अतः यह क्षेत्र शहरों से दूर है, कल को कुछ गंभीर परिस्थिति सामने आई तो अवसर विशेष पर वैद्य भी न पहुँच पाये, अतः हम सब हृदयपूर्वक विनय करते कि आप बांसवाड़ा या अन्य शहर में चातुर्मास करें ताकि समय पर साधन जुटाए जा सकें। तब आचार्य श्री ने कांपते शरीर को नियंतित्र करते हुए कहा-भक्तगण सुनें मैनें अपने गुरुदेव की परम्परा देखी है, वे सिद्ध या अतिशय क्षेत्रों पर ही वर्षायोग को प्राथमिकता देते थे, शहर या जंगल का ध्यान कभी नहीं लाया गया अतः भला देह को बचाने, में अणिंदा जैसा अतिशय क्षेत्र कैसे छोड़ सकता हूँ।

आचार्य श्री का उत्तर सुनकर किसी भक्त को आगे बोलने का साहस नहीं हो सका, रह गए सब मौन। यह वे ही नहीं सारा भारत जानता था कि आचार्य श्री के साथ परीषह भी चलते हैं। उपसर्ग हर दिन सिर उठाए तकते रहते हैं। अनेक भक्त पच्चीसों वर्ष से उन्हें जानते थे कि उन्हें साल में एक दो बार मलेरिया हो ही जाता है। पथरी तो जीवन-साथी बनकर साथ दे रही है । दाह रोग नित्य कर्म की तरह साथ लगा रहता है इसके बाद गठिया और रक्तचाप की परेशानी अलग। पाँच वर्षों से हृदय रोग ने भी दस्तक दे दी है। तीन वर्ष से दृष्टि धुँधली हो

गई है। उनकी देह रूपी वसतिका में अनेक रोग ससंघ विराजे हैं। मगर साधु-संघ में शिरोमणि, पूज्य आचार्य श्री कभी विचलित नहीं होते थे और स्पष्ट स्वर में कहते थे-'कर्मसिद्धांत नहीं समझते क्या? जो किया वह भोगना ही पड़ेगा।' एक वरिष्ट भक्तराज बतला रहे थे कि अन्तरायों का क्रम तो उन्हें क्षु. दीक्षा के समय से ही प्रताड़ित कर रहा है। तीन से लेकर छह दिन तक के अन्तराय उन्हें हुये हैं और वे शांति से सहते रहे हैं। खुद को और श्रावक को प्रसन्न रखने के लिए कह देते हैं- 'संभव है कि मैंने कोई पूर्व जन्म में मुनियों को आहार न दिए हों अतः मुझे भी आहार सहजता से क्यों मिलेगें?

कुछ भक्त बतलाते हैं कि परिषह सहते हुए उनका चिंतन चलता रहता था यही कारण था कि हाथों की अंगुलियाँ संकेत करती रहती थीं कि जाप दे रहे हैं, तब भक्तों को विश्वास हो पाता था कि उपसर्ग का हमला हो या परिषह की बैचेनी, उनका समय कभी व्यर्थ नहीं जाता, वे उदार प्रभु चिंतन में लगे रहते हैं। उनका हर पल सिद्ध करता था कि दिन चर्या शुभोपयोगनिष्ठ है। बड़ी बात यह कि अनेक परेशानियों के बीच सहजानंद की अनुभूति बनाये रहते थे।

अणिंदा-चातुर्मास - आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को परिषह से संघर्ष करते हुए आचार्य श्री ने ससंघ वर्षायोग की स्थापना की। उस समय संघ में 24 पिच्छियाँ साधनारत थीं भक्तगण आचार्य श्री के लुंज-पुंज देह-तत्त्व को देखकर घबड़ाते थे; क्योंकि वे तनिक भी स्वस्थ्य नहीं थे। तभी सावन माह में उन्हानें छह दिवसीय उपवास किया। भक्तों के हृदय हा-हाकार कर उठे। चार दिन आहार लिया, पुनः छह उपवास लोग सुबह से शाम तक उन्हें मनाते रहते थे। सावन माह के अंतिम आठ दिनों में पुनः आठ उपवास किए। समाचार से समग्र भारत चिन्तित हो गया। एक ही प्रश्न-'गुरुदेव यह क्या कर रहे हैं।'

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

उनके साथ-साथ उनका संघ भी कठोर साधना कर रहा था। भादों माह में आचार्य श्री ने केवल दूध स्वीकार किया और किसी दिन केवल अनाज के कुछ ही ग्रास। भाद्रपद गया तो आश्विन माह आया, आचार्य श्री ने आहार की मात्रा पूर्व से भी अल्प कर दी; किन्तु षट्कार्यों में सावधानी पूर्वक प्रवृत्त होते रहे। जो उनका दैनिक क्रम था, वह कभी नहीं टूटा। रात्रि में तीन बजे से जाप देना, फिर स्वाध्याय, प्रतिक्रमण, सामायिक करना।

समय के साथ केवल 'साधु' की साधना दिख रही थी, इस चातुर्मास में आचार्य श्री ने प्रभावना का प्रयास नहीं किया। यह पृथक बात है कि उनका देह स्वतः प्रभावना का संदेश हर क्षण प्रदान कर रहा था। धीरे-धीरे वर्षायोग की अवधि पूर्णतः की ओर हो आयी। आचार्य श्री दीपोत्सव के बाद निर्वाण लाडू का पर्व मनाकर निष्ठापना करना चाहते थे अतः धनतेरस से क्रियाएँ परिवर्तित कराईं और साधुओं को कई निर्देश दिए। वे मन ही मन अपने समाधिकाल का आंकलन कर चुके थे अतः तदनुकूल कदम बढ़ा रहे थे। धनतेरस को 'धन्यतेरस' का मुकुट पहनाते हुए संघस्थ साधुओं को बतलाया कि आज से कोई भी शिष्य मेरे चरण स्पर्श न करे। गुरु आज्ञा के समक्ष कोई भी साधु यह नहीं पूछ सका कि वे ऐसा आदेश क्यों दे रहे हैं। उनका दूसरा आदेश था कि तीन दिन तक मैं ध्यान में रहूँगा अतः कोई भी साधु या श्रावक किसी प्रकार का शब्द नहीं बोले। ऐसा कहकर वे दीर्घकालीन जाप देने बैठ गए, जो सुबह शाम काफी देर तक चलती थी। जाप से समय निकालकर त्रयोदशी को मंगल गोचर प्रत्याखान के समय पुनः आज्ञा दी कि चतुर्दशी एवं अमावस्या के दिन मध्याह्न बेला में सभी साधु मेरे समक्ष बैठकर सामायिक करेंगे, अपने साथ 'विमलभक्ति' नामक पुस्तक भी लायेंगे। सभी ने वैसा ही किया।

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चतुर्दशी को पाक्षिक प्रतिक्रमण के बाद सायंकाल चार बजे संघस्थ साधुओं से सामूहिक ध्यान कराया गया। एक किस्म से वह ध्यान की कक्षा थी, उसमें आचार्य श्री ने बतलाया समाधि के लिए अभिजित नक्षत्र अच्छा कहा गया है। उनका वाक्य सुनते ही साधुगण उनकी ओर देखने लगे, उनकी आँखों से अदृश्य प्रश्न निकल रहे थे कि गुरुदेव ऐसा क्यों बोल रहे हैं। उनके प्रश्नों का मौन समाधान जुटाना सहज नहीं था अतः आचार्य श्री वाणी पर जोर देते हुए बोले- आप तो क्या, किसी को भी समाधि लेनी हो तो मुझ से कहना। साधुगण उनके समाधान के बाद भी यह मानते रहे कि गुरुदेव समाधि-साधना में प्रवेश कर चुके हैं। उनकी बात तब और स्पष्ट हो गई जब गुरुदेव दो दिन तक सामान्य पाटे पर बैठते रहे। भक्तों के साथ-साथ शिष्यों ने भी उनसे प्रार्थना की कि सिंहासन पर विराजें, पर वे पाटे पर ही प्रसन्नता बनाये रहे।

एक-एक रात साधुओं और भक्तों को मुश्किल से कट रही थी। कब क्या हो जाए कोई नहीं जानता था। साधुओं ने देखा कि आचार्य श्री अमावस्या की रात को बारह बजे से ध्यान में बैठे हैं। प्रातः चार बजे उन्होंने ससंघ चातुर्मास-निष्ठापना की विधिपूर्ण की।

प्रभात की बेला में पुनः ध्यान करने लगे। तभी संघस्थ एक ब्रह्मचारी ने आचार्य श्री के समीप जाकर विनय पूर्वक चरण स्पर्श किए। चूँकि आचार्य श्री चार दिन पूर्व ही इस कार्य को मना कर चुके थे अतः उन्होंने मौन रहते हुए ब्रह्मचारी की ओर किंचित आँखें तरेरकर देखा और मुँह से उपेक्षा पूर्ण हूँ की ध्वनि की, जैसे कह रहे हों कि तुम आदेश भूल गए। ब्रह्मचारी हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, फिर बोला- सही में गुरुदेव भूल गया था, इसलिए भक्तिवश चरण छू लिए, अब ध्यान रखूँगा।

कुछ देर बाद आचार्य श्री दो साधुओं के साथ अणिंदा के मूलनायक

भगवान पार्श्वनाथ के दर्शन करने गए, क्रम बनाया, नीचे से ऊपर तक के दर्शन कर आए फिर अभिषेक देखा। उन्हीं के पावन-सान्निध्य में निर्वाण-लाडू चढ़ाए गए।

सुबह के नौ बज चुके थे, आचार्य श्री ने आध घंटा जप किया, फिर साढ़े नौ बजे आहार चर्या को उठे। सदा की तरह दो साधूगण उनके साथ गए। आचार्य श्री ने अल्प आहार स्वीकार किया और वापिस वसतिका में आ गए। जानें क्यों उस दिन उन्होंने वसतिका में आकर विश्राम नहीं किया, पाटे पर ध्यान लीन हो गए। आधे घंटे बाद उठे और मंदिर के बाहरी द्वार पर डाले गए पाटे पर बैठ गए। करीब सवा 11 बजे सभी साधुगण उनके समीप उपस्थित हुए। सभी ने 'विमल-भक्ति' पुस्तक खोली। जो लोग पुस्तक नहीं लाए थे आचार्य श्री ने उनकी ओर देखा, जैसे कह रहे हों - 'आदेश के बाद भी आप पुस्तक लाना भूल गए।' वे साधु संकोच करके उठे और अपनी-अपनी पुस्तक ले आए। फिर शुरु की आचार्य श्री ने प्रत्याख्यान विधि। उसी क्रम में सिद्ध-भक्ति और योग भक्ति भी संपन्न की। फिर ईर्यापथ-भक्ति पूर्ण कराई। भक्ति पूर्ण हुई ही थी कि आचार्य श्री की दृष्टि उस ब्रह्मचारी पर पड़ी जिसे चरण छूने पर डाँटा था अतः सहज ही कह उठे- भैया मैंने नाहक तुम पर क्रोध किया था, मुझे क्षमा करो। उनका वाक्य सुनते ही ब्रह्मचारी के आँसू बह आए, उसे विश्वास हुआ कि पूज्य भरत सागर जी सामान्य नहीं, महान आचार्य हैं जो मुझ जैसे तिनके से भी क्षमा याचना कर लेते हैं।

कुछ मिनिट बाद आचार्य श्री ने उपस्थित साधुओं से कहा-आप लोग कुछ दिनों से गंभीर रहते हैं, उदास हैं क्यों? गंभीरता और उदासी छोड़िए और आनंद के साथ रहिए। व्रतों का दृढ़ता से पालन कीजिए। मुझे आभास हो रहा है कि मेरे पास कम समय बचा है। उनका यह

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

वाक्य सुनते ही सभी साधु सचेत स्वरों में बोले- 'महाराज ऐसा मत कहिए, आप शीघ्र ही स्वस्थ्य हो जायेंगे।' आचार्य श्री उनकी समझाइश से मुस्करा पड़े; क्योंकि वे अपना भविष्य जानते थे।

संतगण समीप बैठे ही थे, आचार्य श्री ने अगला आदेश सुनाया- कल तक के लिए आहार का प्रत्याख्यान है। फिर पूछा- सभी ने त्याग कर दिया? सभी का स्वीकृति में उत्तर मिला। दोपहर में जैसा कि होता है, गोचरी वृत्ति का प्रतिक्रमण हुआ। आचार्य-भक्ति आने से पूर्व ही आचार्य श्री ने आदेश सुना दिया कि आज आचार्य-भक्ति नहीं होगी, आप लोग सामायिक हेतु कायोत्सर्ग कीजिए। सभी साधु कायोत्यर्ग में लीन हो गए आचार्य श्री कायोत्सर्ग कर रहे थे तभी एकाएक गर्दन एक ओर लटक गई। उपस्थित साधु दौड़कर उनके करीब पहुँचे, उन्हें संभाला; किन्तु उनके हाथों में देह ही आई, प्राण तत्त्व उड़ चुके थे। वसतिका की वेदना आँगन तक पहुँची फलतः अन्य भक्तगण भी दौड़े, कोई उन्हें देख रहा था, कोई घड़ी में समय देख रहा था, सवा तीन बजे थे। भले ही उस ऋतु में प्रकृति का सूरज शाम पौने छह के बाद डूबता था; किन्तु संघ का सूरज दिन में सवा तीन बजे ही डूब चुका था। देश में उदित कतिपय दिगम्बर-सूर्यों के मध्य से एक सूर्य कम हो गया। खबर के पाँव देखते ही देखते क्षेत्र से नगर से और विनगरों की ओर, खबरें पाँव-पाँव जा पहुँची। भक्तगण सुन कर हतप्रभ हो गए। कुछ ही देर में क्षेत्र पर भक्तों का जमावड़ा लग गया। सुधि लोग जानते थे कि पार्थिव शरीर को रात-भर रोका गया तो अनंत हिंसा होगी अतः कार्यकताओं ने किसी 'साधारण' या 'अतिविशेष' की प्रतीक्षा में समय नष्ट नहीं किया, शाम होने से पूर्व अतिशय क्षेत्र पर चंदन चिता सजाई और अपने परम हितैषी गुरुदेव को अग्नि के हवाले कर दिया। संघस्थ साधुगण चिता के समीप खड़े रहकर ज्वालायें देख रहे थे, कार्यकर्त्तागण घी, कपूर आदि आहूतियाँ

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चिता पर छोंक रहे थे देखते ही देखते गुरुदेव का पार्थिव-शरीर काष्ठ खण्डों के साथ जलकर पंच तत्त्व में विलीन हो गया। लपटें उठ-उठकर शांत होने लगीं। संतगण वहाँ से लौटने का मन नहीं बना पा रहे थे। वे खड़े थे, जैसे उन्हें चिता में भी गुरु के दर्शन हो रहे हों। तभी चार कर्मठ कार्यकर्त्तागण उनके समीप पहुँचे और विनय की- अपने गुरुदेव अब यहाँ नहीं हैं, वे तो आपके स्वाध्याय में ही मिलेंगे।

श्रद्धांजलि सभा प.पू. भरत सागर जी की -

एक उदास संध्या क्षेत्र पर फैल चुकी थी। संतगण अपनी वसतिका में गुरुदेव की चर्चा में लीन थे। कार्यकर्त्तागण आगामी आवश्यक योजना की रूपरेखा पर विचार कर रहे थे कि दूसरे दिन मध्यान्ह बेला में श्रद्धांजलि-सभा आहूत की जावे, ताकि दूर-दराज से आने वाले भक्तगण शामिल हो सकें।

दूसरे दिन 22 अक्टूवर 2006 दिन रविवार को दोपहर में सभा रखी गई, जो भक्त समीपस्थ क्षेत्रों में थे वे पहुँच भी गए। संतो के मार्गदर्शन में श्रद्धांजलि सभा शुरु हुई। अनेक संत बोलना चाहते थे, किन्तु शोक से भरे उनके गलों से आवाज ने निकलने का अवसर ही नहीं दिया, उन्होंने प्रयास किया भी तो अधरों से वाणी निकलने के बदले नेत्रों से आँसू बहने लगे, गले रुंध गए, उस समय देवता ने विश्वास किया कि श्रद्धांजलि बिना शब्दों के भी दी जा सकती है।

संतगण एक-दूसरे को धैर्य से कार्य लेने का वास्ता दे रहे थे, तो भक्तगण एक-दूसरे के अश्रु पौंछ रहे थे। तब तक एक संत साहस कर अपने गुरुदेव के प्रति कुछ वाक्य बोले। धीरे-धीरे कुछ संत और बोल पाए। क्रम आया फिर भक्तों का, उन्होंने भी टूटे-फूटे शब्दों में श्रद्धा पूर्ण विचार रखे। यदि उन सबके शब्दों के साथ-साथ उनके हृदय में उमडते विचारों को भी समाहित किया जावे तो पूज्य भरतसागर जी के

प्रति जो विचार बनते वे इस प्रकार होते-' पूज्य आचार्य श्री सम्पूर्ण जीवन में उपसर्गों और परिषहों को शांति से सहते रहे हैं। वे रात्रि में अल्प निद्रा लेते थे, शीघ्र सोते थे और आधी रात में ही जाग जाते थे, फिर लेटे-लेटे चिंतन शुरु करते थे, एक बजे उठकर स्वाध्याय करते थे, उसके पश्चात अध्ययन आदि। वे पूर्ण अनासक्त एवं निस्पृह योगी थे, फलतः धर्म की रक्षार्थ अपने प्राणों को भी होम सकते थे, उनका तप उच्च कोटि का था,त्याग अवर्णनीय था वे संयम के महारथी थे।

वे महान संत तो क्षु. अवस्था से ही उपसर्ग झेल रहे थे। परीषह झेलने में महान कर्मयोगी थे और विपरीत परिस्थितियों में भी सहजता से जीवन जीते थे। उन्होनें चारित्र शुद्धि एवं णमोकार-मंत्र के सभी व्रत पूर्ण किए थे। बड़ी बात तो यह भी है कि सम्मेद शिखर जी की वंदना करते टोंक के पच्चीस व्रत भी सहर्ष संपन्न कर चुके थे।

वे अनेक रसों के त्यागी थे। नमक, तेल एवं दही का आजीवन त्याग कर चुके थे। नमक का त्याग दो चार दिन तो सधता है; किन्तु बाद में शीघ्र ही ऊब जाता है। त्याग के महाराजा कहलाने वाले भरत सागर जी ने भोजन के राजा नमक को ऐसे त्यागा कि जीवन भर उसकी कल्पना तक नहीं की। वे सदा अनिच्छापूर्वक आहार केवल उतनी मात्रा में ही लेते थे जितनी मात्रा में साधक का ज्ञान, ध्यान और तप सध सके। वे कभी आहार से शरीर वृद्धि की भावना नहीं रखते थे, न ही कभी स्वाद की। अभिप्राय होता था कि क्षुधा शाँत हो और आवश्यकों का निर्वाह। वे जानते थे कि आहार बल वृद्धि हेतु नहीं,बल्कि धर्म-वृद्धि और चारित्र-वृद्धि के लिए स्वीकार किया जाता है, वे थोड़ा-सा आहार लेकर अपनी प्राण-रक्षा करते थे, आहार से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग अन्य साधुओं की वैयावृत्ति करने में लगा देते थे। इस तरह आहार स्वीकार करने के देह कारणों को दोष-मुक्त रखते

थे। वे जीवन भर आहार ज्ञान का ध्यान रखते रहे फलतः बत्तीस अंतराय, छ्यालीस दोषों से रहित आहार ग्रहण करते थे।

आचार्य भरत सागर जी अनेक भक्तों को शूद्र जल के त्याग का नियम दिए थे, अन्य जातियों के लोंगों को मद्य,मांस और मधु का त्याग कराया था।फलतः वे सब नियम पथ पर चल सके थे।जैन समाज की नूतन पीढ़ी को देवदर्शन, शुद्ध जल एवं सूर्यास्त से पूर्व आहार लेने की प्रेरणा देते थे।एक मायने में वे एक स्वकल्याण के साथ-साथ प्राणी मात्र की भावना भाते रहते थे ।वे हर व्यक्ति में साधुत्व का स्वभाव स्थापित करना चाहते थे।

जिस तरह गुरुदेव आचार्य विमल सागर जी का वात्सल्य सब को मिलता था, उनके न रहने पर वही वात्सल्य, सभी गुरुभाईयों को भरत सागर से मिला।आपका वात्सल्य ही अभी तक बाँधे रहा।उनमें दूसरें को सम्मान देने की प्रबल भावना रहती थी।बड़ों तो बड़ों बच्चों को भी वात्सल्य ही नहीं सम्मान भी देते थे।वे अपने गुरु की तरह ही वात्सल्य के सागर थे।उनके मृदुल,सौम्य और सरल स्वभाव के कारण भक्त तो भक्त, साधकगण भी उनसे प्रभावित होते थे और उनके चरणों के समीप रहने में अपना गौरव मानते थे।संघ-संचालन में उन जैसा प्रावीण्य अन्यत्र दिखाई नहीं देता।उनके साथ संघस्थ साधुगण सदा प्रसन्नचित रहते थे।

पू. भरत सागर जी गृहस्थी के बोझ से दबे हुए श्रावकों को विधर्म और मिथ्यात्व से बचाकर जिन मार्ग पर चलाते थे, उनका आशीर्वाद पाकर हर व्यक्ति फलता-फूलता देखा गया है।वे द्वादशांग के ज्ञाता एवं कुशल वैद्य थे, उन्हें अपायविचय-धर्म-ध्यान का नेता कहते हुए खुशी होती है।उनके संसर्ग से सहस्रों भक्तों में व्रताचार एवं ज्ञानाध्ययन की रुचि जागृत हुई थी, उनकी सरलता और भद्रता देखते ही बनती

थी। वे नि:स्वार्थ थे, हृदय निर्मल जल की तरह था और स्वभाव बच्चों की तरह निश्छल। कभी किसी के प्रति पक्षपात नहीं किया और किसी स्थान विशेष से लगाव नहीं बतलाया। धार्मिक-प्रसंगों के मध्य सामाजिक-प्रसंगों की चर्चा आ जाने पर आप कभी विचलित नहीं हुए, बल्कि तत्परता से समाधान जुटा देते थे। उनकी तपश्चर्या कठिन थी; किन्तु मुद्रा परम शांत। उन्हें स्पष्ट वक्ता के रूप में ख्याति मिली थी; किन्तु सबके प्रति अत्यंत प्रेम रखते थे। कभी ज्ञान का अहंकार नहीं किया, क्रोध तो कभी करते ही नहीं थे, मान और माया का सवाल ही नहीं था सो उन्हें समुद्र सम-गंभीर पृथ्वीवत क्षमाशील एवं अनियत-विहारी कहा जाता था।

आर्यिका माताओं के विचार- पूज्य आचार्य भरत सागर जी को सदा जिन-भक्ति में लीन देखती रही हूँ। उन्हें कभी शास्त्रों के संग तो कभी सामायिक में मग्न देखा। विकथा या अनावश्यक चर्चा कभी करते नहीं, उनकी हर श्वाँस में मात्र वाणी ही नहीं जिनवाणी गर्भित होती थी।

वे चमत्कार को नहीं वीतरागता को महत्त्व देते थे। यद्यपि उनकी दृष्टि-मात्र से चमत्कार हो जाना संभव नहीं था; किन्तु कभी उन्होंने चमत्कर दिखाने के प्रयास नहीं किए। चमत्कारी-व्यक्तित्व से ऊपर, वे वीतरागी व्यक्तित्व के गुणग्राहक थे। अत्यंत ज्ञानवान होने के कारण खुद को तिराने में मार्गदर्शक बने। चूँकि श्रावकगण उनकी भद्रता से परिचित थे अत: वे उनसे चमत्कार नहीं ज्ञान की आशा रखते थे।'

अंतिम वक्ता के रूप में ज्ञानवान ब्रह्मचारी जी ने अपनी बात रखी- वे सात देश, कुल, जाति से शुद्ध थे। वे शिष्यों को संभालने में कुशल थे और उन पर अनुग्रह करने में दक्ष। वे ऐसे आचार्य थे जो पांचों प्रकार के आचारों का पालन करते थे- दर्शन, ज्ञान ,चारित्र , तप और वीर्य।

मगर वे संघस्थ साधुओं से भी ऐसे ही आचरण की आशा करते थे, उन्हें चौदह विद्याओं में पारंगत मानता हूँ, वे यथायोग्य ग्यारह अंग के धारक थे ओर सिद्धांतों में मेरु के समान अचल थे। मेरी बातों को अन्यथा न मानें तो मुझे कहने में गौरव हो रहा है कि वे पृथ्वी की तरह सहनशील भी थे। दोषों को बाहर निकालने में, समुद्र की तरह मल फेंकने वाले, महान साधक थे।

इसी प्रकार अन्य-अन्य श्रावकों ने भी उनके गुणों का वर्णन किया और अपने को धन्य माना। यद्यपि आचार्य भरतसागर जी उस क्षण उस सभा में नहीं थे; किन्तु उनके शिष्य गण उनके चित्र में उनके दर्शन कर अभिभूत थे। सभा पूर्ण हुई। हुआ पूर्ण एक युग सहज साधुओं का युग। लोग कहते हैं कि गुरुदेव दीपावली के अवसर पर प्रयाण कर गए थे फलतः दीपावली के दिन भी तम का वातावरण बन गया था; किन्तु सत्य तो यह है कि हर दीपक की ज्योति में गुरुदेव की निर्मल मुस्कान समाई हुई है।

श्रेष्ठ गुणों के सागर समाधिस्थ आचार्यरत्न पू. भरत सागर जी के वे समस्त गुण आज भी उनके आज्ञानुवर्ती, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी राष्ट्रसंत, श्रमणाचार्य, योगीशिरोमणी प.पू. आचार्य किरीट108 श्री विशद सागर जी मुनि महाराज में लक्षित हो रहे हैं जिन्हें पू. भरत सागर जी अपने कर कमलों से आचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर गये हैं।

पू. विशद सागर जी में पू. भरत सागर जी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व समाहित हो गया है। हैं वे आचार्य भरत सागर जी की परम्परा के श्रेष्ठ ध्वज वाहक। भविष्य में गुणीजन खुद मूल्यांकन कर आनंदित होंगे कि पू. भरतसागर जी हमसे बिछुड़े नहीं हैं, वे तो पू. विशद सागर जी में ही हैं। वे ही हैं हमारे भरत सागर, हमारे विमल सागर ।

यहाँ पूज्य आचार्य भरत सागर जी महाराज के व्यक्त्वि पक्ष की

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

चर्चा पूर्णता की ओर है। उनके व्यक्तित्व को लक्ष्य कर प्रो. नलिन के. शास्त्री ने बड़ी सुंदर पंक्तियाँ लिखीं हैं- 'बीसवी सदी के उत्तरार्ध में श्रमण परम्परा के क्षितिज पर एक ऐसे नक्षत्र का उदय हुआ जिसने अपनी तपोः पूत काया एवं साधना के आलोक से सम्पूर्ण जगति को आभामय कर दिया।'

अध्याय-दो

कृतित्व के धरातल पर

आचार्य भरत सागर जी महाराज

जैन धर्म के आलोक में मुनि परम्परा -

विश्व संस्कृति के इतिहास में जैन धर्म अपने उदात्त मूल्यों के कारण प्रकाश स्तम्भ की तरह स्थान पा चुका है। जैन धर्म में मुनियों की चर्चा और रहन-सहन के लिए पृथक से ही प्राचीन आचार्यों ने ग्रंथ लिखे हैं, उन मुनियों को चर्या का निर्वाह अनिवार्य माना गया है। वह कठिन रास्ता है, मगर जैन मुनि उस पर चलते हुए कभी संकल्प-विकल्प में नहीं पड़ते, न ही ऊबते हैं ।सदा जैनागम का अनुशरण करते हैं दर्शन, ज्ञान, चारित्र जो आगम में रत्नत्रय की संज्ञा से जाना जाता है, पल-पल निर्वाह करते हैं, धीरे-धीरे रत्नत्रय के स्वामी हो जाने का मनोज्ञ प्रयास भी करते हैं। मुनिगण अपने अध्यात्म से प्राप्त उजास से समाज में रचनात्मकता, नवजाग्रति और व्रतयुक्त जीवन व्यतीत करते हैं। मुनिगण अपनी साधना से ही अपने भीतर आत्मा का दर्शन करते हैं और फिर तत्त्व दर्शन पर प्रकाश डालते हैं। उनकी कोमल वाणी से जैन धर्म के कठिन सिद्धांत समझने में श्रावकों को सरलता अनुभव होती है वे सदा संसार को सचेत करते हैं और संसारी जन को मिथ्यात्व से बचे रहने का उपदेश देते हैं।

आचार्य भरत सागर जी को जब समग्र के रूप में देखते हैं तो स्पष्ट होता है कि उन्होंने जीवन भर मम वाणी से उपदेश दिए है, तीर्थ क्षेत्रों की रक्षार्थ लोगों को सचेत किया है, संस्कृति के संवर्धन में सदासमय दिया है और नए मंदिरों के निर्माण को गति दी है। सम्बोधित व्रत,

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

उपवास, संयम, अपरिग्रह और आकिंचन की भाव भूमि को कभी शिथिल नहीं होने दिया और श्रमणसंस्कृति की पताका सदा ऊपर रखी है, उनकी वैचारिक क्रांति में आदि देव तीर्थंकर ऋषभनाथ का दर्शन देखने मिला है; क्योंकि उन्होंने सदा समाज को रचनात्मक-कौशल हेतु प्रेरित किया है। उनके जीवन का वह भाग जिसमें उनके तप और त्याग देखने मिले हैं, वह श्रमण-संस्कृति का श्रेष्ठ उद्घोष करता है, उनका मौन व्रत उतना ही प्रिय प्रतीत होता था जितना स्वाध्याय का क्षण। वे धीर-वीर-गंभीर और परम प्रतापी आचार्य थे, जिन्होंने अपनी करुणा के माध्यम से संसार के समक्ष कल्याण का प्रशस्त-पथ उद्घाटित किया था।

आचार्य भरत सागर का कृतित्व -

उन्होंने अपनी प्रज्ञा का उपयोग भले ही बड़े-बड़े ग्रंथ लिखने में नहीं किया हो, किन्तु उनकी प्रज्ञात्मक दिशा निर्देश बड़े-बड़े ग्रंथों के प्रकाशन एवं संपादन में महान सहयोगी रही है। आचार्य विमल सागर की 75वीं जन्म जयंती पर जो ग्रन्थ प्रकाशित किए गए थे, उन सबके पार्श्व में आचार्य भरत सागर जी की प्रज्ञा कार्य कर रही थी। उन ग्रंथों के ऊपर भले ही पृथक-पृथक साधुओं क नाम उल्लखिति हो; लेकिन संपादकों ने अपने कथ्य में आचार्य भरत सागर जी की प्रेरणा का स्पष्ट उल्लेख किया है। वे ऐसे साहित्याचार्य थे जिन्होंने अपनी लेखनी से कम किन्तु अन्य की लेखनी से अधिक प्रकाश फैलाया था। सच है, जो व्यक्ति साहित्य लिखता है वह साहित्यकार है जो साहित्य और साहित्यकार के संवर्धन में योगदान देता है।

आचार्य भरत सागर जी ने छह लघुकाय पुस्तके लिखी हैं जिनके माध्यम से साहित्य के साथ-साथ अध्यात्म का धरातल भी दृढ़ हुआ है। उन पुस्तकों के नाम है-

1. वीर-शासन-जयंती
2. अलौकिक दर्पण
3. धम्म-रसायण (हिन्दी टीका)
4. जिनाभिषेक
5. तिरने की कला
6. प्रशांत वाणी (प्रवचन कला)

आचार्य भरत सागर जी के उक्त कार्यों से ज्ञात होता है साहित्य और साहित्यकारों में उनकी गहन रुचि थी, वे अपनी पुस्तकों के माध्यम से साहित्य एवं साहित्यकारों के संरक्षक थे, आवश्यक नहीं कि वे अपनी लेखनी से उतरने वाले वाक्य ही साहित्य हों, वाणी से उतरने वाले शब्द भी शाश्वत् साहित्य की संरचना करते हैं। आचार्य श्री अपनी लेखनी और वाणी से पूर्ण साहित्यकार थे। साहित्य जगत की वर्तमान चकाचौंध और प्रचार से दूर वे साधक किस्म के साहित्यकार कहे जायेंगे। उनकी स्याही और वाणी ने आध्यात्मिक- प्रकाश प्रकीर्ण किया है। उनके साहित्य का उद्देश्य केवल आत्म कल्याण है।

दिगम्बर परम्परा के विशिष्ट आचार्य भरत सागर जी-

वर्तमान युग वैज्ञानिक युग कहलाता है, जहाँ एक तरफ विनाश की घोषणा होती है तो दूसरी ओर अमृतत्त्व की सुध जारी है। आचार्य भरत सागर जी ने अपनी सुध-सिंचित वाणी से सत्य और निस्पृहता की ऐसी धाराएँ प्रवाहित की हैं जो सर्वसाधारण के साथ-साथ वैज्ञानिकों को भी मोक्षमार्ग का पता बतलाती हैं। अतिक्लिष्ट सिद्धांत ग्रंथों की सरल व्याख्या कर उन्होंने हर प्राणी तक आगम का सार पहुचानें का श्रेष्ठ प्रयास किया है। मानवता के उदार मूल्यों एवं भारतवर्षीय विभिन्न संस्कृतियों का सुधा रस बाँटने में वे सफल रहे हैं। राष्ट्र में विगत 100 वर्षों में अनेक आचार्य हुए हैं, उनकी श्रृंखला में

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

कही कमतर सिद्ध नहीं हुए, क्योंकि उन्होंने जैनागम के सिद्धांतों और दिगम्बर मुनि चर्या का परिपालन पूर्ण शुद्धि से किया है, उन्होंने अपने आत्म कल्याण के लिए मुनिवाना स्वीकारा था, फिर ज्यों-ज्यों अध्यात्म में प्रवेश किया त्यों-त्यों जग कल्याण भी हुआ। जिस तरह कोई व्यक्ति अपने उपयोग के लिए दीपक जलाता है; किन्तु उसकी रोशनी से दूसरे लोग भी अपना कार्य साध लेते हैं। एक मायने में वे ऐसे ही दीपक थे, उन्होंने भक्ति के व्यापक रूप खुद तो पहिचाना ही, सर्व साधरण को भी अवगत कराया। नैतिक धारणाओं के वे सच्चे प्रेरक थे, न कभी अनीति से चले, न अपने सामने किसी को अनीति पर चलने दिया। इसी क्रम में उन्होंने सांस्कृतिक-मूल्यों की रक्षा की और जैन-संस्कृति का यथार्थ प्रचार-प्रसार किया। उनके जीवन दर्शन के वास्तविक सत्य की झलक सदा उनकी चर्या और वाणी से मिलती रही है। वे देश के किसी भी जनपद या प्रांत में रहें हों अपनी भाषा और बोलचाल की शैली पर अन्य का प्रभाव नहीं आने दिया। सदा सहज और मधुर वार्ता करते रहे अत: दिगम्बर जैन संतो के संसार में नित-नित अनुकरणीय रहे। वे सत्य का साक्षात्कार करने सत्य-मार्ग पर इतने आगे बढ़े कि स्वत: शाश्वत सत्य हो गए।

समकालीन सुनीतियों के आयोजक:आचार्य भरत सागर जी-

वे उस दानदाता को कभी उचित नहीं कहते थे जो अनर्गल रूप से प्राप्त विशाल धनराशि में से कुछ राशि धर्मिक कार्यों में लगाता था। जुआ खेलने वाले या लॉटरी के पक्षधर लोगों का दान भी वे आदर्श नहीं मानते थे। माँसाहारियों को शाकाहारी बन जाने को प्रेरित करते थे; किन्तु जो माँसाहार नहीं त्यागते थे उन्हें समीप नहीं आने देते थे। मद्य, मधु एवं तम्बाखू आदि के शौकीन जैनाजैन लोगों को वे सुनीति

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

का पाठ पढ़ाते हुए त्याग की प्रेरणा देते थे। देश की हजारों नारियाँ भी उनकी भक्त थीं; किन्तु वे सदा भ्रूण हत्या करने वाली नारियों के विरोध में ही बोलते रहे हैं। दहेज-प्रथा के दानव की विदाई करने के लिए वर-वधु के पालकों को उपदेश देते रहे हैं। सदा सुनीतियों को ही प्रश्रय दिया और कुरीतियों का भ्रम तोड़ा। महावीर के पाँचों सिद्धांत सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, आस्तेय और अपरिग्रह समाज में उतारने को उद्यत रहते थे। वे भगवान ऋषभदेव के सिद्धांतों का परिपालन करते हुए अपने उपदेशों की स्पष्ट घोषणा करते थे कि कृषक बनने के लिए खेत से चोरी मत करो, खेत खरीदो और कृषि करो, जो इतना नहीं कर सकते, वे ऋषि बने और धर्म नीतियों को नष्ट न करें। वे कहते थे कि नीति का भंजन व्यक्ति नहीं, उसकी लालसाएँ करतीं हैं अतः आदमी को लालसाएँ नहीं पालना चाहिए।

संसार से सार के यात्री :आचार्य भरत सागर जी -

आदमी को संवेदना ही उसे आदमी बनाए रहती है, संवेदनाओं से चुका हुआ आदमी सा लगता हो; किन्तु वह पूर्ण रूप से अमानव बन जाता है। यह अमानव राक्षस भी हो सकता है। आचार्य भरत सागर जी एक दो व्यक्ति में ही नहीं संसार के हर व्यक्ति में संवेदनाएँ देखना चाहते थे। वे स्वतः महान संवेदनशील व्यक्तित्व के धनी थे। अतः उन्होंने कभी संवेदनहीनता को स्थान नहीं दिया। यद्यपि वे जानते थे कि संवेदनशील व्यक्ति ही धार्मिक-उन्माद का शिकार बनता है, अतः वे लोगों को धार्मिक से बचते हुए जीवनयापन की रीति समझाते थे। उनकी शिक्षा थी कि सारा संसार एक कुटुम्ब की तरह रहे ताकि ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना को प्राण मिले। आदमी, आदमी के साथ आनंद से रहे, एक-दूसरे को ठग लेने का विचार न ला पाए; लेकिन संसार में रहते हुए वह इतना न रम जावे कि उसे 'सार' की याद

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

ही न रहे। व्यक्ति की सही यात्रा संसार से सार की ओर कही गई है। संसार और असार दोनों को ओझल करते हुए, केवल 'सार' की बात करते थे। यही कारण है कि जब उनकी समाधि हुई तो वे संसार से सार की ओर गए। निज घर की ओर गए। आत्मकल्याण की भावना से परिपूर्ण आचार्य श्री की संपूर्ण साधना सौभाग्यवती सिद्ध हुई है। वे लक्ष्य तक पहुँचने वाले यात्री सिद्ध हुए हैं।

साहित्य की दिशा में उनका चिंतन -

साधकों का साहित्य सदा अध्यात्म के धरातल पर चलाता है; क्योंकि उनके भीतर विभिन्न धर्मों और उनके लक्षणों की सुरक्षा के सूत्र घुमड़ते रहते हैं। चाहे वे दर्शन, ज्ञान, चारित्र से संबंध रखते हों या दस धर्मों से । फलतः उनकी वाणी जिनवाणी का खुलासा ही करती रहती है। ऐसे संत सरस्वती-पुत्र कहलाते हैं। उनका सारस्वत व्यक्तित्व सामान्य साहित्यकारों से पृथक होता है। आचार्य भरत सागर जी महाराज ने क्षुल्लक और मुनिपद में रहते हुए केवल साधना की और साधकों को सहयोग किया है, किन्तु जब वे उपाध्याय पद पर आरूढ़ हुए तो उनका प्राकट्य प्रखर साहित्यकार और साहित्य के शुभ-चिंतक तथा संरक्षक के रूप में सामने आया।

उनके सारश्वत-रूप की विराटता तब समझ में आई जब सन् 1950 में सिद्धक्षेत्र-सोनागिर जी पर पूज्य गुरुदेव विमलसागर जी का 75वीं जयंती महोत्सव मनाया गया था और 75 महत्पूर्ण ग्रंथों के संपादकों के संपादन की दिशा में मार्गदर्शन दिया था और भारी सूझबूझ के साथ 75 विशाल ग्रंथ प्रकाशित कराने के दिशा निर्देश दिये थे। इतना ही नहीं, इन्होंने शिक्षा, ज्ञान साहित्य और संस्कृति के उन्नयन हेतु 75 विद्यालयों की स्थापना की प्रबल प्रेरणा प्रदान की थी। इसी क्रम में 75 विद्वानों का सारश्वत सम्मान कराने में सफल रूपरेखा भी उन्होंने

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

ही दी थी। वे साहित्य के साथ-साथ संस्कारों की रचना पर भी ध्यान दे रहे थे अतः उसी समारोह में 75 युवकों को सप्त व्यसन त्याग कराए थे।

साहित्यकारों को सहयोग - एक कथन याद आ रहा है- ''दीपक मैं जलाऊँ या तुम पथिक को प्रकाश मिलना चाहिए।'' कुछ इसी भावना से वे साहित्य लिखते हुए अन्य-अन्य लोगों से साहित्य लिखा सके थे, क्रम सदा चलता रहा। इसलिए उन्होंने विद्वानों की एक संस्था-भारतवर्षीय अनेकांत विद्वत परिषद' की स्थापना कराई और चारों अनुयोगों के ग्रंथों पर स्वतंत्र टीकाएँ लिखवाईं जो बाद में संतों और श्रावकों के स्वाध्याय का हेतु बने।

छात्रों, योग्य साहित्य की संरचना- पूज्य भरतसागर जी चाहते थे कि छात्रगण जीवन एवं चारित्र निर्माण की सामग्री बिना खर्च पाते रहें, अतः उन्होंने विभिन्न-विद्वानों से प्रथमानुयोग से संबंधित ग्रंथों का संवर्धन कराया और छात्रों तक उनकी पहुँच सहज बनाई। इस क्रम में कथा साहित्य तो आया न्यायशास्त्र भी सामने लाए गए। काव्य की विभिन्न श्रेणियों को स्पष्ट कराने वाले- महाकाव्य, खण्डकाव्य, गद्यकाव्य एवं चारित्र काव्य भी प्रकाश में आ सके।

साहित्य के सच्चे संरक्षक - उक्त कथन पर दृष्टि डालते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि वे देश के विद्वानों द्वारा मान्य ''साहित्य संरक्षक'' घोषित कर दिए गए थे। उनके द्वारा प्रवर्तित साहित्य उपयोग में बहुमुखी लाभकारी सिद्ध हुआ। उनकी प्रेरणा से परिषद के विद्वानों द्वारा लिखित धार्मिक संस्करण संपूर्ण देश ने हाथों हाथ लिए भाग-1 से भाग-4 तक के संस्करण आज भी पाठशालाओं में गौरव पूर्वक पढ़ाए जा रहे हैं। इतना ही नहीं, उनकी प्रेरणा से नैतिक संस्कार के भी तीन भाग प्रकाश में आए थे जो सर्वोपयोगी सिद्ध हुए।

देश के साधुओं के लिए उन्होंने ग्रंथराज मूलाचार जी का भी प्रकाशन कराया था जो संतों की बाजोट पर आज भी शोभा बिखेर रहे है। संतों को मूलाचार का स्वाध्याय सहज हो गया।

एक मायने में उन्होंने मात्र श्रमण या श्रमणी, श्रावक या श्राविका के लिए मात्र नहीं किया, समाज के संपूर्ण अंगों के लिए प्रकाशन कार्य कराया जो अद्वितीय सिद्ध हुआ। लोग यहाँ-वहाँ से व्यापारिक स्तर पर छापी गई जिनवाणी-ग्रंथ प्रकाशित कराए और समाज को साहित्य और संस्कृति का शुद्ध परिचय कराया।

पदवियों की उत्कृष्ट चर्चा-

पूज्य भरत सागर जी अपने समय के पाँच स्वरूपों में हमारे समक्ष रहे हैं। प्रथम स्वरूप था उनका- एक लगनशील युवक का, द्वितीय स्वरूप में वे क्षुल्लक जी के बाना में समाज के समक्ष आए, तृतीय स्वरूप दिगम्बर जैन मुनि का था,चतुर्थ स्वरूप में वे अध्ययन कराते हुए उपाध्याय पद पर दिखे और पाँचवा स्वरूप था उनका- आचार्य परमेष्ठी का। हम नहीं कहते हैं कि वे किस स्वरूप में सर्वश्रेष्ठ थे; किन्तु हम इतना जान पाए हैं कि दिगम्बर संत के रूप में जिसमें मुनि उपाध्याय और आचार्य का बाना समाहित है, वे अतिश्रेष्ठ संत सिद्ध हुए हैं। संतों की तुलना नहीं की जाती, संत सदा संत ही होते हैं, जिस तरह चोखा सोना स्वर्ण मुद्रिका का एक अंश हो या अनेक सोना, सोना ही होता है , उसे हम अच्छा सोना सर्वश्रेष्ठ सोना नहीं कह पाते। आचार्य भरत सागर जी देश के संत समूह में ऐसे ही स्वर्ण-खण्ड रहे हैं। तत्कालीन समाज ने उनकी चर्या की शुद्धि की झलक और तप की कठोरता देखते हुए, समय-समय पर अनेक उपाधियाँ दी थीं, जिन्हें हम अलंकरण कह सकते हैं। उन्हें स्पष्ट करना यहाँ समय सापेक्ष-सत्य प्रतीत होता है, अस्तु -

ज्ञान-दिवाकर – सबसे पहले अनेक ज्ञान ने समाज को प्रभावित किया था यही कारण था कि सन् 1980 में नीरा (महाराष्ट्र) के वर्षायोग के समय वहाँ के सकल समाज ने उन्हें ज्ञान दिवाकर अलंकरण देकर खुद को धन्य किया था।

प्रशांत-मूर्ति – उनके व्यवहार की सुकुमालता और चेहरे की सौम्यता भी भक्तों को प्रभावित करती थी यही कारण है कि अतिशय तीर्थ क्षेत्र हस्तिानापुर प्रवास के समय सन् 1987 में भक्तों ने उन्हें प्रशांत मूर्ति की पदवी दी थी।

वाणी-भूषण – उनके बोलने का ढंग और प्रवचन की शैली भक्तों का हृदय छू लेती थी। मीठी आवाज में ललित शब्द सुनकर लोगों के कानों में मिश्री घुल जाती थी अत: जब वे सन् 1988 में तीर्थ क्षेत्र अंदेश्वर पार्श्वनाथ में प्रवचन कर रहे थे तब प्रबुद्ध भक्तों ने उन्हें वाणी-भूषण जैसे उदात्त शब्दों से अलंकृत किया था।

भुवन-भास्कर – जब संत का व्यक्तित्व चहुमुखी प्रतिभाधारण कर सूर्य की तरह चमक बिखेरने लगता है तो समीपी भक्तगण कोई महत्त्वपूर्ण विशेषण देने लगते हैं। आचार्य श्री भरत सागर जी सन् 1996 में जब पैठंरवार में प्रभावना कर रहे थे तब वहाँ श्वेताम्बर मुनि श्रद्धेय श्री जगजीवन महाराज चुप न रह सके और उन्होंने भक्तों के विशाल समूह के साथ 'भुवन-भास्कर' अलंकरण प्रदान किया।

न्यायमारतंड – संत का हर कदम न्याय मार्ग पर होता है। आचार्य श्री भरत सागर जी अपनी वाणी और व्यवहार का प्रयोग 'नीर-खीर-विवेक' के धरातल पर करते थे। उनकी जानकारी में कभी किसी श्रावक संत या शिष्य के प्रति अन्याय नहीं हो पाया। उनकी इस दृष्टि को बालाचार्य श्री योगेन्द्रसागर जी महाराज अच्छी तरह परख चुके थे अत: सागवाड़ा- प्रवास के समय उन्होंने आचार्य भरत सागर

जी के दर्शन भर नहीं किए, भक्त-समूह के साथ 'न्यायमारतंड' का अलंकरण भी इन्हें दिया। वह 31 जनवरी 2004 का पावन दिवस था। उसी दिन समाज ने भरतसागर जी का 10वां 'आचार्य-पदारोहण-दिवस' मनाया था ।

कालांतर में अन्य-अन्य समाजों ने पदवी देने का क्रम निरंतर रखा फलतः किसी नगर ने उन्हें 'समता मूर्ति' कहा तो किसी नगर के विद्वानों के समूह ने 'सिद्धांत वारिधि' कहा। जब जीवनभर उपसर्गों को झेलते हुए साधना का क्रम अखण्ड रखा, तो भक्त-समाज ने उन्हें गौरव पूर्वक 'उपसर्ग विजेता' कहा। इतना ही नहीं, उनकी अनेक भविष्य वाणियों को साकार होते देखने वाले भक्तों ने उन्हें 'निमित्त ज्ञानी' कह कर संबोधित किया।

उपसर्ग - विजेता और निमित्त ज्ञानी विशेषणों का अपना एक आधार है। पहले उन पर आए उपसर्गों और परिषहों की चर्चा करें।

उपसर्गों के क्रम -

पहला : जब वे क्षुल्लक थे तब डाकू अथवा चोरों ने उन्हें कुएँ में ढकेल दिया था, उन्हें करीब 7 घंटे तक कुएँ में रहना पड़ा और जब श्रावकों ने उन्हें निकाला तो वे सकुशल बाहर आए थे और इस तरह प्रथम उपसर्ग पर विजय पाई थी।

दूसरा : सन् 2001-2002 का प्रसंग है, उनकी वाणी चली गई थी, गले से एक शब्द भी अधरों तक नहीं पहुँच पाता था। तब वे वैसी ही हालत में विहार करते हुए बाराबंकी पहुँचे थे और चातुर्मासिक-साधना की थी। वहाँ ही दीपावली के अवसर पर प्रतिक्रमण करते-करते उनकी वाणी लौट आई थी। कुल 11 माह मौन रहकर निकाले थे, मगर गत जीवन के कर्म अधिक संघर्ष नहीं कर सके। और लौट पड़े। विजय हुई वाणी की।

तीसरा : एक लघु प्रसंग है, जब वे उदयपुर में थे (अप्रैल 2006) तब अचानक आवाज चली गई, गला रुँध गया फलतः न शब्द बाहर आते, न आहार भीतर जाता। 4 दिन निकल गए। समय था 2 अप्रैल से 5 अप्रैल का, वैसी ही स्थिति में भक्तों ने उनका 58वाँ जन्मदिन मनाया आचार्य श्री ने मौन रहते हुए सभी को आशीर्वाद भी दिया। मगर जब सभा-भवन (टाउन हाल) से वापिस वसतिका में आए तो उनकी आँखों में दिखना बंद हो गया। करीब 24 घंटे तक आँखें कुछ देख न सकीं, वे तख्त पर थमें रह गए। मगर स्वाध्याय, सामायिक करते रहे। भक्तों ने मंदिर में शांति-स्तवन का अखण्ड-पाठ किया। दूसरे दिन उन्हें दिखने लगा, वाणी भी लौट आई। यह थी उनकी उपसर्ग पर तीसरी विजय ।

चौथा : तीर्थ वंदना हेतु वे तीर्थ-क्षेत्र अणिंदा पार्श्वनाथ गए। 27 मई 2006 को क्षेत्र पर पहुँचे, अचानक उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। धीरे-धीरे वर्षायोग का समय आ गया 14 जुलाई को स्थापना की जानी थी, उसी दिन करीब 11 बजे उनकी वसतिका में अग्नि का उपसर्ग हुआ। कुछ ही देर में अग्नि शांत हो गई। आचार्य श्री ने 4 माह का मौन-व्रत धारण कर लिया। मात्र स्थापना विधि के अवसर पर चातुर्मासिक-प्रतिक्रमण बोला। सभी कार्य निर्विघ्न होते गए, यह उनकी चतुर्थ जीत थी।

उक्त चार उपसर्गों के अतिरिक्त उनके जीवन काल में अनेक परिषह भी हुए और उन्होंने शांतिपूर्वक सहे, विचलित नहीं हुए अतः उन्हें 'उपसर्ग-विजेता' कहा जाना शत-प्रतिशत उचित है।

निमित्तज्ञानी की अवधारणा - जैसा कि ऊपर अभी चर्चा में आया कि लोग उन्हें निमित्तज्ञानी भी कहते थे, लोगों की इस धरणा को पुष्ट करने वाले कुछ प्रसंग दृष्टि में आए हैं, जो इस तरह हैं-

सन्1984 : पूज्य भरत सागर जी अपने गुरुदेव पूज्य आचार्य

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

विमल सागर जी का अणिंदा में गुरुदेव का 'जन्मोत्सव' मना रहे थे। विद्युत-व्यवस्था छिन्न-भिन्न थी अत: लोग बिना माइक के बोल रहे थे। जब पूज्य विमल सागर जी का क्रम आया तो भरत सागर जी ने संयोजक से कहा- आप माइक गुरुदेव के समक्ष रखिए, वे बोलेंगे तो विद्युत आ ही जावेगी। झिझकते हुए संयोजक ने माइक विमल सागर जी के समक्ष रख दिया। जब उन्होंने मंगलाचरण शुरु किया तो दूसरी पंक्ति तक पहुँचते-पहुँचते विद्युत आ गई माइक चालू हो गया। यह घटना चमत्कार नहीं है, न ही निमित्तज्ञान की परिभाषा पुष्ट करने में समर्थ है, फिर भी आभास कराती है कि पूज्य भरत सागर जी को पूर्व में ही कुछ आभास हो जाता है।

सन् 2005 : प्रसंग बाँसवाड़ा का है। कुशल बाग मैदान में भरत सागर जी के सान्निध्य में दीक्षाएँ दी जा रही थीं। हजारों लोग उपस्थित थे। तभी तेज बारिश हुई। क्रम काफी देर तक चला, लोग गीले हो गए। कुछ लोग यहाँ वहाँ बैठने लगे, तब भरतसागर जी ने संबोधन दिया- मैदान में निर्मित दीक्षा-स्थल के पास खड़े होइए। वहाँ पानी नहीं बरसेगा। लोग दौड़कर उस तरफ चले गए। सभी जन आश्चर्य में थे कि चारों ओर भीषण वर्षा हो रही है, किन्तु दीक्षा-स्थल पर एक बूँद भी नहीं गिरी। यह घटना भी उनके पूर्वाभास को पुष्ट करती है।

सन् 2006 : प्रसंग अणिंदा चातुर्मास का है। कुछ कार्यकर्त्ता आचार्य श्री से बतिया रहे थे- महाराज सामान्य दिनों में यहाँ ज्यादा भीड़-भाड़ नहीं होती; किन्तु दीपावली पर कुछ अधिक ही हो जाती है तब आचार्य श्री ने कुछ विचार किया, फिर राज को छिपाते हुए, मंद स्वर में बोले-इस बार दीपावली में क्षेत्र पर इतनी अधिक भीड़ होगी कि चींटी के लिए भी स्थान नहीं बचेगा। उस समय कार्यकर्त्तागण कुछ समझ नहीं पाए; किन्तु जब दीपावली को आचार्य श्री की

समाधि हुई तो सही में इतनी विशाल भीड़ थी कि क्षेत्र के प्रांगण में, दहलानों में और कमरों में पैर रखने की जगह नहीं बची थी। कार्यकर्त्ताओं को समझ में आ गया कि पूज्य आचार्य श्री को आभास था कि दीवाली पर उनकी समाधि होगी और विशाल जन-समुदाय आयेगा।

ये कुछ सार्वजनिक प्रसंग हैं ही, कतिपय व्यक्तिगत प्रसंग भी लोगों से सुनने मिल जाते हैं। अतः इन आभासों को दृष्टि में रखते हुए कहा जाता है कि वे निमित्त ज्ञानी थे।

संस्कृति के सच्चे संरक्षक की -मंदिरों के प्रति दृष्टि-

आचार्य भरत सागर जी अपने गुरुदेव के साथ मंदिर निर्माण और जीर्णोद्धार के कर्त्तव्य को अच्छी तरह समझ चुके थे अतः उन्होनें जीवन में हर समय मंदिरों के हित में निर्णय लेने में बिलंब नहीं किया। उनकी प्रेरणा से, सान्निध्य से समाज में 'निर्माण-क्रांति' का जागरण हुआ। फलतः अनेक स्थानों पर नूतन-देवालय बनाए गए तो उनसे अधिक स्थानों पर शाला-भवन आदि निर्मित किए गए।

उनमें से कुछ स्थान दृष्टव्य हैं- तीर्थक्षेत्र श्री मंदार गिरि, तीर्थक्षेत्र श्रीचम्पापुर, तीर्थक्षेत्र श्री कल्हवापहाड़ तीर्थक्षेत्र श्री पारसगिरि, तीर्थक्षेत्र श्री नीमिया घाट, श्री आनंद पुरी (आनंदूपि), कानपुर, पाकपीरा, गिरीडीह, तीर्थक्षेत्र करगुवां जी, अहिजाम, खमेरा, भूंगडा, रीछा, पारेल, गनौड़ा, बाराबंकी, बथई आदि खुद उनके सान्निध्य की कहानी कह रहे हैं इसी क्रम में अतिशय क्षेत्र लोहारिया स्थित गोम्मटगिरि का निर्माण, विशाल-कार्य माना जाता है, जिसमें एक गुरुकुल भी शामिल है।

पूज्य भरत सागर जी ने आदमी में आदमियत स्थापित करने का कार्य भी किया है। जिस तरह पाषाण को भगवान बनाया, उसी तरह सामान्य आदमी को उत्तम-श्रावक भी बनाया। इसके लिए उन्होंने हर

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

वर्ष विभिन्न आयोजन किए-कराए, कहीं पंचकल्याणक महोत्सव,कहीं विधान, कहीं शिलान्यास, कहीं शिविर और कहीं अहिंसा रैली का आयोजन। इन सब का वर्णन अनेक पन्नों में रूप ले सकता है; किन्तु वह यहाँ आवश्यक प्रतीत नहीं होता ।

पू. भरतसागर जी की संस्कृति-निर्माण की भावना और प्रेरणा पर प्रो. नलिन शास्त्री जी ने अल्प शब्दों में स्पष्ट किया है- पू. आचार्य गुरुवर 108 विमलसागर जी महाराज के सान्निध्य में निर्मित जिनायतनों में आगमानुकूल योगदान देते रहे। गुरुवर वात्सल्य रत्नाकर108 आचार्य गुरुवर श्री विमल सागर जी महाराज की समाधि ा उपरान्त श्री सम्मेद शिखर जी में निर्मित तीस चौबीसी- जिनालय एवं विमल- समाधि स्थल का निर्माण एवं प्रतिष्ठा आपके सान्निध्य एवं दिशा- निर्देशन में सम्पन्न हुई। इसके पश्चात लोहारिया (राज.) में निर्मित भव्य जिनालय (अनेकान्त गोमटगिरि) का निर्माण एवं प्रतिष्ठा भी आपके द्वारा कराई गई। इनके अतिरिक्त भी, समय-समय पर आपके सान्निध्य में धर्मप्रभावना के अनगिनित महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुए हैं।

समकालीन साधुओं और शिष्यों के प्रति अगाढ़ श्रद्धा-

यों तो हर संत वात्सल्य और करुणा का धनी होता है; किन्तु आचार्य भरत सागर का सम्पूर्ण जीवन वात्सल्य और करुणा पूर्ण रहा है। वे प्रयास करके वरिष्ठ संतों से मिलने और समाचारी करने का समय निकालते थे और उन्हें अपने वात्सल्य से सराबोर कर देते थे। उनके समक्ष जो संत आते थे उनसे भेद भाव नहीं रखते थे, पद के अनुकूल निर्वाह करते थे। संतों की वैयावृत्ति कर वे प्रसन्नता महसूस करते थे। कई संतों ने उनके इस व्यवहार को इतना उत्तम माना कि वे भी अन्य-अन्य संतों की वैयावृत्ति करने का समय निकालने लगे ।

इसी तरह शिष्यों के प्रति राग नहीं, अनुराग रखते थे। कभी किसी को डांटते भी तो ऊँचे स्वर में, ताकि वह दुखी न हो पावे, किन्तु प्रेरणा ग्रहण करें। संत हो या शिष्य सब के प्रति उनकी भावना रहती थी कि वे सब अपने भाग्य का पा रहे हैं, हम बीच में आकर तेरा-मेरा क्यों करें? उनकी यह भावना और संतो के प्रति व्यवहार देखते हुए, यदि कोई उन्हें वात्सल्य कहता तो उचित ही होता ।

समाधि साधक -

आचार्य श्री ने अपने जीवनकाल में अनेक भव्य-आत्माओं को समाधि प्रदान कराई थी जिससे वे सफल निर्यापकाचार्य माने जाते हैं। पाठकों ने पिछले पन्नों में समाधियों के वृत्तांत पढ़े हैं, अस्तु। गौरव की बात यह भी है कि अन्य को सल्लेखना प्रदान करने वाले आचार्य भरत सागर जी ने स्वत: के लिए भी सल्लेखना धारण की थी, जब अणिंदा में महावीर स्वामी का निर्वाण-दिवस मनाया जा रहा था, तब आचार्य श्री ने संकेत के माध्यम से स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि वे समाधि में प्रवृत होंगे और हुआ भी। कुछ समय में सबके समक्ष उनकी समाधि ा-साधना स्पष्ट भी हुई थी, अत: हम उन्हें बोलचाल की भाषा में भक्तगण उन्हें कई वर्ष तक 'समाधि सम्राट' कहते रहे हैं,यह उनकी साधना का यथार्थ है।

शिष्य परिकर -

पूज्य आचार्य भरत सागर जी के कर कमलों से जिन दीक्षार्थियों ने समय-समय पर दीक्षा प्राप्त की है, उनकी जानकारी इस तरह है-

1. पूज्य मुनि108 श्री स्वयंभू सागर जी महाराज,
   जन्म : फिरोजाबाद, क्षुल्लक दीक्षा-चैत्र शुक्ल पंचमी सं. 2151,

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

मुनि दीक्षा : 17 अप्रैल 1995

2. पूज्य मुनि 108 श्री चम्पापुर सागर जी
   जन्म : लोहारिया, क्षु. दीक्षा: 31 अगस्त 1996
3. पूज्य मुनि108 श्री अंतरात्मा सागर जी
   जन्म : सुजानगढ़ , मुनि दीक्षा : 8 अगस्त 1997
4. पूज्य मुनि श्री 108 निर्विकल्प सागर जी महाराज
   जन्म : सीकर, ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा वि. सं. 1971
   क्षु. दीक्षा: ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी, 17 मई
   मुनि दीक्षा: श्रावण कृष्ण सप्तमी, 16 जुलाई1981
   समाधि : 22 जुलाई 1998, श्री सम्मेद शिखर जी
5. पूज्य मुनि श्री 108 श्रवण सागर जी महाराज।(परिचय अप्राप्त)
6. पूज्य मुनि श्री 108 ओम सागर जी महाराज
   जन्म : औरंगाबाद, 5 मई 1957, ब्र. : आचार्य श्री संभव सागर जी, 1997। सात प्रतिमा: सन् 1996 , क्षु. दीक्षा : 23 जनवरी 2002, मुनि दीक्षा : 6 फरवरी 2003, सोनागिर जी में ।
7. पूज्य मुनि श्री 108 अणिंदा सागर जी महाराज
   जन्म : मुंगेड़ (डूंगरपुर) वैशाख शुक्ल तृतीया सन् 1990,
   क्षु. दीक्षा : वैषाख शुक्ल षष्ठी, वि.सं. 2060,
   मुनि दीक्षा: श्रावण शुक्ल सप्तमी , 2061 कुचामन।
8. पूज्य मुनि 108 श्री शरद पूर्णिमा सागर जी महाराज
   जन्म : रसाल (नागौर) माघ कृष्ण त्रयोदशी वि. सं. 1987,
   मुनि दीक्षा : आसोज, शुक्ल पूर्णिमा वि. सं. 2061 कुचामन

9. पूज्य मुनि 108 श्री पंचकल्याणक सागर जी महाराज

जन्म : मेतवाला, ज्येष्ठ शुक्ल वारस, वि. सं. 2012

मुनि दीक्षा : वैशाख शुक्ल दशमी, 18 मई 2005 लोहारिया पंचकल्याणक के अवसर पर।

10. पूज्य मुनि 108 श्री तपकल्याणक सागर जी महाराज

जन्म : गोधनापुर (महाराष्ट्र) 10 अक्टूबर 1992,

मुनि दीक्षा : वैशाख शुक्ल दशमीं, 18 मई 2005, लोहारिया , समाधि : 4 अक्टूवर 2007

इनकी समाधि अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी, मंदिर प्रांगण में पूज्य आचार्य चैत्य सागर के निर्यापकाचार में सम्पन्न हुई।

11. पू. मुनि 108 श्री विशद सागर जी महाराज

जन्म : कुपी (छतरपुर, म.प्र.) चैत्रकृष्ण चतुर्दशी, वि. सं. 2021, तदनुकूल दि. 11 अप्रैल, 1964

मुनिदीक्षा : 8 फरवरी 1996, अतिशय तीर्थ क्षेत्र द्रौणगिरि (म. प्र.) में आचार्य पद: 13 फरवरी 2005, (बसंत पंचमी, वि.सं. 2062) मालपुरा (राज.) में, प्रतिष्ठितकर्ता: पू.आचार्य 108 भरत सागर जी महाराज।

12. पू. मुनि 108 श्री गिरिनार सागर जी महाराज

जन्म : कारंजा (महाराष्ट्र) 7 जुलाई 1971,

मुनि दीक्षा : नागपंचमी वि. सं. 2062 , सन् 2005 बांसवाड़ा।

(ये मुनिवर आचार्य श्री के अंतिम शिष्य थे)

आर्यिका दीक्षाएँ -

1. पूज्य गणनी, आर्यिका 105 स्याद्वादमति माताजी

जन्म : इन्दौर

आर्यिका व्रत : आचार्य री विमल सागर जी से,

गणिनी पद : सन् 2002, इंदौर गौम्मटगिरि। पू. भरत सागर जी द्वारा

2. पूज्य आर्यिका 105 श्री विचित्रमति माताजी (ब्र. चित्रा बाई दीघे)

जन्म : हुपरी (दक्षिण भारत)

आर्यिका दीक्षा: श्रावण कृष्ण ग्यारस, 30 जुलाई 1998

समाधि : श्री सम्मेद शिखर जी 1998।

3. पूज्य आर्यिका 105 श्री (नाम की जानकारी नहीं है)

जन्म : रुकड़ी (महाराष्ट्र) 31 अप्रैल 1938

क्षु. दीक्षा: सन् 1972 राजगृही में आचार्य विमल सागर जी से

आर्यिका दीक्षा : 10 मार्च 2003 गुना में, आचार्य भरत सागर जी से ।

4. पूज्य आर्यिका 105 श्री सिद्धांत माता जी

जन्म : नांदगाँव (नासिक)

क्षु. व्रत : 1986 में आचार्य विमल सागर जी से सोनागिरि में।

आर्यिका दीक्षा: आषाढ़ शुक्ल अष्टमी वि. सं. 2060, 7 जुलाई 2003, लोहारिया में , आचार्य भरत सागर।

5. पूज्य आर्यिका 105 श्री उद्धारमति माता जी

जन्म : लोहारिया, आसोज शुक्ल एकम् वि. सं. 2021।

ब्र. व्रत : 9 अक्टूवर 1984, आचार्य सन्मति सागर जी से (तपस्वी सम्राट), सात प्रतिमा : 28 नम्बर 2002 बारावंकी, आचार्य भरत सागर जी से।

आर्यिका दीक्षा: आषाढ़ शुक्ल अष्टमी, 7 जुलाई 2003 लोहारिया में आचार्य भरत सागर जी से ।

7. पू. आर्यिका 105 श्री गोम्टेश्वर मति माता जी

जन्म : धनगाँव (महाराष्ट्र), 1 जून 1948

ब्र. व्रत: आचार्य देशभूषण महाराज से, सांगली

आर्यिका दीक्षा: आषाढ़ शुक्ल अष्टमी, 7 जुलाई 2003 लोहारिया में आचार्य भरत सागर जी से

8. पू. आर्यिका नंदीश्वरमति माता जी

जन्म: आसोज कृष्ण द्वादशी,रविवार, 1नम्बर 1964, लोहारिया

पिताश्री अमृतलाल नायक, माता - श्रीमति बादामी देवी नायक

गृहस्थ अवस्था का नाम: कु. उर्मिला नायक; 6 बहनें 3 भाई

शिक्षा: जैन दर्शन शास्त्री, जयपुर ,

ब्र. व्रत कार्तिक शुक्ल तेरस, सन् 1985, आचार्य विमल सागर जी से, लोहारिया में सात प्रतिमा : फाल्गुन शुक्ल अष्टमी गुरुवार, 11 मार्च 2003, गुना में आचार्य भारत सागर जी से।

आर्यिका दीक्षा : आषाढ़ शुक्ल अष्टमी 7 जुलाई 2003 सोमवार लोहारिया स्थित बाहुवली प्रांगड़ में, तीर्थंकर नेमिनाथ के मोक्ष कल्याणक दिवस पर आचार्य भरत सागर जी से।

9. पू. आर्यिका 105 श्री अंदेश्वरमति माता जी

जन्म : भीमपुर, वि. सं. 1988

ब्र. व्रत : 27 वर्ष की उम्र में पू. मुनि विनय सागर जी से

आर्यिका दीक्षा : आषाढ़ शुक्ल अष्टमी, 7 जुलाई 2003 लोहारिया में, आचार्य भरत सागर जी

10. पू. आर्यिका 105 श्री पंचमेरु मति माता जी

जन्म: भीमपुर, वि.सं. 1988 , ब्र. व्रत: पू. मुनि श्री विनय सागर जी महाराज से

आर्यिका दीक्षा : आषाढ़ शुक्ल अष्टमी 7 जुलाई 2003 लोहारिया में, आचार्य भरत सागर जी से।

11. पू. आर्यिका 105 श्री श्रुत पंचमी माता जी

जन्म: लोहारिया, आखातीज सन् 1930,

ब्र. व्रत : वि.सं. 2038 में पूज्य आचार्य धर्मसागर जी से

आर्यिका दीक्षा : श्रुतपंचमी वि. सं. 2061, किशनगढ़ में आचार्य भरत सागर जी से।

12. पूज्य आर्यिका 105 श्री आनंदमति माता जी

जन्म : नागौर, भाद्रपद शुक्ल अष्टमी

ब्र. व्रत : तीर्थक्षेत्र मांगीतुंगी में, आर्यिका श्रेयांसमति माता जी से

क्षु. दीक्षा : मोक्ष सप्तमी 1993, आचार्य विमल सागर जी से।

आर्यिका दीक्षा : श्रावण शुक्ल सप्तमी वि. सं. 2061 रविवार, कुचामन सिटी में, आचार्य भरत सागर जी से

13: पूज्य आर्यिका अयोध्यामति माता जी

जन्म : धरियावाद (उत्तर प्रदेश)

ब्र. व्रत : आचार्य सुबाहु सागर जी से सन् 1981 लखनऊ में

क्षु. दीक्षा : सन् 2002, लखनऊ आचार्य भरत सागर जी से

आर्यिका दीक्षा: श्रावण शुक्ल सप्तमी सन् 2004, कुचामन सिटी, आचार्य भरत सागर जी से।

14: पू. आर्यिका 105 शरद पूर्णिमामति माता जी

जन्म : अजमेर (राजस्थान) वि. सं. 1997

ब्र. व्रतः स्वयं मंदिर में,

आर्यिका दीक्षा : आसोज शुक्ल पूर्णिमा (शरद पूर्णिमा) वि. सं. 2061, कुचामन सिटी

15: पू. आर्यिका 105 श्री गिरनारमति माता जी (अंतिम शिष्या)

जन्मः बांसवाड़ा, सन् 1947,

ब्र. व्रत : सन् 1981, आचार्य धर्म सागर जी से

आर्यिका दीक्षा : श्रावण कृष्ण पंचमी वि.सं. 2062 (सन् 2005 बांसवाड़ा)

ब्रह्मचारीगण

1. ब्र. राजकुमार गंगवाल, धनवाद, 2002
2. ब्र. नमन भैया, भिण्ड, 2002
3. ब्र. सुनील भैया, कुचामन 2004
4. ब्र. रिवेश भैया, बांसवाड़ा 2005

ब्रह्मचारणी बहनें

1. ब्र. करुणा दीदी, लोहारिया, आषाढ़ शुक्ल अष्टमी, 2003
2. ब्र. अनुकंपा दीदी, बांसवाड़ा, आषाढ़ शुक्ल अष्टमी 2003
3. ब्र. इंदुवाला दीदी, चंदु जी का गढ़ा आषाढ़ शुक्ल अष्टमी 2003
4. ब्र. डिम्पल दीदी, भीमपुर, सन् 2004

उक्त त्यागि-व्रतियों की सूची पूर्ण हो गई हो किन्तु आचार्य भरत सागर जी के प्रभावना-काल में सहस्रों श्रावकों श्राविकाओं ने उनके प्रवचनों एवं दैनिक चर्या से प्रभावित होकर अनेक व्रत धारण किए थे, जिनका नाम लिखना असंभव है। इसी तरह हजारों जैनेत्तर भाईयों ने उनकी प्रेरणा से मधु, मांस, मद्य का आजीवन त्याग कर शाकाहार का संकल्प लिया था। जिसकी सूची भी नहीं बनाई जा सकती। व्रत या दीक्षा देने के पार्श्व में भी उनकी सर्जना काम करती रही है। तभी तो पूज्य भरत सागर जी के सर्जना-संसार पर दृष्टिपात करते हुए प्रो. डॉ. नलिन के. शास्त्री ने एक स्थल पर लिखा है- आपने संयमित एवं मर्यादित आचरण से ऐसे प्रतिमानों का सृजन किया है जो अप्रतिमान होते हुए भी सर्वजन अनुकरणीय हैं वंदनीय है। जिन्होंने गुरु-शिष्य के पवित्र आत्मीय सम्बन्धों को पुनः आचरित/परिभाषित कर गुरुकृपा और वात्यल्य का संचार कर सुषुप्त मानवीय चेतना को ऊर्जास्वित किया और अनुपम-आदर्श-जगति के समक्ष प्रस्तुत किया। जिनकी साधना-आराधना एवं प्रभावना को स्मरण कर जन मानस का मस्तक स्वतः ही उनके पाद-पदमों की अभिवंदना/अभिअर्चना हेतु तत्पर हो जाता है। जिनके वचन, संबोधन स्मित-हास्य और अभय (वात्सल्य) मुद्रा के दर्शन से प्रत्येक श्रद्धालु रोमांचित/प्रफुल्लित हो जाता है। जो प्रतिकूल संयोगों में भी निरंतर धीर-वीर-गंभीर रहकर अपनी चर्या और चर्चा से जनमानस को समत्व और निर्ममत्व का दिग्दर्शन कराते थे, जिन्होंने सिर्फ परायण ही नहीं; अपितु अपने निर्ग्रंथ स्वरूप को अपने आदर्श-जीवन से ग्रंथ रूप साकार कर, दिगम्बर-जगति को आचरण, अनुशासन और ज्ञान का अनुपम उपहार प्रस्तुत किया, जो जन साधरण के लिए उनका अक्षय वरदान है।'

चातुर्मासिक-प्रभावना के केन्द्र

(पू. गुरुदेव आचार्य विमल सागर जी के साथ)

क्रम	सन्	नगर/क्षेत्र	प्रान्त	विशेष
		क्षुल्लक अवस्था में		
1.	1968	सुजानगढ़	राजस्थान	
2.	1969	पहाड़ीधीरज	दिल्ली	
3.	1970	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड	
4.	1971	सिद्धक्षेत्र राजगृही	झारखंड	
		मुनि अवस्था में		
5.	1972	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड	
6..	1973	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड	
7.	1974	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड	
8.	1975	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड	
9.	1976	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड	
		उपाध्याय अवस्था में		
10.	1977	टिकैत नगर	उत्तरप्रदेश	
11.	1978	सिद्धक्षेत्र सोनागिरि जी	मध्यप्रदेश	
12.	1979	सिद्धक्षेत्र सोनागिरि जी	मध्यप्रदेश	
13.	1980	नीराजी (पूना)	महाराष्ट्र	
14.	1981	सिद्धक्षेत्र श्रवणवेलगोला	कर्नाटक	
15.	1982	पोदनपुर(मुम्बई)	महाराष्ट्र	

16.	1983	औरंगाबाद	महाराष्ट्र
17.	1984	सिद्ध क्षेत्र गिरनार	गुजरात
18.	1985	लोहरिया	राजस्थान
19.	1986	फिरोजाबाद	उत्तरप्रदेश
20.	1987	अतिशयक्षेत्र खानियाँ (जयपुर)	राजस्थान
21.	1988	सिद्धक्षेत्र सोनागिरी जी	मध्यप्रदेश
22.	1989	सिद्धक्षेत्र सोनागिरी जी	मध्यप्रदेश
23.	1990	सिद्धक्षेत्र सोनागिरी जी	मध्यप्रदेश
24.	1991	सिद्धक्षेत्र सोनागिरी जी	मध्यप्रदेश
25.	1992	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झाारखंड
26.	1993	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड
27.	1994	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड

पूज्य आचार्य विमल सागर जी की समाधि के पश्चात्

आचार्य-पद पर, ससंघ रहकर

28	1995	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड
29.	1996	सिद्ध क्षेत्र चम्पापुर	झारखंड
30.	1997	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड
31.	1998	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड .
32.	1999	सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी	झारखंड .
33.	2000	गिरीडीह	.
34.	2001	झुमरी तिलैया,कोडरमा	झारखंड .
35.	2002	बारावंकी	उत्तरप्रदेश

36.	2003	लोहारिया	राजस्थान
37.	2004	कुचामन सिटी	राजस्थान
38.	2005	बांसवाड़ा	राजस्थान
39.	2006	अणिंदा पार्श्वनाथ	राजस्थान

इस तरह पूज्य भरत सागर जी के कुल 39 चातुर्मासों में से 23 सिद्ध क्षेत्रों पर, 5 अतिशय क्षेत्रों पर एवं 11 विभिन्न नगरों में सम्पन्न हुए। सभी स्थानों से चार माहों तक धर्म की यथार्थ प्रभावना हुई थी अतः उन वर्षायोग स्थलों को प्रभावना केन्द्र भी कहते हुए खुशी होती है ।

जब भी प्रभावना की चर्चा चलेगी तो समाज को पृथक धर्म से कुछ खोजना नहीं पड़ेगा; क्योंकि आचार्य भरत सागर जी स्वतः धर्म की प्रभावना के निमित्त से विभिन्न वाक्य या वाक्यांश कहा करते थे। एक बार उन्होंने चातुर्मासिक भाव-भूमि पर महत्त्वपूर्ण शब्द कहे थे- 'गुरु-भक्ति, उपासना वैय्यावृत्ति आदि के द्वारा श्रावक अपना सहज कर्तव्य पूर्ण करता है; किन्तु इसी आधार पर वह अधिक से अधिक धर्म को लूटता है। लूटना ही चहिए वर्षायोग के समय श्रावक का व्यापारिक-कार्य मंदा चलता है मगर धर्म के कार्य तेज गति पकड़ लेते है श्रावकों को यही बात समझना चाहिए कि संत संगति का भरपूर लाभ उठाएँ और धर्म का संचय करें।'

P2P/F/Aachrya Vishad Sagar G / Aagam Ke Lal Chhotelal/Aagam Ke Lal Chhotelalpmd

प. पू. समाधिस्थ आचार्यवर 108 भरत सागर जी महाराज

परिचय के गवाक्ष से

पूर्व नाम	: पंडित श्री छोटे लाल जी जैन
जन्म स्थान	: लोहारिया, राजस्थान
जन्म तिथि	: चैत्र शुक्ल नवमी वि. सं. 2006
	रामनवमी तदनुसार 7 अप्रैल, 1949 दिन गुरुवार
पिता का नाम	: सुश्रावक श्रीयुत किशन लाल जी जैन
	(दशानरसिंपुरा)
माता का नाम	: गृहणीरत्न, श्री मति गुलाब बाई जैन
लौकिक शिक्षा	: दसवीं कक्षा तक
ब्र.व्रत	: आचार्यरत्न परम पूज्य श्री विमल सागर जी से
स्थान	: लोहारिया, तिथि सन् 1968
क्षुल्लक दीक्षा	: प. पू. आचार्यवर श्री विमल सागर जी महाराज से
स्थान	: अजमेर (राज.), तिथि: 25 मई 1968
नाम करण	: पू. क्षु.105 श्री शांतिसागर जी महाराज
मुनिदीक्षा	: राष्ट्रसंत आ. गुरुदेव विमल सागर जी महाराज से
स्थान	: तीर्थक्षेत्र सम्मेद शिखर जी में
तिथि	: 6 नवम्वर 1972
नाम करण	: मुनि श्री 108 भरत सागर जी महाराज
उपाध्याय पद	: वात्सल्य रत्नाकर
	आचार्य विमल सागर जी महाराज से

स्थान : सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी

तिथि : 7 सितम्बर, सन् 1979

नामकरण : प. पू. उपाध्याय भरत सागर जी महाराज

आचार्य पद : चतुर्विध-संघ के अनुरोध पर आचार्य संभव सागर जी महाराज के कर कमल से

स्थान : शाश्वत् तीर्थराज सम्मेदशिखर जी में

तिथि : 10 फरवरी सन् 1995

(माघ कृष्ण दशमी,वि. सं. 2062)

विशेषः अपने गुरु के श्रेष्ठतम शिष्य महान गुरुभक्त अनेक उपाधियों अलंकरणों के धारक, निमित्तज्ञानी, तीर्थभक्त , उपसर्ग विजेता , महान प्रभावनाकारी संत, तीर्थोद्धारक, सहजता और सरलता की मूर्ति, साहित्य-रक्षक, साहित्यकार-प्रणेता, धार्मिक ग्रंथों के प्रर्वतक।

सन्दर्भ ग्रंथ

संदर्भ-ग्रंथः	:	लेखक/संपादक
1. करुणामूर्ति संत पू. विमलसागर जी		लेखक- श्री श्री सुरेश जैन सरल, जबलपुर
2. मर्यादा शिष्योत्तम पू. भरत सागरजी	:	लेखिका- पूज्य गणिनी आर्यिका स्याद्वादमति माता जी
3. पत्रिका, प्राकृत विद्या	:	डॉ. वीर सागर जैन, नई दिल्ली जुलाई 2011 सं. प्रो.सि. 2011, अंक 3
4. स्मारिका 'प्रवाह'	:	सं. श्री रुपेन्द्र छाबडा 'अशोक', जयपुर
5. निस्पृही संत जबलपुर पू. विराग सागर जी		लेखक- सुरेश जैन सरल
6. शोध-पत्र आ. भरत सागर का जीवन, व्यक्तित्व एवं चिंतन	:	ले. बा.ब्र. करुणा दीदी (शोधर्थी)